चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

एंडरसन से ज़्यादा अपनों ने दिए हैं ज़ख्म

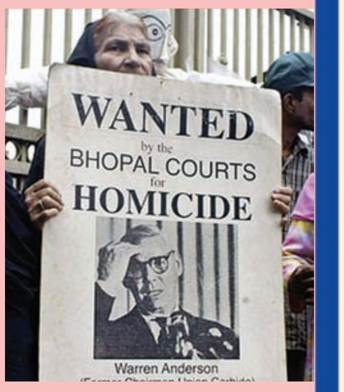

पेज 3

ग़रीबों के रहनुमा थे वीपी सिंह

पेज 6

बिहार की सियासत पर माया की छाया

पेज 7

साईं की महिमा

पेज 12

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 28 जून-04 जुलाई 2010

भोपाल जैसे हादसे और होंगे

भोपाल त्रासदी से हम कोई सीख नहीं ले रहे. पच्चीस साल बीत गए. इस दरम्यान सियासत ने कई करवटें बदलीं, मीडिया समेत लोकतंत्र के चारों आयाम नए-नए चेहरों में ढले, लेकिन लब्बोलुआब यह है कि ये चारों खंभे कितने जर्जर हुए, इसकी चरमराहट देश की जनता सुन रही है और भोग रही है. भोपाल जैसे हादसों का पलीता साबित होने वाले हैं देश में लगने वाले परमाणु ऊर्जा संस्थान. परमाणु करार का राक्षसी चेहरा अब न्यूक्लियर लायबिलिटी बिल की शक्ल में दिख रहा है, जिसके सहारे अमेरिका के सड़ियल परमाणु उपकरण भारतवर्ष के परमाणु उद्योग का आधार बनेंगे. भोपाल से अधिक घातक दुर्घटनाएं अभी और होंगी, पर नागरिकों को बचाने वाला या लोगों की हिफ़ाज़त में सत्ता की नाकामियों की ईमानदार समीक्षा कर देश को सतर्क करने वाला कोई न होगा...

प्रभात रंजन दीन

पूरा देश, पूरा मीडिया और पूरी राजनीति भोपाल मसले पर ब्लेम गेम में मशगूल है. हादसे और त्रासदी का मसला किसी के लिए मुद्दा नहीं. मुद्दा केवल एंडरसन और अर्जुन सिंह हैं. हादसे के 25 साल बाद आज भी भोपाल की हालत खराब है. उस समय ज़हरीली गैस से पीड़ित हुए लोग आज तक मर रहे हैं. आज तक बीमार हो रहे हैं. आज भी लोगों की हालत खराब हो रही है. पिछले 25 साल में कितनी सरकारें बदलीं. मीडिया ने कितना पानी बदला, कितने विकास का दौर देखा, लेकिन आज तक अपनी प्राथमिकता नहीं तय कर पाया. न सियासतदानों ने और न मीडिया ने. ढाई दशक की अवधि में कई सरकारें आईं और गईं, उनमें कई बार वामपंथियों का भी वर्चस्व रहा, लेकिन बड़ी-बड़ी बोलियां बोलने वाले वामपंथी नेता उस समय एंडरसन मसले पर कुछ नहीं बोल पाए और न हादसे की लंबे समय तक खिंच रही त्रासदी की तरफ सत्ता-केंद्र का ध्यान ही खींच पाए. एक व्यक्ति पर पूरा मसला केंद्रित कर दिया गया है. भोपाल जैसे हादसे रोकने के ऊपर किसी ने ध्यान नहीं दिया. न सत्ता अलमबरदारों ने और न लोकतंत्र का पहरुआ बनने का दावा करने वाले मीडिया ने. 25 साल में किसी ने भी ज़मीन से जुड़ा मसला नहीं उठाया. एक भोपाल तो हो गया, लेकिन परमाणु ऊर्जा बनाने के नाम पर देश भर में जो 45 से अधिक स्थानों पर टाइम बम बिठाए जा रहे हैं, उनकी सुरक्षा की क्या व्यवस्था की जा रही है या किसी हादसे या साज़िश से उनमें विस्फोट होने पर लोगों को बचाने के क्या उपाय किए जा रहे हैं? परमाणु समझौते के नाम पर अमेरिका के सभी पुराने रिएक्टर भारत में लाकर लगाए जा रहे हैं. न्यूक्लियर लायबिलिटी बिल लाने की आपाधापी करने वाली मनमोहन सरकार को अमेरिका के पेंसिलवानिया में थ्री माइल आइलैंड हादसा (28 मार्च 1979) और रूस का चेरनोबिल हादसा (26 अप्रैल 1986) क्या याद नहीं? भारत में नए सिरे से स्थापित हो रहे परमाणु ऊर्जा संस्थानों पर मानवीय भूल, नक्सलवाद, जातीय या धार्मिक विद्वेष या आतंकवाद का विस्फोटक असर दिखा तो उससे उबरने के क्या उपाय किए जा रहे हैं, इस पर सोचने की किसी को भी फुर्सत नहीं है. भारत के परमाणु ऊर्जा संस्थानों में अमेरिका के पुराने और जंग खाए उपकरण लगाए जा रहे हैं, ऐसे में ख़तरे का अंदेशा रहेगा और हादसा हुआ तो उसमें करोड़ों लोग मरेंगे. भोपाल हादसे के 25 साल बाद तक हम इससे सीख नहीं ले पाए और विस्फोट के दहाने पर देश को फिर से खड़ा करने जा रहे हैं. परमाणु ऊर्जा संस्थानों में हादसा होने के बाद मचने वाली अफरातफरी, बदइंतजामी, भगदड़ और अव्यवस्था नरसंहार का कैसा रूप लेगी, इसकी कल्पना की जा सकती है. देश में असैनिक परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठानों की स्थापना करने का निर्णय लेकर भारत सरकार ने पड़ोस के दुश्मन देशों को आसान टार्गेट दे दिया है, लेकिन उससे बचाव के क्या उपाय होंगे इस पर केंद्र सरकार कोई ध्यान नहीं दे रही. राजनीति हो या मीडिया, जनता के हित के बारे में कोई नहीं सोच रहा. असली मुद्दे से बाहर की परिधि में पूरी बहस घूम रही, फैशन की तरह जिसे कुछ दिनों में समाप्त हो जाना है.

देश में तबाही का तानाबाना बुना जा रहा है. एक तरफ देश के सियासतदानों को देश की सुरक्षा से मतलब नहीं तो दूसरी तरफ पाकिस्तान के परमाणु व रसायनिक संस्थानों पर अल कायदा जैसे आतंकवादी संगठनों के मज़बूत होते शिकंजे के बारे में ख़ुफ़िया एजेंसियां बार-बार सचेत कर रही हैं, जो ख़ास तौर पर भारत के परमाणु संस्थानों के लिए ख़तरे की मुनादी हैं. इन्हीं हालातों में साल 2009 के आख़िरी दो महीने में देश के तीन परमाणु संस्थानों में तीन ऐसे हादसे हुए जिसने हमें चौंकाया भी और देश के परमाणु सुरक्षा तंत्र की असलियत भी सामने दिखाई. 24 नवम्बर 2009 को कर्नाटक के कैगा परमाणु संयंत्र में ख़तरनाक ट्रिटियम का रिसाव हुआ. 7 दिसम्बर 2009 को महाराष्ट्र के तारापुर परमाणु प्रतिष्ठान से अति संवेदनशील उपकरणों की हो रही तस्करी पकड़ी गई. और 29 दिसम्बर 2009 को महाराष्ट्र के ही मशहूर भाभा परमाणु शोध संस्थान में रहस्यमय आग लगी, जिसमें देश के दो युवा परमाणु वैज्ञानिक उमंग सिंह और पार्थ बाघ झुलस कर खाक हो गए. ख़ुफ़िया एजेंसियों का भी कहना है कि कैगा परमाणु संयंत्र से ख़तरनाक ट्रिटियम (हाईड्रोजन-3) के लीक होने की वारदात एक बड़े हादसे को अंजाम देने के इरादे से की गई थी. भारत के एटॉमिक इनर्जी कमीशन के अध्यक्ष अनिल काकोदकर ने भी यह बात स्वीकार की थी. कैगा परमाणु केंद्र के निदेशक जेपी गुप्ता ने इस घटना को स्पष्ट तौर पर साज़िश और सैबोटाज करार दिया था. न्यूक्लियर पावर कॉरपोरेशन ने अलग से जांच पड़ताल शुरू की और केंद्रीय परमाणु ऊर्जा मंत्रालय को उच्चस्तरीय छानबीन की घोषणा करनी पड़ी, लेकिन इसके बाद चारों तरफ चुप्पी सध गई. कैगा परमाणु संयंत्र में रिसाव की साज़िश के पीछे कौन लोग थे और अगर बड़ा हादसा सामने आता तो केंद्र सरकार के पास उसके बचाव के क्या उपाय हैं? भोपाल हादसे की घटना के परिप्रेक्ष्य में इस बारे में आसानी से समझा जा सकता है. कैगा-षडयंत्र देश भर को एक गंभीर चेतावनी देने वाला प्रकरण है, लेकिन उस पर न सरकार का ध्यान है और न ही मीडिया का. कैगा घटना के बाद 7 दिसम्बर 2009 को महाराष्ट्र के तारापुर परमाणु विद्युत केंद्र से एक साथ कई लोगों को संवेदनशील परमाणु उपकरण की तस्करी करते हुए पकड़ा गया. इंटेलिजेंस ब्यूरो के अधिकारियों का कहना है कि यह तस्करी बड़ी दुर्घटना का कारण बन सकती थी.

29 दिसम्बर 2009 को महाराष्ट्र के भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंटर में लगी रहस्यमय आग में दो वैज्ञानिकों के मारे जाने की घटना हल्के में नहीं ली जानी चाहिए. लेकिन इन सारी घटनाओं पर संदेहास्पद चुप्पी का पर्दा डाल दिया गया है. यह तब हो रहा है जब भारत की ख़ुफ़िया एजेंसियां देश के न्यूक्लियर प्रतिष्ठानों पर आतंकी हमलों के बारे में अंदेशा जता चुकी हों और केंद्र सरकार को आगाह कर चुकी हों. अगर ऐसा हुआ तो देश का आकार बदलते देर नहीं लगेगी. विशेषज्ञों का आकलन है कि परमाणु हादसा होने पर लाखों नहीं, बल्कि करोड़ों लोग मारे जाएंगे. लाखों लोग भयंकर रूप से ज़ख्मी होंगे. रेडिएशन (विकिरण) से होने वाले बुखार, भूख, विस्फोट और आग से मरने वालों की तादाद अलग होगी. सैन्य चिकित्सा विशेषज्ञ कर्नल डॉ. एमएल पन्हानी व कर्नल डॉ. तेजिंदर एस भट्टी का ऐसे हादसे में भीषण ताप से होने वाले ज़ख्म से निबटने की तैयारियों पर अधिक ज़ोर है. उनका मानना है कि ऐसे एक हज़ार घायलों के पांच दिनों तक प्राथमिक इलाज के लिए 2850 किलोग्राम मरहम पट्टी और 21 हज़ार किलोग्राम इन्फ्यूजन फ्लूइड की ज़रूरत पड़ेगी. 10 घायलों को पहले आठ घंटे के दौरान ही 60 लीटर फ्लूइड की ज़रूरत पड़ेगी. इस तरह 10 घायलों के लिए केवल आठ घंटे के लिए ही तीन सौ लीटर ऑक्सीजन (150 सिलिंडर) की ज़रूरत पड़ेगी. उल्लेखनीय है कि अमेरिका का पेंसिलवानिया स्थित थ्री माइल आइलैंड परमाणु प्रतिष्ठान नागरिक इलाके से दूर था. लेकिन भारत में स्थापित कोई भी परमाणु प्रतिष्ठान निर्जन इलाके में न होकर आबादी वाले इलाकों से जुड़ा है.

भोपाल हादसे के बाद के इस ढाई दशक में सत्ता और सियासत की प्राथमिकताएं साफ़-साफ़ उजागर हुईं. इसी दरम्यान भारत ने अमेरिका के साथ परमाणु करार भी किया. अब वह भी विस्फोट करने के

(शेष पृष्ठ 2 पर)

हम इसी देश के वासी हैं...

विदेश की जिन कंपनियों अमेरिकी जेनेरिक इलेक्ट्रिक कंपनी (जीईएन), नॉर्थरॉप और जापान की वेस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कंपनी को भारतवर्ष में परमाणु ऊर्जा संयंत्र स्थापित करने का ठेका दिया जा रहा है, उन कंपनियों ने पिछले 20 साल से कोई काम नहीं किया है. ये कंपनियां परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के बजाय दूसरे ही धंधे करती रहीं और उनके परमाणु संयंत्रों के उपकरण चेरनोबिल हादसे के बाद (1986) से गोदामों में ही डंप पड़े हैं. वही पुराने उपकरण अब भारतवर्ष में लगेंगे. आप सोचें इसका क्या परिणाम होगा? अमेरिकी कंपनियां 20 वर्षों से गोदामों में पड़े इन्हीं जंग खाए उपकरणों को भारत में खपाने को तैयार बैठी हैं. ये सुरक्षा मानकों में कहां हैं, ये कैसे काम करेंगी, पैसा देकर हमें रद्दी माल लेने की बाध्यता क्या है, सुरक्षा की गारंटी क्या है और ऐसे उपकरणों के कारण हादसा होने पर उसकी जिम्मेदारी सप्लायर कंपनियां क्यों नहीं उठाएंगी? बिल प्रस्तावित करने वाली भारत की सरकार को इन सवालों का जवाब देना ही चाहिए.

गृह मंत्रालय ने आयोग से यह आग्रह किया था कि वह इस कोटे से हर साल 70-80 अधिकारियों की नियुक्ति करे.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए एक नया पैनल

नौकरशाही में व्याप्त भ्रष्टाचार के खिलाफ कमर कस चुकी सरकार भ्रष्टाचार के मामलों में होने वाली अनावश्यक देरी से चिंतित है. ऐसे मामलों को तेजी से निपटाने के लिए सरकार ने एक

नए पैनल के गठन की योजना बनाई है. संघ लोक सेवा आयोग के पूर्व चेयरमैन पी सी होता इसके अध्यक्ष हैं जबकि पूर्व मुख्य सतर्कता आयुक्त पी शंकर एवं कार्मिक मंत्रालय के पूर्व सचिव अरविंद वर्मा को इसका सदस्य बनाया गया है. इस पैनल को सभी लॉजिस्टिकल सुविधायें कार्मिक मंत्रालय द्वारा ही मुहैया कराई जाएंगी.

नौकरशाहों की संलिप्तता वाले भ्रष्टाचार के सभी मामलों को संघ लोक सेवा आयोग के पास भेजा जाना अनिवार्य है. इस नियम का पालन तो किया जाता है, लेकिन मामलों को अनावश्यक लटकाकर रखा जाता है और उसे तब तक आयोग के पास नहीं भेजा जाता, जब तक कि आरोपी अधिकारी सेवानिवृत्ति के कगार पर न पहुंच जाएं. इसका नतीजा यह होता है कि आयोग को मामले की जांच-पड़ताल और अनुशासनात्मक कार्रवाई की अनुशंसा के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल पाता. इस नए पैनल के गठन के बाद यह उम्मीद की जानी चाहिए कि मामलों के निपटारे में तेजी आएगी और भ्रष्ट अधिकारियों को उनके सेवाकाल में ही दंडित किया जा सकेगा.

कम नहीं हो रही डीजीएच की परेशानियां

अंबानी बंधुओं के बीच लंबे समय से चली आ रही लड़ाई रुकने के बाद क्या डायरेक्टरेट जेनरल ऑफ हाइड्रोकार्बन्स (डीजीएच) की परेशानियां कम हो जाएंगी. इसके आसार तो नजर नहीं आ रहे. अपने पिछले मुखिया वीके सिब्बल के कार्यकाल के दौरान अनावश्यक ही डीजीएच चर्चाओं का केंद्र बना हुआ था. हालांकि, सिब्बल की अब यहां से विदाई हो चुकी है, लेकिन सेंट्रल विजिलेंस कमीशन और सीबीआई द्वारा उनकी कारगुजारियों की जांच-पड़ताल अभी भी जारी है और डीजीएच न चाहते हुए भी चर्चा में बने रहने को मजबूर है. केंद्रीय जांच एजेंसियों की कार्रवाईयों का परिणाम यह है कि यहां पदस्थापित नौकरशाह असहज महसूस कर रहे हैं. जांच अधिकारियों के जवाब तलब से बचने के लिए कई अधिकारी अपने मूल विभागों में लौटने या सार्वजनिक उपक्रमों में अपनी पदस्थापना को लेकर जीतोड़ कोशिश कर रहे हैं. सूत्रों से मिली खबर के मुताबिक सिब्बल की जगह आए डीजीएच के नए मुखिया एसके श्रीवास्तव ने भी अपने हाथ खड़े कर दिए हैं. उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि अपने कनिष्ठ अधिकारियों को डीजीएच में बने रहने के लिए वह उन पर दबाव नहीं डाल सकते. खबर यह भी है कि श्रीवास्तव ने इस बाबत पेट्रोलियम सचिव एस सुंदरेशन से भी बात की. इसके बाद नौकरशाहों की परेशानियों को समझने और उनका विश्वास बनाए रखने के लिए एक ओपन हाउस सेशन का आयोजन भी किया गया, लेकिन नौकरशाहों करुख में किसी बदलाव के संकेत नहीं मिल रहे.

आमने-सामने गृह मंत्रालय और यूपीएससी

आईपीएस अधिकारियों के रिक्त पड़े 657 पदों को भरने की सरकार की कवायद संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) के रवैये के चलते खटाई में पड़ती दिख रही है. गृह मंत्री पी चिदंबरम ने यूपीएससी को सलाह दी थी कि वह केंद्र और राज्य सरकारों के अधीन काम कर रहे युवा पुलिस अधिकारियों को आईपीएस अधिकारियों के रूप में नियुक्त करे, लेकिन आयोग द्वारा चिदंबरम की सलाह को ठुकराये जाने से नक्सलवाद और आतंकवाद से लड़ने की उनकी योजना को भी झटका लगा है.

गृह मंत्रालय ने आयोग से यह आग्रह किया था कि वह इस कोटे से हर साल 70-80 अधिकारियों की नियुक्ति करे. ये नियुक्तियां सिविल सेवा परीक्षा और राज्यों के प्रमोशन कोटे से हर साल होने वाली करीब 150 अधिकारियों की नियुक्ति के अतिरिक्त थीं. चिदंबरम की सलाह पूर्व आईपीएस अधिकारी कमल कुमार की अध्यक्षता में गठित पैनल की अनुशंसाओं पर आधारित थी. आयोग के इंकार के बाद गृह मंत्रालय अब प्रधानमंत्री कार्यालय को पटाने की कोशिश में लगा है, ताकि इस योजना को कार्यान्वित किया जा सके. उन्हें यह भरोसा है कि प्रधानमंत्री इसके लिए राजी हो जाएं तो आयोग की इंकार का कोई मतलब नहीं रह जाएगा. अब यह देखना रोचक होगा कि गृह मंत्रालय की ये उम्मीदें परवान चढ़ पाती हैं या नहीं.

dilipcherian@chauthiduniya.com

साउथ ब्लॉक

जे के शर्मा पदोन्नत

1975 बैच के आईएएस अधिकारी जे के शर्मा को पदोन्नति देते हुए टैरिफ कमीशन का चेयरमैन बना दिया गया है. शर्मा मध्य प्रदेश कैडर के अधिकारी हैं. शर्मा पहले व्यापार और उद्योग मंत्रालय के अधीन टैरिफ कमीशन के सदस्य सचिव थे.

यूआईएआई में राव और कुमार

यूनिक आईडेंटिफिकेशन ऑथोरिटी ऑफ इंडिया (यूआईएआई) ने बंगलोर में सहायक महानिदेशक पद के लिए दो अधिकारियों के नामों पर चर्चा की है. इनके नाम है, वेंकट राव काकिटाला और अनूप कुमार.

सर्वेश राय कृषि और सहकारिता विभाग में

1991 बैच के आईएफएस अधिकारी सर्वेश राय जल्द ही भारत सरकार के कृषि और सहकारिता विभाग में नजर आ सकते है. उन्हें इस विभाग का निदेशक बनाया जा सकता है.

भल्ला बने संयुक्त सचिव

ए के भल्ला को कोयला मंत्रालय में संयुक्त सचिव बना दिया गया है. भल्ला 1984 बैच के अधिकारी हैं. उन्हें 1982 बैच के आईएएस अधिकारी के एस क्रोफा की जगह नियुक्त किया गया है. भल्ला इससे पहले असम भवन के स्थानीय आयुक्त के तौर पर काम कर रहे थे.

बदलेगा सरवाल का मंत्रालय

1988 बैच के आईएएस अधिकारी राकेश सरवाल का मंत्रालय बदल सकता है. सरवाल अभी सार्वजनिक उपक्रम मंत्रालय में संयुक्त सचिव है. उन्हें इसी पद पर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय में भेजा जा सकता है.

भोपाल जैसे हादसे और होंगे

पृष्ठ 1 का शेष

लिए तैयार हो रहा है. इसके फिर भुक्तभोगी होंगे भारत के लोग, जैसे भोपाल में हुए थे. अमेरिका से परमाणु करार के बाद अब परमाणु ऊर्जा संयंत्रों की सप्लाई के लिए अमेरिकी एवं अन्य विदेशी कंपनियां मुंह बाए खड़ी हैं. अब अमेरिका की चिंता उन सप्लायर कंपनियों के हितों की रक्षा करने की है. सिविल लायबिलिटी फॉर न्यूक्लियर हैजार्ड बिल के प्रावधानों के मुताबिक परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में होने वाले किसी भी हादसे के लिए वे कंपनियां जिम्मेदार नहीं ठहराई जा सकेंगी, जिन कंपनियों ने उपकरणों की आपूर्ति की थी. आपूर्ति किए गए खराब उपकरणों या तकनीक के कारण ही हादसा क्यों न हुआ हो, आपूर्तिकर्ता कंपनियों पर हादसे का कोई दायित्व तय नहीं होगा. परमाणु ऊर्जा संस्थान में कोई हादसा होने पर विदेश की सप्लायर कंपनियों को कानूनी तौर पर जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकेगा और न ही उनपर हादसे की गंभीरता के मुताबिक कोई आर्थिक दंड ही निर्धारित किया जा सकेगा. मरेगी भारत की जनता और दायित्व झेलेगा भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग या अन्य सम्बद्ध भारतीय ऑपरेटर. प्रस्तावित सिविल लायबिलिटी फॉर न्यूक्लियर हैजार्ड बिल में यह प्रावधान है कि विदेशी सप्लायर कंपनियों पर मात्र 450 मिलियन डॉलर का दायित्व तय रहेगा, हादसा चाहे कितना ही भीषण क्यों न हो. हादसे और उससे होने वाले नुकसान के लिए सप्लायर के बजाय भारतीय ऑपरेटर दोषी ठहराए जाएंगे.

विदेशी कंपनियों के माथे पर यह न्यूनतम दायित्व खुद भारत सरकार तय कर रही है, जबकि भारत ही वह देश है जिसने वर्ष 1984 में दुनिया का सबसे वीभत्स औद्योगिक हादसा झेला है. भोपाल की यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री में गैस लीक के कारण श्रमिकों, महिलाओं, बच्चों समेत हजारों लोगों की दुखद मौत हो गई थी. लाखों लोग विदेशी कंपनी द्वारा थोपे गए अंधत्व के स्थाई शिकार हुए. उस मामले में भी महज 470 मिलियन डॉलर के हरजाने की तुच्छ रकम स्वीकार करने के लिए भारत सरकार की दुनिया भर में जो निंदा हो रही है, उसका भी असर केंद्र पर बिल्कुल ही नहीं हो रहा और फिर से भारतीयों के सुरक्षा हितों को नजरअंदाज करने का कृत्य हो रहा है. भारत सरकार ने 10 बिलियन अमेरिकी डॉलर के खर्च पर अमेरिकी कंपनी जेनेरिक इलेक्ट्रिक कंपनी (जीईएन) और जापान की तोशिबा कॉरपोरेशन के एक उपक्रम वेस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कंपनी को भारत में दो परमाणु ऊर्जा संयंत्र स्थापित करने का ठेका देने का फैसला भी कर लिया है.

अमेरिका के पेंसिलवानिया स्थित थ्री माइल आइलैंड न्यूक्लियर प्लांट में 1979 में भीषण हादसा हुआ था. दुर्घटना स्थल को दुरुस्त करने और साफ-सफाई में 14 साल का लंबा समय लग गया और उस पर अमेरिका को एक बिलियन डॉलर से अधिक खर्च करना पड़ा. अमेरिका की सुचारु और त्वरित व्यवस्थागत प्रणाली के बावजूद 14 वर्ष का लंबा समय. भारत जैसे थके हुए देश में क्या स्थिति होगी, आप इसकी कल्पना कर सकते हैं. अमेरिका की चाक-चौबंद व्यवस्था के बावजूद परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में हादसे का आकलन आर्थिक दायित्व के नजरिए से साढ़े दस बिलियन डॉलर होता है, जो प्रत्येक पांच वर्ष में मुद्रा स्फीति की दर से बढ़ता रहता है. लेकिन भारत सरकार ऐसा कोई प्रावधान नहीं कर रही है और न प्रस्तावित सिविल लायबिलिटी फॉर न्यूक्लियर डैमेजेज़ बिल में अमेरिका के थ्री माइल आइलैंड हादसे पर 1979 में अमेरिकी राष्ट्रपति आयोग की रिपोर्ट का संदर्भ ही ले रही है, जिसमें अमेरिका के राष्ट्रपति जिमी कार्टर ने परमाणु प्रतिष्ठानों के निर्माण पर रोक लगा दिया था. इस आदेश से अमेरिका के डेढ़ सौ से अधिक परमाणु संस्थानों का काम रुक गया था. भोपाल हादसे के प्रसंग में अब भारत सरकार को रेडियो विकिरण का शिकार होने वाले नागरिकों की मौजूदा स्थिति, मौजूदा सुविधाओं और दायित्व निर्धारण की स्थितियों को लेकर खुद ही श्वेत-पत्र के साथ देश के समक्ष प्रस्तुत होना चाहिए. परमाणु सुविधाओं की परिभाषा गढ़ते समय केंद्र सरकार को यूरेनियम, थोरियम जैसे रेडियोधर्मी खनिजों के खदानों की भीषण अराजकता भरी अव्यवस्था का कोई खयाल नहीं. झारखंड के जादूगोड़ा यूरेनियम खदान के विस्तृत इलाके में खुले खनन और अराजकता के कारण जिस तरह लोग भारी तादाद में भीषण विकृत रोगों का शिकार हो रहे हैं और उनके हाथ-पैर व अंग भयावह तरीके से खराब हो रहे हैं, इस पर किसी का ध्यान नहीं. भारतीय नागरिक गिनी-पिग की तरह त्रासद मौत का शिकार होने के लिए बने हैं. संसद में पारित होने के लिए प्रस्तावित बिल भोपाल हादसे से सीख लेकर सतर्क हुई अमेरिकी कंपनियों की शातिर पहल का नमूना है. लेकिन भारत सरकार भोपाल जैसे हादसों से कोई सीख नहीं लेती. उल्लेखनीय है कि यूनियन कारबाइड और डाउ केमिकल्स कंपनी की तरफ से भी यह मांग आती रही है कि हादसों के लिए सप्लायर कंपनियों के बजाय ऑपरेटर एजेंसी पर आर्थिक दायित्व तय किए जाएं. ...और आखिरकार भारत सरकार ने बिल में ऐसा ही प्रावधान कर डाला. यहां तक कि नागरिक (सिविल) परमाणु ऊर्जा के विकास की स्थितियों का अध्ययन करने वाले फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज़ (फिक्की) के 25 सदस्यीय दल ने भी अपनी 57 पेज की रिपोर्ट में केंद्र सरकार को यह सुझाव दिया है कि परमाणु विकिरण की दुर्घटनाओं में भुक्तभोगी नागरिकों को त्वरित सुविधा और सहायता के लिए अलग से कानून बने और ऐसे हादसों से प्रभावित लोगों का मुआवजा तय करने के लिए पंचाट (ट्रिब्यूनल) गठित किए जाने का सख्त कानूनी प्रावधान प्रस्तावित बिल में किया जाए. कानूनी प्रावधान में विदेशी कंपनियों और देसी ऑपरेटर का फर्क न हो. संयंत्रों में खराब उपकरण और बेजा तकनीक की आपूर्ति करने के बावजूद बच निकलने का जुगाड़ तलाश रही विदेशी कंपनियों को इसका मौका न मिले, फिक्की ने इसका भी खयाल रखा और केंद्र सरकार को इसके लिए आगाह भी किया. लेकिन केंद्र सरकार ने फिक्की की सलाह नहीं मानी. रिपोर्ट तैयार करने वाले दल के मुखिया खुद न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन के सीएमडी एसके जैन हैं.

भोपाल हादसे में यूनियन कारबाइड पर 2152 करोड़ रुपये (470 मिलियन डॉलर) का आर्थिक जुर्माना तय हुआ. इसे सुप्रीम कोर्ट ने भी स्वीकार किया और केंद्र सरकार ने भी. लेकिन भोपाल गवाह है इस बात का कि जुर्माने की राशि और नुकसान की भयावहता में कोई संतुलन ही नहीं. भोपाल हादसे के शिकार लोगों के आर्थिक मुआवजे की जद्दोजहद आज तक जारी है. निर्धारित राशि से प्रभावित लोगों की भारी संख्या के कारण कौड़ियां भी नहीं मिल पाईं. भोपाल हादसे को सामने रखते हुए जब आप प्रस्तावित सिविल लायबिलिटी फॉर न्यूक्लियर डैमेजेज़ बिल को देखें तो आपको इसके पीछे के राक्षसी चेहरे साफ दिखेंगे. अब यूनियन कारबाइड जैसी कंपनियां खराब माल और बेजा उपकरणों की सप्लाई करके भी मौज करेंगी, मुनाफा कमाएंगी और हादसा होने पर न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन ऑफ इंडिया को कानूनी तौर पर जिम्मेदार ठहराया जाएगा. क्या दृश्य आने वाला है, इसकी आप कल्पना करें. कैसे और किस मानसिकता में न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन को देश में काम करना है इसके बारे में आप सोचें. भोपाल त्रासदी हमें इस बात के लिए सतर्क करती है कि परमाणु ऑपरेटरों और सप्लायरों पर भविष्य के बड़े हादसे की आशंकाओं के मद्देनजर व्यापक दायित्व तय हों और उसे गंभीर अपराध व सख्त सजा के कानूनी घेरे में लाया जाए. केंद्र सरकार ने अमेरिका और जापान की जिन कंपनियों को 10 हजार मेगावाट के दो परमाणु संयंत्र स्थापित करने का ठेका दिया है, उसके लिए इलेक्ट्रिसिटी एक्ट के निर्धारित प्रावधानों के मुताबिक कोई टेंडर प्रकाशित नहीं किया गया. यह आपस में ही मिल बैठ कर तय कर लिया गया. यह संदेहास्पद स्थितियों की तरफ साफ इशारा करते हैं. आप समझ सकते हैं इसके पीछे क्या क्या खेल हुए होंगे. जानकारों का यह भी कहना है कि परमाणु कारोबार में लगी अमेरिकी कंपनियों ने अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश को चुनावी फंड में बड़ी धनराशि केवल इसलिए दी थी कि वह भारत के साथ परमाणु करार कर उन कंपनियों के लिए भारत में धंधे का रास्ता खोलें.

बहरहाल, परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान में होने वाली जान-माल की क्षति और पर्यावरण को होने वाले नुकसान, दोनों अलग-अलग हैं. इन्हें एक साथ रख कर उसकी आर्थिक क्षति का आकलन नहीं किया जा सकता. दुर्घटना से सम्बद्ध किसी भी देश के कानून का आधारभूत सिद्धांत यही है कि जान और संपत्ति का नुकसान होने पर हानिकर्ता (जिसकी वजह से दुर्घटना हुई) पूरा का पूरा मुआवजा देने के लिए बाध्य होगा. पर्यावरण को प्रदूषित करने और उसे नुकसान पहुंचाने का दोष अंतरराष्ट्रीय सिद्धांतों के आधार पर तय होता है. इस पर सुप्रीम कोर्ट का भी स्पष्ट फैसला है. ऐसे में सिविल लायबिलिटी फॉर न्यूक्लियर डैमेजेज़ बिल लाकर हानिकर्ता को कानूनी संरक्षण देने का सरकारी तिकड़म न केवल सुप्रीम कोर्ट की अवमानना है, बल्कि यह संविधान का भी असम्मान है. देश की मौजूदा कानूनी स्थिति के मुताबिक किसी भी औद्योगिक हादसे की जिम्मेदारी प्लांट के मालिक की होती है और पूरा हर्जाना देना उसका कानूनी दायित्व. इसके अतिरिक्त उसे ही पर्यावरण के नुकसान का हर्जाना भी अदा करना पड़ता है. ऐसे में आने वाले दिनों में देश के लोगों के भारी कानूनी पचड़े में फंसने का अभी से अंदाजा लगाया जा सकता है.

prabhatranjandeen@chauthiduniya.com

कार्यरत परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान

1. कैगा (3 यूनिट) - कर्नाटक
2. काकरापर (2 यूनिट) - गुजरात
3. कल्पक्कम (2 यूनिट) - तमिलनाडु
4. नरोरा (2 यूनिट) - उत्तर प्रदेश
5. रावतभाटा (6 यूनिट) - राजस्थान
6. तारापुर (4 यूनिट) - महाराष्ट्र

कुल-19

निर्माणाधीन प्रतिष्ठान

1. कैगा (1 यूनिट) - कर्नाटक
2. कुदनकुलम (2 यूनिट) - तमिलनाडु
3. कल्पक्कम (1 यूनिट) - तमिलनाडु

कुल-4

निर्माण के लिए मंजूर प्रोजेक्ट

1. काकरापर (2 यूनिट) - गुजरात
2. रावतभाटा (2 यूनिट) - राजस्थान
3. कुदनकुलम (2 यूनिट) - तमिलनाडु
4. जैतपूर (4 यूनिट) - महाराष्ट्र
5. कैगा (2 यूनिट) - कर्नाटक

कुल-12

निर्माण के लिए प्रस्तावित प्रोजेक्ट

1. कुदनकुलम (2 यूनिट) - तमिलनाडु
2. जैतपुर (2 यूनिट) - महाराष्ट्र
3. पाती सोनापुर - उड़ीशा
4. कुम्हरिया - हरियाणा
5. सौराष्ट्र - गुजरात
6. पुलिवेंडुला - आंध्रप्रदेश
7. कोव्वाडा - आंध्रप्रदेश
8. हरिपुर - पश्चिम बंगाल

कुल-15

शीघ्र मंजूरी की उम्मीद

1.कुदनकुलम - 2 यूनिट- तमिलनाडु

कुल -2

अमेरिका के डेढ़ सौ परमाणु प्रतिष्ठानों में काम बंद

अमेरिका ने 24 सितंबर 1977 को ओहियो स्थित डेविस बेसी परमाणु प्रतिष्ठान हादसा और 28 मार्च 1979 को पेंसिलवानिया के थ्री माइल आइलैंड परमाणु प्रतिष्ठान हादसे के बाद अपने यहां 162 परमाणु प्रतिष्ठान बंद करा दिए. इनमें अलेंस क्रीक, अटलांटिक, बेली, बार्टन, बेलीफॉन्ट, ब्लैक फॉक्स, ब्लू हिल्स, बोडेगा बे, कैला वे, चेरुकी, क्लिंच रिवर, क्लिंटन, डेविस बेसी, डगलस प्वाइंट, एरी, फ्लोटिंग, फोर्ट कैलहाउन, फुल्टन, ग्रीन काउंटी, ग्रीन वुड, कोलंबिया, हाट्र्स विले, हेवेन, होप क्रीक, जेम्सपोर्ट, मारबल हिल, मिडलैंड, मॉन्टेग, नेप, नॉरको, नॉर्थ एन्ना, पेबल स्प्रिंग्स, पर्किंस, पेर्री, फिप्स बेंड, पिलग्रिम, रिवर बेंड, सैटसॉप, सी-ब्रूक, सीयर्स आइल, शेरॉन हैरिस, स्कैगिट, सॉमरसेट. साउथ रिवर, स्टैनिस्लॉस, स्टरलिंग, सन डेज़र्ट, सर्री, टाइरॉन, येलो क्रीक और ज़िम्मर जैसे महत्वपूर्ण परमाणु प्रतिष्ठान शामिल हैं। लेकिन इनसे भारत सरकार ने कोई सीख नहीं ली.

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 2 अंक 16
दिल्ली, 28 जून-04 जुलाई 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-4783999/11-23418962
विज्ञापन + 91 9899815169
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120-4783950

पृष्ठ-16 (+4)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

एंडरसन से ज़्यादा अपनों ने दिए हैं ज़ख्म

शशि शेखर

एंडरसन इन दिनों भारतीय राजनीति और मीडिया के केंद्र में है. चर्चा इस बात पर हो रही है कि एंडरसन को किसने भगाया और किसके कहने पर भगाया. इसका ख़ुलासा शायद वक़्त आने पर हो जाए. या हो सकता है कभी न हो. लेकिन उस सच पर कोई चर्चा क्यों नहीं करता, जिसका ख़ुलासा तीन साल पहले हो चुका है. एंडरसन तो बाहरी था, लेकिन भोपाल पीड़ितों के उन ज़ख्मों को कौन भरेगा जो अपनों के दिए हुए है. उद्योगपतियों से लेकर नेताओं और नौकरशाहों ने भोपाल पीड़ितों के साथ जो सलूक किया है, उसका हिसाब क्यों नहीं मांगा जा रहा है? गैस पीड़ितों के घाव भरें, इसके लिए कोई क़दम उठाने के बजाय हमारे देश के शीर्ष उद्योगपति डाओ केमिकल्स से व्यापार समझौता करते रहे. डाओ को 100 करोड़ रुपये हर्ज़ाना न देना पड़े, इसके लिए एक तरह से सरकार पर दबाव बनाने तक की कोशिश की गई. गैस पीड़ितों ने जब प्रधानमंत्री से मिलने का समय मांगा तो पीएमओ के मंत्री प्रधानमंत्री को यह सलाह देते रहे कि आपको इन लोगों से मिलने की कोई ज़रूरत नहीं है. अमेरिका में भारतीय राजदूत ने अपने काम में कम, डाओ कंपनी की पैरवी करने में ज़्यादा वक़्त गुज़ारा. डाओ के मसले पर प्रधानमंत्री को वित्त मंत्री और वाणिज्य मंत्री द्वारा दिए गए जवाब और सलाह की भाषा का भी यही अर्थ था कि डाओ को 100 करोड़ रुपये की जवाबदेही से मुक्त कर दिया जाना चाहिए. सरकार तो सरकार, विपक्ष के नेता भी डाओ के समर्थन में अपने विचार व्यक्त करते दिखे. वरिष्ठ भाजपा नेता अरुण जेटली ने एक वक़ील होने के नाते डाओ के मामले में जो राय दी, उससे साबित हो गया कि मुख्य विपक्षी पार्टी के नेता अपने चेहरे पर एक नहीं, बल्कि कई–कई मुखौटे लगाते हैं. पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश तो गैस पीड़ितों और स्वयंसेवी संगठनों के उन दावों को ही झूठा साबित करने पर आमादा थे, जिनमें कहा जा रहा है कि यूनियन कार्बाइड से अभी भी ज़हरीला कचरा रिस कर भोपाल की आबोहवा और पानी को प्रदूषित कर रहा है. बहरहाल, चौथी दुनिया के पास वे सारे दस्तावेज़ मौजूद हैं, जो इन महानुभावों की पोल खोल रहे हैं. वे बता रहे हैं कि कैसे गैस पीड़ितों की भावनाओं की बलि देकर नेताओं, नौकरशाहों और उद्योगपतियों ने डाओ को बचाने का काम किया. चौथी दुनिया की पड़ताल में ऐसे ही लोगों की करतूतों का ख़ुलासा किया जा रहा है. हर उस चिट्ठी के बारे में बताया जा रहा है, जो इन लोगों ने डाओ को बचाने के लिए लिखी.

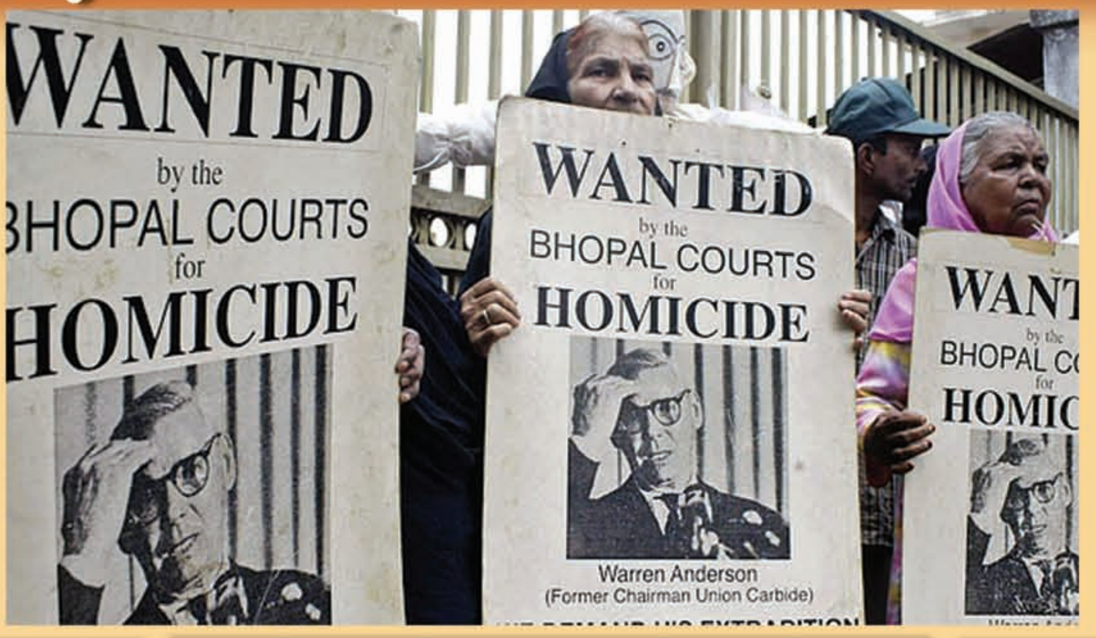

पृथ्वी राज चौहान

क्या देश के प्रधानमंत्री को अपने देश के लोगों से नहीं मिलना चाहिए. और ख़ासकर उन लोगों से, जिन्हें पिछले 25 सालों में न्याय नहीं मिल सका. भोपाल गैस पीड़ित अपनी मांगों को लेकर दिल्ली आते रहे हैं, शांतिपूर्वक धरना देकर सरकार तक अपनी बात पहुंचाते रहे हैं. इसी क्रम में इंटरनेशनल कैंपेन फॉर जस्टिस इन भोपाल के कार्यकर्ताओं ने पीएमओ में ईमेल भेजकर प्रधानमंत्री से मुलाकात का समय मांगा. 14 मार्च, 2006 को पीएमओ में राज्यमंत्री पृथ्वी राज चौहान एक पत्र लिखकर इस मामले पर अपनी राय देते हैं. वह लिखते हैं कि मैं इस संस्था के कुछ लोगों से मिल चुका हूं. मुझे नहीं लगता कि इस वक्त प्रधानमंत्री को इन लोगों से मिलना चाहिए.

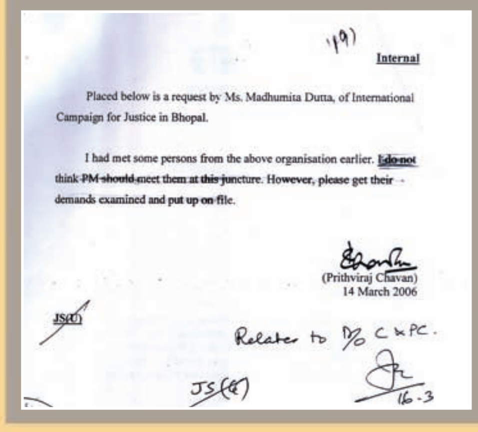
Internal

Placed below is a request by Ms. Madhumita Dutta, of International Campaign for Justice in Bhopal.

I had met some persons from the above organisation earlier. ~~I do not think PM should meet them at this juncture.~~ However, please get their demands examined and put up on file.

(Prithviraj Chavan)
14 March 2006

JS(A)
Relate to D/o C & PC.
JS(C)
16-3

रोनेन सेन

30 सितंबर, 2005 को अमेरिका में भारत के राजदूत रोनेन सेन प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव को पत्र लिखकर बताते हैं कि उनकी मुलाकात डाओ के सीईओ एंड्र्यू लिवेरिस से हुई. वह उनके पास एक प्रस्ताव लेकर आए. प्रस्ताव एक संपूर्ण पैकेज है. इसके मुताबिक, डाओ भारत के पेट्रो केमिकल्स क्षेत्र में भारी निवेश करना चाहता है. साथ ही भारत में जो कानूनी पचड़े डाओ के खिलाफ हैं, उन्हें हटाने और एक आयोग का गठन कर भोपाल साइट को साफ कर उसके पुन: विकास की भी बात है. रोनेन सेन लिखते हैं, मैं सोचता हूं कि यह एक उत्कृष्ट प्रस्ताव है. मुझे इस बात में कोई शक नहीं है कि डाओ द्वारा भारी निवेश किए जाने से भारत में एफडीआई को बढ़ावा मिलेगा. ऐसे में आप संबंधित मंत्रालय के अलावा रतन टाटा और मुकेश अंबानी के विचार भी इस मसले पर ले सकते हैं, ताकि इस समस्या का एक अच्छा समाधान निकल सके. एंड्र्यू लिवेरिस इंडिया–यूएस सीईओ फोरम के सदस्य हैं, जिसकी अध्यक्षता भारत की तरफ से रतन टाटा कर रहे हैं और उसमें मुकेश अंबानी भी शामिल हैं.

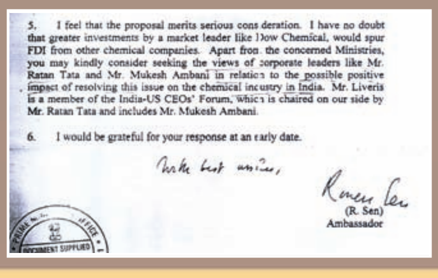
5. I feel that the proposal merits serious consideration. I have no doubt that greater investments by a market leader like Dow Chemical, would spur FDI from other chemical companies. Apart from the concerned Ministries, you may kindly consider seeking the views of corporate leaders like Mr. Ratan Tata and Mr. Mukesh Ambani in relation to the possible positive impact of resolving this issue on the chemical industry in India. Mr. Liveris is a member of the India-US CEOs' Forum, which is chaired on our side by Mr. Ratan Tata and includes Mr. Mukesh Ambani.

6. I would be grateful for your response at an early date.

With best wishes,

(R. Sen)
Ambassador

अरुण जेटली

13 दिसंबर 2006 को अरुण जेटली ने अपने मुख्य पेशे वक़ालत वाले लेटरहेड पर क़ानूनी राय के रूप में जो कुछ लिखा, वह एक तरह से डाओ के समर्थन में लिखा गया पत्र ज़्यादा लग रहा था. एक वक़ील के रूप में शायद जेटली यह बिल्कुल ही भूल गए कि वह विपक्ष के नेता भी हैं. जनता के प्रति उनकी कुछ ज़िम्मेदारियां भी हैं. दरअसल, डाओ ने उनसे अपने मामले में क़ानूनी राय मांगी थी. मुख्य रूप से दो सवाल थे. पहला, क्या यूनियन कार्बाइड की जवाबदेही डाओ की बनती है और क्या भोपाल प्लांट साइट रेमेडिएशन के लिए डाओ को ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है? दोनों सवालों पर जेटली का एक ही तरह का जवाब था. उनकी राय के मुताबिक़, भोपाल त्रासदी से डाओ का कोई संबंध नहीं है. चूंकि यूनियन कार्बाइड और डाओ दोनों बिल्कुल अलग–अलग कंपनी हैं और व्यापार में कोई कंपनी उत्तराधिकारी नहीं होती, इसलिए यूनियन कार्बाइड की जवाबदेही डाओ पर नहीं डाली जा सकती. साइट रेमेडिएशन के मामले में भी अरुण जेटली की राय थी कि देश भर में फैले ख़तरनाक कचरे के बारे में सुप्रीम कोर्ट ने एक मॉनीटरिंग कमेटी बनाई है. इसमें भोपाल का साइट भी शामिल है और जब तक सुप्रीम कोर्ट इस मामले में कोई दिशा–निर्देश नहीं देता है, तब तक डाओ पर भोपाल त्रासदी के मामले में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर कोई सिविल या आपराधिक मामला नहीं चलाया जा सकता.

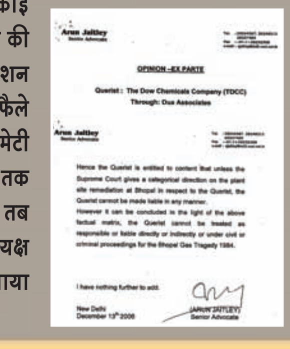
Arun Jaitley
Senior Advocate

OPINION –EX PARTE

Querist : The Dow Chemicals Company (TDCC)
Through: Dua Associates

Arun Jaitley
Senior Advocate

Hence the Querist is entitled to content that unless the Supreme Court gives a categorical direction on the plant site remediation at Bhopal in respect to the Querist, the Querist cannot be made liable in any manner.
However it can be concluded in the light of the above factual matrix, the Querist cannot be treated as responsible or liable directly or indirectly or under civil or criminal proceedings for the Bhopal Gas Tragedy 1984.

I have nothing further to add.

New Delhi
December 13th 2006

(ARUN JAITLEY)
Senior Advocate

मुकेश अंबानी

चौथी दुनिया के पास उपलब्ध दस्तावेज़ के मुताबिक़, भारत की सबसे बड़ी पेट्रो केमिकल कंपनी के मालिक मुकेश अंबानी और डाओ के बीच पेट्रो केमिकल क्षेत्र में तकनीकी सहयोग से जुड़ा एक समझौता भी हो चुका है, लेकिन 100 करोड़ रुपये का मामला डाओ की भारत यात्रा में रुकावट बना हुआ है. 2005 में तत्कालीन रसायन और उर्वरक मंत्री राम विलास पासवान ने यूनियन कार्बाइड भोपाल में फैले रासायनिक कचरे की सफ़ाई के लिए डाओ से 100 करोड़ रुपये का हर्ज़ाना मांगा था. मामला अदालत में विचाराधीन है. ऐसे में सवाल उठता है कि यह सब कुछ जानते हुए भी मुकेश अंबानी को डाओ से व्यापारिक समझौता करने की ऐसी जल्दी क्या थी?

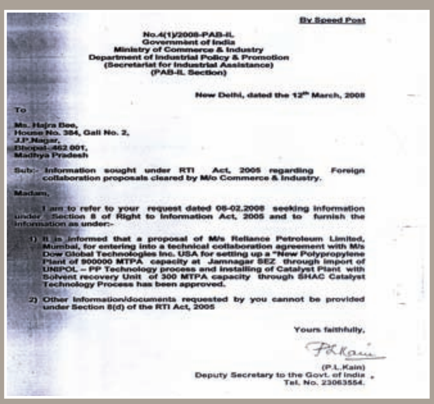
By Speed Post

No.4(1)/2008-PAB-II
Government of India
Ministry of Commerce & Industry
Department of Industrial Policy & Promotion
(Secretariat for Industrial Assistance)
(PAB-II Section)

New Delhi, dated the 12th March, 2008

To
Ms. Hajra Bee,
House No. 384, Gali No. 2,
J.P.Nagar,
Bhopal-462 001,
Madhya Pradesh

Sub:- Information sought under RTI Act, 2005 regarding Foreign collaboration proposals cleared by M/o Commerce & Industry.

Madam,

I am to refer to your request dated 08-02.2008 seeking information under Section 8 of Right to Information Act, 2005 and to furnish the information as under:-

1) It is informed that a proposal of M/s Reliance Petroleum Limited, Mumbai, for entering into a technical collaboration agreement with M/s Dow Global Technologies Inc. USA for setting up a "New Polypropylene Plant of 900000 MTPA capacity at Jamnagar SEZ through import of UNIPOL – PP Technology process and installing of Catalyst Plant with Solvent recovery Unit of 300 MTPA capacity through SHAC Catalyst Technology Process has been approved.

2) Other information/documents requested by you cannot be provided under Section 8(d) of the RTI Act, 2005

Yours faithfully,

(P.L.Kain)
Deputy Secretary to the Govt. of India
Tel. No. 23063554.

चौथी दुनिया के पास वे सारे दस्तावेज़ मौजूद हैं ,जो चीख–चीख कर इन महानुभावों की पोल खोल रहे हैं. बता रहे हैं कि कैसे गैस पीड़ितों की भावनाओं की बलि चढ़ा कर नेताओं, नौकरशाहों और उद्योगपतियों ने डाओ को बचाने के काम किया. चौथी दुनिया की पड़ताल में ऐसे ही लोगों की करतूतों का ख़ुलासा किया जा रहा है. हर उस चिट्ठी के बारे में बताया जा रहा है, जो इन लोगों ने डाओ को बचाने के लिए लिखी है.

रतन टाटा

रतन टाटा आज से 4 साल पहले एक पत्र मनमोहन सिंह और तत्कालीन वित्त मंत्री पी चिदंबरम को भेजते हैं. इस सुझाव के साथ कि भोपाल गैस कांड से प्रभावित स्थल की साफ़–सफ़ाई के लिए 100 करोड़ रुपये का एक फंड या ट्रस्ट टाटा कंपनी और अन्य भारतीय उद्योगपति मिलजुल कर तैयार कर सकते हैं. टाटा का तर्क था कि चूंकि डाओ केमिकल्स एक बहुत बड़ी कंपनी है और वह भारत में बहुत बड़े पैमाने पर निवेश करना चाहती है, इसलिए डाओ को 100 करोड़ रुपये जमा कराने की जवाबदेही से मुक्त किया जाए. ग़ौरतलब है कि रतन टाटा द्वारा उक्त पत्र लिखे जाने तक भी डाओ का 100 करोड़ रुपये देने का मामला अदालत में विचाराधीन था. अदालत में इस बात का तय होना बाकी था कि रुपया जमा कराने के लिए डाओ बाध्य है या नहीं. ऐसे में यह सवाल भी उठता है कि रतन टाटा के इस प्रस्ताव के पीछे कहीं डाओ को 100 करोड़ रुपये की जवाबदेही से मुक्त करा देने की मंशा तो नहीं थी. ग़ौरतलब है कि रतन टाटा इंडो–यूएस सीईओ फोरम के को–चेयरमैन हैं. टाटा ने अपने इस सुझाव के पीछे जो तर्क दिया है, उससे यह साबित होता है कि इन उद्योगपतियों के दिलोदिमाग़ पर पैसे का महत्व इस क़दर हावी है कि वहां आकर मानवीय संवेदना दम तोड़ देती है.

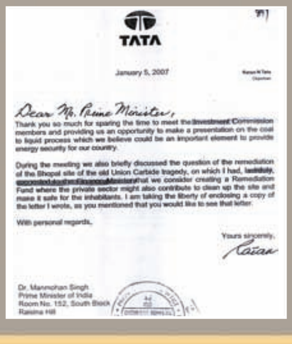
TATA

January 5, 2007

Ratan N Tata
Chairman

Dear Mr. Prime Minister,

Thank you so much for sparing the time to meet the Investment Commission members and providing us an opportunity to make a presentation on the coal to liquid process which we believe could be an important element to provide energy security for our country.

During the meeting we also briefly discussed the question of the remediation of the Bhopal site of the old Union Carbide tragedy, on which I had, ~~tentatively suggested to the Finance Minister~~ that we consider creating a Remediation Fund where the private sector might also contribute to clean up the site and make it safe for the inhabitants. I am taking the liberty of enclosing a copy of the letter I wrote, as you mentioned that you would like to see that letter.

With personal regards,

Yours sincerely,
Ratan

Dr. Manmohan Singh
Prime Minister of India
Room No. 152, South Block
Raisina Hill

पी चिदंबरम

दिसंबर, 2006 में तत्कालीन वित्त मंत्री पी चिदंबरम मनमोहन सिंह को पत्र लिखकर बताते हैं कि हम लोगों को रतन टाटा का वह प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिए, जिसमें उन्होंने 100 करोड़ रुपये का एक फंड बनाने की बात कही है. साइट रेमेडिएशन ट्रस्ट रतन टाटा की अध्यक्षता में गठित करना चाहिए.

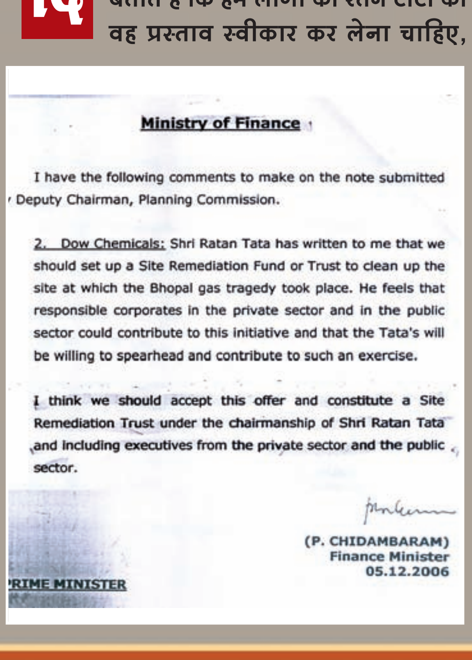
Ministry of Finance

I have the following comments to make on the note submitted by Deputy Chairman, Planning Commission.

2. Dow Chemicals: Shri Ratan Tata has written to me that we should set up a Site Remediation Fund or Trust to clean up the site at which the Bhopal gas tragedy took place. He feels that responsible corporates in the private sector and in the public sector could contribute to this initiative and that the Tata's will be willing to spearhead and contribute to such an exercise.

I think we should accept this offer and constitute a Site Remediation Trust under the chairmanship of Shri Ratan Tata and including executives from the private sector and the public sector.

(P. CHIDAMBARAM)
Finance Minister
05.12.2006

PRIME MINISTER

सभी फोटो–प्रभात पाण्डेय

कमलनाथ

फरवरी, 2007 में तत्कालीन वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री कमलनाथ प्रधानमंत्री को भेजे अपने पत्र में लिखते हैं कि डाओ द्वारा 100 करोड़ रुपये जमा कराने की बात पर मैं कोई टिप्पणी नहीं करूंगा, क्योंकि यह मामला अदालत में विचाराधीन है, लेकिन यह सुझाव दिया गया है कि अदालत में डाओ को 100 करोड़ रुपये देने की बाध्यता से मुक्त कराने के लिए अलग से एक आवेदन दिया जा सकता है. चूंकि डाओ भारत में एक बड़ा निवेश कर रहा है, इसलिए मैं आग्रह करना चाहूंगा कि कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में एक समूह का गठन किया जाए, जो इस मामले को समग्र रूप से वैसे ही देखे, जैसे एनरॉन और डाभोल पावर कॉरपोरेशन के मामले को देखा गया था. कैबिनेट सचिव इस मामले में रतन टाटा के उक्त पत्र पर औद्योगिक घरानों से भी सलाह ले सकते हैं.

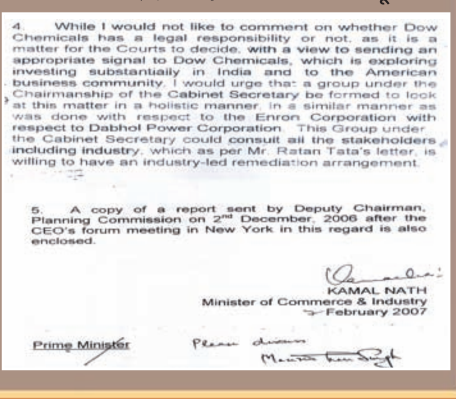
4. While I would not like to comment on whether Dow Chemicals has a legal responsibility or not, as it is a matter for the Courts to decide, with a view to sending an appropriate signal to Dow Chemicals, which is exploring investing substantially in India and to the American business community, I would urge that a group under the Chairmanship of the Cabinet Secretary be formed to look at this matter in a holistic manner, in a similar manner as was done with respect to the Enron Corporation with respect to Dabhol Power Corporation. This Group under the Cabinet Secretary could consult all the stakeholders including industry, which as per Mr. Ratan Tata's letter, is willing to have an industry-led remediation arrangement.

5. A copy of a report sent by Deputy Chairman, Planning Commission on 2nd December, 2006 after the CEO's forum meeting in New York in this regard is also enclosed.

KAMAL NATH
Minister of Commerce & Industry
February 2007

Prime Minister

जयराम रमेश

अदालत के आदेश के मुताबिक, यूनियन कार्बाइड परिसर में किसी भी व्यक्ति का प्रवेश वर्जित है, लेकिन पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश के लिए अदालत के इस आदेश का मानों कोई महत्व नहीं है. कुछ महीने पहले जयराम रमेश भोपाल यात्रा पर थे. यात्रा के दौरान रमेश यूनियन कार्बाइड के परिसर भी पहुंच गए. बाक़ायदा उनके साथ पुलिस और सुरक्षाबल भी मौजूद था. यूनियन कार्बाइड परिसर में जाने के बाद जयराम रमेश वहां फैले कचरे को अपने हाथ से छूकर मीडिया को दिखा रहे थे. शायद वह लोगों को यह संदेश देना चाह रहे थे कि भोपाल के लोग झूठ बोलते हैं कि यहां का कचरा ज़हरीला है. मैंने तो छू लिया, मुझे तो कुछ नहीं हुआ.

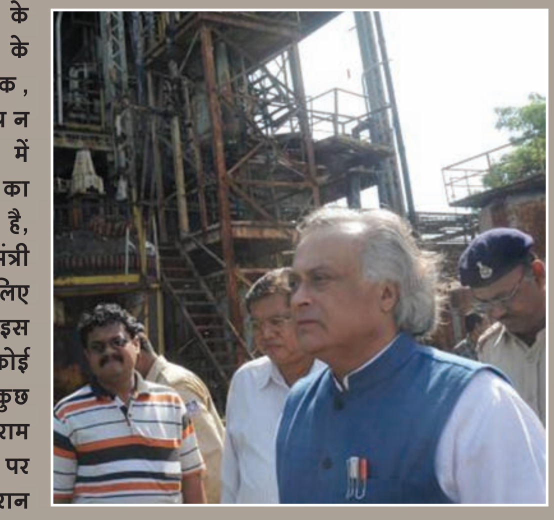

shashishekhar@chauthiduniya.com

मुइवा मणिपुर में जन्मे हैं, मगर वह नगालैंड में रहकर नगा बहुल इलाक़ों को एक साथ मिलाकर वृहद नगालैंड (नगालिम) बनाने की मांग करते रहे हैं.

मणिपुर: वे 65 दिन, जिन्होंने ज़िंदगी को नरक बना दिया

एस. बिजेन सिंह

आख़िर नगा संगठनों ने बिना शर्त नाकेबंदी ख़त्म करने की घोषणा क्यों की? वजह साफ़ है कि नगालैंड होकर गुवाहाटी से आए मणिपुर के लाखों वाहनों से बीच रास्ते में एनएससीएन टैक्स वसूलता है. सामान लदे प्रत्येक ट्रक से एक हजार से लेकर पंद्रह सौ तक की रकम ज़बरन वसूली जाती है. पिछले लगभग ढाई माह से नाकेबंदी के चलते एनएससीएन इस अवैध वसूली से वंचित था.

कभी राज्य सरकार की अनावश्यक जिद तो कभी केंद्र सरकार का विरोधाभासी रवैया, कभी नगा संगठनों की हिंसक धमकियां तो कभी इशाक मुइवा का राजनीतिक खेल, मणिपुर आख़िर कब तक इन दोराहों के बीच झूलता रहेगा. नगा संगठनों ने राष्ट्रीय राजमार्ग पर करीब ढाई महीने से चल रही नाकेबंदी को बंद करने की घोषणा भले कर दी हो, लेकिन मणिपुर में हालात सामान्य होने में अभी भी काफी वक़्त लगेगा. पहला तो नाकेबंदी ख़त्म होने को लेकर ही कई विरोधाभासी बयान आ रहे हैं, ऊपर से इसके चलते स्थानीय लोगों की रोजाना की ज़िंदगी नारकीय होकर रह गई है. खाने-पीने की चीजें हों या जीवन की अन्य आधारभूत ज़रूरतें, माओ गेट होकर सामानों की आपूर्ति ठप्प होने से लोगों का जीना मुहाल हो चुका है. राज्य के अंदरूनी इलाक़ों में लोग दवाओं के अभाव में मर रहे हैं तो पेट्रोल-डीजल की क़ीमत भी आसमान छूने लगी है.

15 जून को मणिपुर के मुख्य राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 39 (इंफाल-दिमापुर) और 53 (इंफाल-सिल्चर) की 65 दिनों से चली आ रही नाकेबंदी को ख़त्म करने की घोषणा आख़िरकार ऑल नगा स्टूडेंट एसोसिएशन ऑफ मणिपुर (एनएसएएम) ने कर दी. हालांकि यह फ़ैसला अस्थायी है. नाकेबंदी का कारण था, ऑटोनोमस डिस्ट्रिक्ट काउंसिल (एडीसी) का चुनाव. पांच पहाड़ी ज़िलों में इस चुनाव को लेकर नगाओं को आपत्ति थी. वे एडीसी के कामकाज से खुश नहीं थे. नए नियमों के तहत एडीसी के वित्तीय अधिकारों में कटौती की जा रही है. इसलिए चुनाव का विरोध करते हुए इकोनॉमिक ब्लॉकेड का फ़ैसला लिया गया था. मामला तब और गरमा गया, जब नगा नेता इशाक मुइवा ने मणिपुर के उख्रूल ज़िले के अपने पैतृक गांव सोमदाल में प्रवेश की अनुमति देने की मांग की. ऑल नगा स्टूडेंट एसोसिएशन ऑफ मणिपुर का समर्थन करते हुए नगा स्टूडेंट फेडरेशन ने भी नगालैंड से मणिपुर आने वाली गाड़ियां रोक दीं. साथ में राष्ट्रीय राजमार्ग 39 की भी नाकेबंदी कर दी. इतना ही नहीं, राजमार्ग 59 को भी इन संगठनों ने जाम कर दिया. बीते 14 जून को नगा संगठनों के प्रतिनिधियों ने प्रधानमंत्री से मुलाकात कर अस्थायी तौर पर नाकेबंदी ख़त्म करने का फ़ैसला लिया. वहीं दूसरी तरफ ऑल नगा स्टूडेंट एसोसिएशन ऑफ मणिपुर और ऑल स्टूडेंट्स एसोसिएशन ऑफ मणिपुर ने एक बयान में कहा है कि आर्थिक नाकेबंदी तब तक ख़त्म नहीं होगी, जब तक सरकार पुलिस कमांडो और अर्द्धसैनिक बलों को राज्य के नगा आबादी वाले इलाक़ों से नहीं हटाती है. साथ ही उन्होंने यह भी मांग की कि मणिपुर सरकार इन संगठनों के प्रमुख डेविड कोरो और सैमसन रेमई के ख़िलाफ़ जारी गिरफ्तारी वारंट को भी वापस ले. सरकार ने पिछले हफ्ते इन दोनों नेताओं को अति वांछित घोषित करते हुए इन पर एक लाख रुपये का ईनाम घोषित किया था. केंद्र सरकार ने लगातार बिगड़ती स्थिति से निपटने के लिए अर्द्धसैनिक बल के 2000 से ज़्यादा जवान भेजने का निर्णय लिया था. 65 दिनों की नाकेबंदी ने मणिपुर की हालत नरक से भी बदतर बना दी. चारों तरफ मायूसी और उदासी छाई हुई है.

इन 65 दिनों के दौरान मणिपुर में महंगाई इतनी बढ़ गई कि आम लोगों का जीना मुहाल हो गया. पेट्रोल का दाम 300 रुपये लीटर तक पहुंच गया और रसोई गैस का दाम 1500 रुपये प्रति सिलेंडर. राजधानी इंफाल के मुख्य अस्पताल और नर्सिंग होम बंद पड़े रहे. ऑक्सीजन और दवा की कमी से मरीज़ों का इलाज नहीं हो पाया. शिशु आहार, रोज़मर्रा की ज़िंदगी में इस्तेमाल होने वाले सामानों का घोर संकट हो गया. दाम तो बढ़े ही, सामान मिलना भी मुश्किल हो गया. बीते 65 दिनों के दौरान मणिपुर के लोगों ने एक ऐसी नारकीय ज़िंदगी जी, जिसे बयां करना ख़ासा मुश्किल है. स्थानीय नागरिक जय सिंह के अनुसार, एक तो रोज़मर्रा की ज़रूरत की वस्तुओं के दाम लगातार आसमान छू रहे थे, ऊपर से वे सहज मुहैया भी नहीं थीं. महिलाओं को घर का चूल्हा जलाने के लिए लाख जतन करने पड़ते थे.

केरोसिन पहले 40 रुपये लीटर था, मगर नाकेबंदी के दौरान वह 100 रुपये प्रति लीटर हो गया. नाकेबंदी के चलते खाने-पीने का सामान, पेट्रोल-डीजल, रसोई गैस एवं दवाइयां आदि पर्याप्त मात्रा में न पहुंच पाने की वजह से ज़िंदगी मानों थम सी गई थी. मणिपुर की सड़कों पर वाहनों की कतार खड़ी थी, क्योंकि उनमें पेट्रोल नहीं था. कुछ सार्वजनिक वाहन अगर चल भी रहे थे तो किराया तीन गुना वसूला जा रहा था. विनय सिंह ने बताया कि उन्हें अपने वाहन में पेट्रोल भराने के लिए तीन किमी लंबी लाइन लगानी पड़ी.

डीजल की कमी ने किसानों को खेतीबारी से दूर कर दिया. मणिपुर ड्राइवर वेलफेयर एसोसिएशन ने कहा कि अगर नाकेबंदी खुल भी गई तो भी वे अपनी गाड़ियां नहीं चलाएंगे, क्योंकि इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि रास्ते में क्या होगा. उन लोगों ने कहा कि सुरक्षा का इंतजाम जब तक नहीं किया जाएगा, तब तक उनका चलना संभव नहीं है. वजह, नाकेबंदी के दौरान कई ट्रकों को राजमार्ग पर जला दिया गया, खाई में धकेल दिया गया और ड्राइवरों पर भी हमला किया गया. हालांकि राज्य सरकार ने इस मामले में हरसंभव कोशिश की. राज्य सरकार के मंत्री रंजीत सिंह के नेतृत्व में नेशनल हाइवे 53 पर रुके 377 ट्रकों को सुरक्षाबलों के साथ इंफाल तक लाया गया. इस काफिले में पेट्रोल-डीजल से भरे 25 टैंकर, रसोई गैस से लदे तीन और रोजमर्रा के सामानों से लदे 334 ट्रक और 15 यात्री बसें शामिल थीं. कार्गो हेलीकॉप्टर से भी तेल भरे ट्रक लाए गए. बावजूद इसके आम लोगों की ज़रूरतें पूरी नहीं की जा सकीं.

65 दिनों के दौरान मणिपुर के लोगों ने एक ऐसी नारकीय ज़िंदगी जी, जिसे बयां करना ख़ासा मुश्किल है. रोज़मर्रा की ज़रूरत की वस्तुओं के दाम लगातार आसमान छू रहे थे, ऊपर से वे सहज मुहैया भी नहीं थीं. महिलाओं को घर का चूल्हा जलाने के लिए लाख जतन करने पड़ रहे थे.

	पहले	अभी
पेट्रोल	70 रु/लीटर	300 रु/ली
रसोई गैस	350 रु/सि	1500 रु/सि
केरोसिन	40 रु/लीटर	100 रु/ली
चावल	25 रु/किलो	150 रु/कि

ग़ौरतलब है कि यह नाकेबंदी ज्यादा उग्र इसलिए भी हो गई, क्योंकि नगा नेता मुइवा को मणिपुर जाने से रोक दिया गया. राज्य सरकार ने उन्हें मणिपुर आने से सख्त मना कर दिया. सरकार का कहना था कि पिछले 40 सालों के दौरान मुइवा अपने पैतृक गांव नहीं आए तो अब क्यों जाना चाहते हैं और वह भी नगा वार्ता विफल होने के बाद. शायद राज्य सरकार को लगा कि नगा संगठनों को एकजुट करने की साज़िश की जा सकती है और इससे भविष्य में हिंसा का दौर फिर से शुरू होने की आशंका हो सकती है. मुइवा की मणिपुर यात्रा का कार्यक्रम राजनीति से प्रेरित था. अगर वह केवल अपने पैतृक गांव जा रहे होते तो सरकार मान भी लेती, मगर उन्होंने नगा बहुल इलाक़ों में जाकर बैठकों को संबोधित करने की योजना बनाई थी. इसी वजह से यह मामला उलझता चला गया. 2005 में भी एनएसएएम के इकोनॉमिक ब्लॉकेड का समर्थन करते हुए एनएसएफ ने नगालैंड के हिस्सों में मणिपुर जाने वाले वाहनों को रोककर मणिपुरी लोगों को संकट में डाल दिया था. अत्याधुनिक हथियारों से लैस उक्त संगठनों के लोग माउ से दिमापुर के बीच हमेशा यात्रियों को तंग करते हैं. लूटपाट, गाड़ी जलाना एवं लोगों को सताना आदि घटनाएं आएदिन होती रहती हैं. इन्हीं कारणों से मणिपुर में 14 जनवरी का दिन हर साल ड्राइवर डे के रूप में मनाया जाता है, इन नगा संगठनों के ज़ुल्मों के विरोध में.

मुइवा मणिपुर में जन्मे हैं, मगर वह नगालैंड में रहकर नगा बहुल इलाक़ों को एक साथ मिलाकर वृहद नगालैंड (नगालिम) बनाने की मांग करते रहे हैं. प्रस्तावित नगालिम में असम, अरुणाचल प्रदेश और मणिपुर की ज़मीनें भी शामिल हैं. मणिपुर के लोग असम, बांग्लादेश और मंडेला आदि अलग-अलग जगहों पर रहते हैं, मगर उन्हें इकट्ठा करके एक अलग राज्य बनाने की मांग किसी भी लिहाज़ से जायज़ नहीं है. इसमें मुख्य बात यह है कि नगाओं के लिए पृथक राज्य की मांग कर रहे मुइवा इस बात की गारंटी नहीं दे सकते कि राज्य की हर नगा जाति उनकी इस मांग की समर्थक है. मुइवा अपनी प्रतिष्ठा को नज़रअंदाज़ करते हुए नगालैंड में रह कर मणिपुर पर क़ब्ज़ा जमाना चाहते हैं. वह अगर अपने गुणों और कौशल का सही इस्तेमाल करते तो हर जाति-समुदाय के लोग उन्हें सम्मान देते. एनएससीएन (आईएम) भी मणिपुर के राष्ट्रीय राजमार्ग 39 पर निर्भर रहता है. ग़ौरतलब यह है कि नगा संगठन एनएससीएन के लोग नगालैंड होकर गुवाहाटी से आने वाले मणिपुर के लाखों वाहनों से बीच रास्ते में अवैध वसूली करते हैं. इससे उन्हें करोड़ों रुपये की आमदनी होती है. सामान लदे प्रत्येक ट्रक से एक हज़ार से लेकर पंद्रह सौ रुपये तक वसूले जाते हैं. अगर कोई ट्रक बिना पैसा दिए चला जाए तो उसके मालिक से दोगुनी रकम वसूली जाती है. पिछले लगभग ढाई माह से नाकेबंदी के चलते एनएससीएन इस अवैध वसूली से वंचित था.

23 लाख की आबादी वाले राज्य मणिपुर में नगा ईसाई धर्मावलंबी हैं, जबकि मणिपुरी (मैतै) वैष्णव संप्रदाय में हिंदू लोग हैं. मैतै घाटी में और नगा पहाड़ियों में रहते हैं. मैतै लोग चावल की खेती करते हैं. नगालैंड में नगा जनजाति बहुमत में है, वहीं मणिपुर में नगा अल्पसंख्यक हैं. नगा नेताओं का कहना है कि नगाओं की स्वतंत्रता और उनके हक़ों को मणिपुरियों ने दबा रखा है. मगर सवाल यह है कि कौन से मणिपुरियों ने नगाओं को दबा कर रखा है? उच्च शिक्षा पाने में कौन बाधा उत्पन्न कर रहा है? नौकरी में भी नगाओं को आरक्षण की सुविधा है. आख़िर यहां कौन उनका हक़ मार रहा है? विकास कार्यों में भी सबकी समान हिस्सेदारी रही है.

उधर केंद्र सरकार भी मणिपुर संकट के प्रति संवेदनशील नहीं दिख रही है. लोग सवाल करने लगे हैं कि कश्मीर को लेकर केंद्र सरकार जितनी संवेदनशील है, उतनी मणिपुर को लेकर क्यों नहीं? मणिपुर भी भारत का एक अहम हिस्सा है. जानकारों का मानना है कि अगर केंद्र सरकार मणिपुर के मौजूदा संकट पर शीघ्र ध्यान नहीं देती है तो एक बड़ा जनांदोलन खड़ा होने में देर नहीं लगेगी. ज़ाहिर है, यह एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए शुभ संकेत नहीं होगा.

bijen@chauthiduniya.com

उत्तराखंड: भाजपा के लिए मिशन 2012 की राह कठिन

राजकुमार शर्मा

भारतीय जनता पार्टी ने एक बार फिर उत्तराखंड के जनाधार वाले नेताओं को नकारते हुए गगन बिहारी नेता को राज्यसभा के लिए प्रत्याशी बनाकर आत्मघाती क़दम उठाया. इससे कई दिग्गजों के होश उड़ गए. कार्यकर्ताओं को एक बार फिर पैराशूट उम्मीदवार झेलना पड़ा. भाजपा हाईकमान द्वारा पांचजन्य के संपादक रह चुके अपने राष्ट्रीय प्रवक्ता तरुण विजय को राज्यसभा भेजने से पूर्व मुख्यमंत्री भुवन चंद्र खंडूरी, टीपीएस रावत एवं पूर्व प्रदेश अध्यक्ष बच्ची सिंह रावत को ख़ासा झटका लगा है. पिछली बार कैप्टन सतीश शर्मा को राज्यसभा प्रत्याशी बनाने पर कांग्रेस की खिल्ली उड़ाने वाली भाजपा एवं उसके दिग्गज इस बार खुद हंसी के पात्र बन गए. अब वे तरुण विजय को उत्तराखंडी साबित करने के लिए तरह-तरह के नाटक कर रहे हैं. मुख्यमंत्री निशंक ने तो अपने बयान में तरुण को उत्तराखंड का गौरव बता डाला. संसदीय कार्य मंत्री प्रकाश पंत ने तरुण विजय को प्रोजेक्ट करने के दायित्व का निर्वहन जिस ख़ूबी के साथ किया, उसे भी लोग लाजवाब मानते हैं. तरुण को यहां से राज्यसभा भेजना भाजपा के लिए एक महंगा सौदा साबित हो सकता है. उसके मिशन 2012 की राह भारी पड़ सकती है. राज्यसभा चुनाव से पहले पार्टी ने शुरुआती दौर में जिस तरह स्थानीय नेताओं के नामों का पैनल तैयार करने और महिला प्रत्याशी की चर्चा जैसी लंबी-चौड़ी कसरत कराई, उससे तो यही लगा कि सूबे के किसी कद्दावर नेता के दिन बहुरने वाले हैं. पूर्व मुख्यमंत्री खंडूरी का नाम सबसे आगे था. समर्थकों को भी लग रहा था कि हाईकमान खंडूरी को राज्यसभा भेज कर उनका खोया सम्मान वापस करेगा. लोकसभा चुनाव में पांचों सीटों पर हार का ठीकरा जिस तरह खंडूरी के सिर फोड़ा गया, उससे समर्थकों में ख़ासा असंतोष देखने को मिला. उस हार के लिए राज्य के अन्य नेताओं के अलावा पार्टी हाईकमान भी ज़िम्मेदार था. बावजूद इसके सज़ा भुगतनी पड़ी खंडूरी को. फौजी जीवन से अनुशासन का पाठ पढ़कर राजनीति में आए खंडूरी को राजनीतिक छलियों ने हाशिए पर पहुंचा दिया. नितिन गडकरी ने भी राष्ट्रीय अध्यक्ष बनने के बाद अपने पदाधिकारियों की जो फौज तैयार की, उसमें खंडूरी के धुर विरोधी भगत सिंह कोश्यारी को स्थान दे दिया गया. इस बार राज्यसभा प्रत्याशी के चयन में भी खंडूरी एवं उनके समर्थक टीपीएस रावत को नज़रअंदाज़ कर दिया गया. इससे सूबे की राजनीति में जितने मुंह उतनी बातें हो रही हैं. रावत ने जिस तरह भाजपा सरकार बनवाने में अग्रणी भूमिका निभाई थी, वह किसी से छुपी नही हैं. रावत को उम्मीद थी कि भाजपा हाईकमान उनके सहयोग के बदले उन्हें राज्यसभा ज़रूर भेजेगा. समर्थक भी यही सोच रहे थे कि भाजपा को सत्ता की देहरी पर खड़ा करने वाले रावत को नायक बनाकर हाईकमान खुद को कृतघ्न कहलाने से बचा लेगा, किंतु ऐसा नहीं हो सका. संघ परिवार से दूरी रावत के लिए अयोग्यता बन गई. हाईकमान ने भाजपा के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष बच्ची सिंह रावत को भी नज़रअंदाज़ कर दिया. एक ज़मीनी कार्यकर्ता होना उनकी डीमेरिट का कारण बना. महिला उम्मीदवार के रूप में राज रावत की दावेदारी महज दिखावा साबित हुई. यह कोई पहला अवसर नहीं है, जब भाजपा ने पैराशूट उम्मीदवार उतारा है. इसके पहले भी 2004 में पार्टी ने सुषमा स्वराज को उतारा था. इसी तरह राजनाथ सिंह के पुत्र के साले को खुश करने के लिए टिहरी के युवराज का टिकट काटकर जसपाल राणा को प्रत्याशी बनाया गया था, लेकिन इससे सूबे में एक ग़लत संदेश गया और जनता ने इसे टिहरी राजघराने का अपमान मानते हुए हिसाब-किताब बराबर कर लिया. लोकसभा चुनाव में तो राज्य से भाजपा का सूपड़ा ही साफ़ हो गया. जानकारों का मानना है कि निशंक की शह पर ही फौजी से राजनेता बने खंडूरी को हर स्तर पर निपटाया जा रहा है. निशंक की एकमात्र नायक बने रहने की चाहत के चलते सूबे के कद्दावर भाजपा नेताओं के पर कतरे जा रहे हैं. ईमानदार नेताओं के साथ हो रही नाइंसाफ़ी भाजपा के मिशन 2012 पर भारी पड़ सकती है. गढ़वाली महासभा के महासचिव रोशन धस्माना का मानना है कि यदि भाजपा ज़मीनी नेताओं पर भरोसा नहीं करेगी और यूं ही गगन बिहारी नेताओं को थोपती रहेगी तो मिशन 2012 की राह बहुत कठिन हो जाएगी. तरुण विजय की जीत का जश्न मना रही भाजपा को संगठन के अंदर कार्यकर्ताओं के बीच व्याप्त असंतोष की शायद भनक नहीं है. हालांकि तरुण ने अपनी जीत का सेहरा सभी के सिर बांधा और कहा कि वह प्रदेश को विश्व में सम्मान दिलाने की हरसंभव कोशिश करेंगे. उधर तरुण की जीत ने एक बार फिर साबित कर दिया है कि संघ परिवार आज भी सब पर भारी है.

बीसी खंडूरी

तरुण विजय

रमेश पोखरियाल निशंक

feedback@chauthiduniya.com

माओवादियों के ख़िलाफ़ जंग में सरकार ने स्कूलों का इस्तेमाल किया और माओवादियों ने उसे अपने हमले का निशाना बना दिया.

सांसत में विकास

आदियोग

कह सकते हैं कि माओवाद प्रभावित इलाकों के आधे सांसद नहीं चाहते कि सरकार माओवादियों से जंग लड़े. उनके मुताबिक फ़िलहाल अभी हथियारों के इस्तेमाल की नौबत नहीं आई है और माओवादियों को विकास के ज़रिये चुनौती दिए जाने का समय अभी नहीं गुज़रा है. इस राय में झारखंड के पूर्व मुख्यमंत्री एवं भाजपा सांसद अर्जुन मुंडा भी शामिल हैं. माओवाद प्रभावित इलाकों के सांसद पिछले चार जून को गृह मंत्रालय द्वारा वामपंथी अतिवाद पर आयोजित बैठक में जुटे थे. कुछ ने माओवाद प्रभावित इलाकों के लिए विकास की खा़स योजनाएं शुरू किए जाने की भी पुरज़ोर पैरवी की. हालांकि 25 में 12 सांसद बैठक में पहुंचे ही नहीं. खैर, गृहमंत्री पी चिदंबरम ने दो टूक कह दिया कि विकास का काम भी जारी रहेगा और माओवादियों के खिलाफ़ युद्ध भी. यह खीज भी उतारी कि माओवाद से बुरी तरह प्रभावित देश के 34 जिलों में विकास के तमाम कार्यक्रमों के लिए राज्य सरकारों को धन की कमी नहीं होने दी गई, लेकिन उसका सही इस्तेमाल नहीं हो सका. माओवादियों के खिलाफ़ अपने कड़े तेवरों को जायज ठहराते हुए यह पुराना दुखड़ा भी रोया कि माओवादियों ने केवल पिछले साल ही 71 स्कूलों की इमारतें ढहा दीं और बच्चों को उनके शिक्षा के अधिकार से वंचित कर दिया.

सबसे पहले विकास का सवाल. सही है कि माओवाद का आधार क्षेत्र वे इलाक़े हैं, जहां विकास की हवा नहीं पहुंची और अगर पहुंची भी तो बस आई–गई हो गई, कुछ रसूखदारों और ओहदेदारों के आंगन में ठहर गई. तो क्या माओवादियों की बढ़त के पीछे महज़ कम विकास या इसकी ग़ैर मौज़ूदगी जिम्मेदार रही है? और फ़िर विकास से हमारा क्या मतलब है? कल्याणकारी कार्यक्रम नई दिल्ली या रायपुर, भुवनेश्वर, रांची, मुंबई, कोलकाता आदि राजधानियों में तय किए जाते हैं और जिनका ज़मीनी ज़रूरतों और लोगों की चाहतों या प्राथमिकताओं से अमूमन कोई लेना–देना नहीं होता और जिसमें लोगों की भागीदारी लाभार्थी से ज़्यादा नहीं होती. अब यह अलग सवाल है कि सरकार के कल्याणकारी कार्यक्रम कितना काग़ज़ों में पूरे किए जाते हैं और किस तरह बंदरबांट की दावत बन जाते हैं. यह पुराना सरकारी रोना है कि माओवादी स्कूल तक को नहीं छोड़ रहे. स्कूल नहीं रहेगा तो बच्चे कैसे पढ़ेंगे? उनका विकास कैसे होगा? ज़माने की रफ्तार कैसे पकड़ेंगे? माओवादी नहीं चाहते कि आदिवासियों का भला हो और वे मुख्यधारा में आएं. यह तो बेचारे आदिवासियों को पिछड़ेपन की गिरफ्त में बनाए रखने की साजिश है. उनका इरादा नेक नहीं है. उनके लिए आदिवासी केवल ढाल हैं, मोहरा हैं. उनका इकलौता मक़सद हिंसा के रास्ते सत्ता हासिल करना है. इसलिए उनका नामोनिशान मिटा देना जरूरी है.

स्कूल पर लौटें. सच है कि माओवादियों ने स्कूल की इमारतों का विध्वंस किया और सच यह भी है कि उन स्कूलों पर ही धावा बोला, जहां सुरक्षाबल अपना डेरा डाला करते थे और उनका इस्तेमाल वाच टावर की तरह किया जाता था. गुनाह किसका है? हिंसाग्रस्त इलाकों में स्कूल–अस्पताल जैसी जगह को आज़ाद रखा जाना चाहिए. यह आदर्श क़ायम करने की उम्मीद सबसे पहले सरकार से की जाती है और सरकार ने ही इस दायित्व से मुंह मोड़ लिया. स्कूलों पर क़ब्ज़ा करना सुरक्षाबलों का अधिकार हो गया. सीआरपीएफ़ ने हर जगह ग्राम पंचायत और गांवसभा को ठेंगे पर रखा और अपने इस अधिकार को जबरिया हासिल किया. समझा जा सकता है कि वर्दीधारी रोबीले जवानों और असलहों के साए में क्या खाक पढ़ाई होगी? होगी भी तो क्या होगी? स्कूल में दहशत की धमक होगी तो इसका बच्चों के दिलोदिमाग़ पर कितना बुरा असर होगा? तो स्कूल कहां रहे? स्कूलों में सुरक्षाबलों के कैंप हो गए. यह कम बड़ा अपराध था? इस पर तो देश की सबसे बड़ी अदालत छत्तीसगढ़ सरकार को तगड़ी फटकार भी लगा चुकी है और यह निर्देश जारी कर चुकी है कि स्कूलों को सुरक्षाबलों के कब्जे से फ़ौरन आज़ाद कराया जाए. बदले में राज्य सरकार बाक़ायदा हलफ़नामा पेश कर चुकी है कि छत्तीसगढ़ में अब ऐसा कोई स्कूल नहीं रहा, जहां सुरक्षाबलों का कैंप हो. यह सरासर झूठ है. बस्तर के बीजापुर जिले में ही 27 स्कूलों पर सुरक्षाबल काबिज़ है. उधर झारखंड में कम से कम 50 स्कूलों पर सीआरपीएफ़ ने स्थाई कब्जा जमा रखा है. वहां पढ़ाई नहीं होती. 43 दूसरे स्कूलों में यह दस्ता जब–तब आ धमकता है और उसके रहने तक बच्चों की छुट्टी हो जाती है. यही दास्तान आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और महाराष्ट्र की भी है. अब शिकायत किससे की जाए और कैसे? यह तो बैल को सींग मारने का न्यौता देना है, देश को माओवादियों से मुक्त कराने के सरकारी यज्ञ में रुकावट डालना जो है. सीधा सा मामला है कि माओवादियों के खिलाफ़ जंग में सरकार ने स्कूलों का इस्तेमाल किया और माओवादियों ने उन्हें अपने हमले का निशाना बना दिया. और चिदंबरम साहब बच्चों की शिक्षा की दुहाई देकर माओवादियों को कोसने और उन्हें देख लेने के पोज़ में खड़े हैं.

छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा जिले का डोरनापाल वह सीमा है, जहां तक सुरक्षाबलों की छतरी के नीचे सलवाजुडूम का राज चलता है और जहां से माओवादियों के नियंत्रण का इलाक़ा शुरू हो जाता है. डोरनापाल बेहद संवेदनशील जगह है. इस छोटे से क़स्बे की आधी से ज़्यादा आबादी पलायन कर चुकी है. यह जगह आदिवासी पड़ाव कम, छावनी ज़्यादा नज़र आती है. यहां सलवाजुडूम के कैंप हैं, कहें कि दड़बाखाना, जिसमें खौफ की चाबुक से हांक कर लाए गए आदिवासियों को ठूंस कर रखा जाता है. जो हमेशा से कुदरत की खुली गोद में सांस लेने के आदी रहे हैं, आज वे बंधक की ज़िंदगी जीने को मजबूर हैं. विडंबना यह है कि डोरनापाल में विस्थापितों के स्कूल टेंटों में चल रहे हैं. स्कूल का परिसर ही बच्चों का घर है, जिसके चारों तरफ़ बूटों की गश्त और हथियारों की नुमाइश चौबीसों घंटे जारी रहती है. इन विस्थापित स्कूलों के लगभग सभी बच्चों की एक जैसी कहानी है. किसी की मां सलवाजुडूम के कैंप में है तो किसी का बाप जान बचाता जंगल–जंगल भाग रहा है. सुरक्षाबलों के हाथों किसी का भाई मारा गया तो किसी की बहन के साथ बलात्कार हुआ. सुरक्षाबलों के लिए मुखबिरी करने के आरोप में माओवादियों ने भी हत्याएं कीं. लेकिन यह भी याद रहे कि उनके खाते में बलात्कार का एक भी इल्ज़ाम नहीं है. सत्तर साल की बुढ़िया के स्तन काट देने या दो साल के नन्हें बच्चे की उंगलियां कचर कर अलग कर देने जैसे वहशियाना जुल्म नहीं हैं. किसी शिक्षक, स्वास्थ्यकर्मी, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, मितानिन के साथ बदसलूकी करने या उनके काम में बाधा पहुंचाने की कोई शिकायत नहीं है.

गोंडीभाषी बच्चों को छत्तीसगढ़ में हिंदी में शिक्षा दी जाती है, जबकि वे छत्तीसगढ़ी भी क़ायदे से समझ–बोल नहीं पाते. गोंडीभाषी शिक्षक बस इक्का–दुक्का हैं. आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों में भी यही हाल है. तो इसमें कैसा अचरज कि आजादी से पहले गोंडी बोलने वाले 80 लाख लोग थे, जो आज सिमट कर 20 लाख रह गए हैं. दूसरी तरफ माओवादियों के नियंत्रण वाले इलाक़ों में आठवीं तक की पढ़ाई का माध्यम गोंडी है. सरकार और मीडिया की कृपा से माओवादियों की हिंसक छवि बनी है, लेकिन वे तो बच्चों को स्कूल भेजने, लोगों को जैविक खाद का इस्तेमाल करने, पानी को उबाल कर पीने जैसी नसीहत भी देते हैं. ऐसी खब़रें कम नहीं, जब उन्होंने दारूबाज या कामचोर शिक्षकों से गांव के प्रतिनिधियों के सामने उठा–बैठक कराई कि वे अपनी आदत से बाज आएंगे. माओवादी इलाकों में महिला दिवस के मौके पर बीते आठ मार्च से महिलाओं के हित–अधिकारों को लेकर सप्ताह भर का उत्सव भी मनाया गया. दूसरी तरफ़ देश की संसद अब तक महिला आरक्षण बिल पास नहीं कर सकी.

छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव जिले से जुड़ा महाराष्ट्र का गढ़चिरौली जिला है. दोनों जिले माओवाद प्रभावित हैं. गढ़चिरौली में तो बस्तर जैसे हालात हैं. तो भी वह पिछले साल मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून) के अमल के मामले में पूरे महाराष्ट्र में अव्वल आया और इसके लिए कलेक्टर को राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल के हाथों सम्मान भी मिला. यह उपलब्धि जिला प्रशासन की मुस्तैदी, ईमानदारी और इच्छाशक्ति से मुमकिन हुई. यह कामयाबी क्या माओवादियों के समर्थन के बग़ैर मुमकिन थी? लेकिन गढ़चिरौली तो बस अपवाद है. माओवाद प्रभावित बाकी जिलों में ऐसे उदाहरण दुर्लभ हैं. जॉब कार्ड बनवाने, काम पाने और फ़िर मज़दूरी के भुगतान में देरी–परेशानी और उसके अमल में घोटाला–गड़बड़ी पूरे देश की आम कहानी है और जो माओवाद प्रभावित इलाकों में और दयनीय है. क्या बेतुकी बात है कि सरकारी राशन गांव के बजाय ब्लॉक मुख्यालय पर मिले और दंतेवाड़ा में यही हो रहा है. माओवाद प्रभावित इलाक़ों में पिछले करीब तीन साल में सड़कों का जाल बना है. इसलिए नहीं कि इससे आदिवासियों का भला होगा, बल्कि इसलिए कि सुरक्षाबलों की गाड़ियों के लिए सहूलियत होगी. इधर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की सेहत हमेशा की तरह बुरी बनी रहती है और ऐसे तमाम इलाके हैं, जहां किसी की हालत बेकाबू हो जाए तो उसे जिला अस्पताल पहुंचाने में हफ्ता–दस दिन लग जाता है. विकास के चेहरे की यह सरसरी झलक है.

झारखंड में काम कर रहे कैथोलिक बिशप चार्ल्स सोरेंग माओवादियों की तरफ़दारी में खुलकर बोलते हैं और उन्हें न्याय का हिमायती मानते हैं. कहते हैं कि झारखंड समेत कई राज्यों के इलाके उन्हीं की बदौलत अपराध, तस्करी और भ्रष्टाचार से मुक्त हो सके. महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों पर रोक लगी. सवाल करते हैं कि सीआरपीएफ़ स्कूल पर कब्जा करे और माओवादी उसे उड़ा दें तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है? इसका यह मतलब नहीं कि ईसाई धर्मगुरु माओवादियों के हिमायती हैं. केरल बिशप कौंसिल इसे उनका निजी विचार मानती है. हालांकि झारखंड में कई कैथोलिक संस्थान विस्थापन, विकास की उल्टी धारा और ऑपरेशन ग्रीन हंट पर भी मुखर होकर सवाल उठा रहे हैं.

भले ही मीडिया के बड़े हिस्से को कम या ग़लत या बिल्कुल सुनाई न दे, लेकिन ऑपरेशन ग्रीन हंट के खिलाफ़ विभिन्न स्तरों पर पूरे देश से आवाजें उठ रही हैं. मानव अधिकारों के पैरोकार संगठन और चुनिंदा बुद्धिजीवी हिम्मत के साथ माओवाद के हौव्वे की हवा निकाल रहे हैं. सही है कि उनके बीच माओवादियों के नज़रिये और तरीक़ों को लेकर मतभेद हैं. और सही यह भी है कि वे इस पर एकराय हैं कि सरकार कॉरपोरेट समूहों के चरणों में कुदरत का बेशकीमती खज़ाना भेंट चढ़ा देने पर आमादा है. उन्हें आबोहवा में ज़हर घोलने की इजाज़त दी जा रही है. आदिवासियों को जल, जंगल और ज़मीन से बेदखल़ किया जा रहा है. उनकी आजीविका के साधनों को छीना जा रहा है. अपनी संस्कृति और परिवेश से काट कर उन्हें विस्थापन की त्रासदी में झोंका जा रहा है. इन आवाज़ों से आजिज़ आकर गृह मंत्रालय ने हाल में फ़रमान जारी किया था कि खब़रदार, अगर ऑपरेशन ग्रीन हंट के खिल़ाफ़ जुबान खोली. ऐसी हिमाकत की तो माओवादियों का साथ देने का आरोप ठोंक कर जेल पहुंचा दिया जाएगा, लेकिन इस धमकी की हवा निकल गई. महाश्वेता देवी अपनी ही जनता के साथ जंग लड़े जाने के सख़्त खिल़ाफ़ रही हैं और उस पर लगातार लिखती–बोलती रही हैं. उन्होंने छूटते ही कहा कि हां, मैं माओवादी हूं. आओ और मुझे गिरफ्तार करो. अरुंधति राय और गौतम नवलखा ने बस्तर के जंगलों में माओवादियों के साथ कुछ दिन गुज़ारे थे. उनके लेखों और बयानों पर भूचाल मचा. छत्तीसगढ़ के पुलिस प्रमुख सह लेखक विश्वरंजन सामाजिक सुरक्षा के नाम पर राज्य में लागू काले कानून के तहत अरुंधति राय पर लगाम कसे जाने की बात करने लगे. गृहमंत्री पी चिदंबरम तो न जाने कब से ऑपरेशन ग्रीन हंट के विरोध में खड़े मानव अधिकारों के हिमायती सामाजिक कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों पर हल्ला बोलते रहे हैं. यहां तक कि उन पर माओवादियों के साथ तालमेल रखने का आरोप भी मढ़ते रहे हैं.

लेकिन इस जुगत से कितनों का मुंह बंद किया जा सकता है. यहां तो लंबी कतार है. कालिन गोंसाल्वेज़ जैसे नामी वकील हैं तो दिल्ली, कोलकाता, बंगलौर समेत विभिन्न उच्च शिक्षा केंद्रों से जुड़े शिक्षक भी हैं. इनमें जेएनयू के उपकुलपति और मशहूर वैज्ञानिक प्रो. यशपाल भी शामिल हैं. बीते 6 अप्रैल को दंतेवाड़ा में सीआरपीएफ की टुकड़ी पर घात लगाकर हुए माओवादी हमले में 76 जवान मारे गए थे. गृह मंत्रालय ने इसकी जांच का जिम्मा बीसीएफ के पूर्व प्रमुख एनई राममोहन को सौंपा और उन्होंने ही माओवाद विरोधी सरकारी अभियान को कठघरे में खड़ा कर दिया. रिटायर्ड आईएएस, बस्तर के कलेक्टर और भारत के अनुसूचित जाति–जनजाति आयोग के अध्यक्ष रहे डॉ. बीडी शर्मा सरकारी जिद़ की बखिया उधेड़ते हुए इस नाइंसाफ़ी को रोकने के लिए राष्ट्रपति से दखल़ देने की गुहार लगा चुके हैं. आदिवासियों के इतिहास, संस्कृति और संघर्षों पर उन्होंने दर्जनों शोधपरक पुस्तिकाएं लिखी हैं, लेकिन सरकार को उन्हें चोर–लुटेरा बताने के लिए प्रदर्शन प्रायोजित करवाने में तनिक शर्म नहीं आई. देखिए, देश को गृह युद्ध से बचाने की सद्बुद्धि सरकार को कब आती है?

feedback@chauthiduniya.com

हक़ से वंचित रहे आदिवासी

सामाजिक समस्या को हथियारों से हल नहीं किया जा सकता. अगर लोगों के खिलाफ़ युद्ध छेड़ा जाता है तो यह दरअसल उन्हें और अधिक वंचित कर देने और माओवादियों की ओर धकेल देने का काम होगा. मैं माओवादियों के हथियारबंद संघर्ष का समर्थन नहीं करता, लेकिन यह सच बरकरार है कि देश में आदिवासी आबादी ऐतिहासिक रूप से शोषित की जाती रही है. बावजूद इसके कि वे प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर इलाकों के वाशिंदा हैं. उन्हें इन संसाधनों का फल कभी हासिल नहीं हो सका. मुझे स्वीकार करना होगा कि यह हालत तब भी रही, जब मैं मुख्यमंत्री था और यही हालत वाममोर्चा शासन में भी बनी रही.

–पूर्व मुख्यमंत्री सिद्धार्थ शंकर रे

जनवरी 1980 में इंदिरा गांधी की केंद्र में वापसी हुई. वीपी इस बार इलाहाबाद सीट से जीतकर लोकसभा पहुंचे. लेकिन केंद्रीय मंत्रिमंडल में उन्हें जगह नहीं मिली.

ग़रीबों के रहनुमा थे वीपी सिंह

जब सामाजिक जीवन विचार केंद्रित, सार्थक परिवर्तन-परिचालित न हो, जनांदोलन रहित हो जाए, ताक़तवर लोगों की सरपरस्ती के तहत ही जीने की मजबूरी हो, लोकतंत्र के विकास के लिए न कोई आकांक्षा हो और न तैयारी, व्यापक असमानता, कुव्यवस्था एवं बेरोज़गारी ही संरचना का चरित्र हो जाए, राजनीति का अकेला अर्थ हो जाए सत्ता के ज़रिए धन का संग्रह, तो वैसे समय में वीपी सिंह जैसे इतिहास पुरुष की याद आनी स्वाभाविक है, जो आज हमारे बीच नहीं हैं.

जन्मदिन पर विशेष

अंग्रेजों का जमाना था. उत्तर प्रदेश में इलाहाबाद तहसील की दो रियासतें थीं, डैया और मांडा. विश्वनाथ प्रताप सिंह का जन्म इसी डैया के राजघराने में 25 जून, 1931 को हुआ था. बचपन का लालन-पालन अपनी मां की गोद में यहीं हुआ, लेकिन अपने मूल पिता के परिवार में बालक विश्वनाथ का रहना पांच वर्ष तक ही हुआ. डैया के बगल की रियासत मांडा के राजा थे राजा बहादुर राम गोपाल सिंह. वह नि:संतान थे. अपनी राज परंपरा चलाने के लिए उन्होंने बालक विश्वनाथ को माता-पिता की सहमति से गोद ले लिया. फिर तो विश्वनाथ ने पीछे नहीं देखा. गंभीरता से पठन-पाठन में जुट गए. परिणामस्वरूप हाईस्कूल तक कई विषयों में उत्कृष्टता मिली. बाद में वह बनारस के उदय प्रताप सिंह कॉलेज में पढ़ने आए. वहां अच्छे छात्रों की पंक्ति में थे विश्वनाथ. प्रिंसिपल ने उन्हें प्रिफेक्ट बनाया. तब तक भारत को आज़ादी मिल चुकी थी. विश्वनाथ की मसें भी भींग रही थीं. विश्वनाथ ने छात्रसंघ गठित करने की मांग रखी. अध्यक्ष पद के लिए प्रिंसिपल का एक लाड़ला छात्र खड़ा हुआ. उसे गुमान था कि वह प्रिंसिपल का उम्मीदवार है. प्रतिरोध व्यवस्था में पक्षपात के ख़िलाफ़ विश्वनाथ के कान खड़े हुए. आजीवन इस्तीफों से मूल्यों को खड़ा करने और गलत का प्रतिरोध करने वाले भावी वी पी सिंह का यही उदय था. बस क्या था, प्रिफेक्ट पद से इस्तीफा दे दिया. यह उनकी ज़िंदगी का पहला इस्तीफा था. समान विचारों के छात्रों ने संघ के अध्यक्ष पद के लिए उन्हें खड़ा कर दिया. युवा कांग्रेस का आग्रह टालकर वह स्वतंत्र उम्मीदवार बने और प्रिंसिपल के उम्मीदवार को हराकर जीत गए. वोट को आकृष्ट करने की क्षमता का यही बुनियादी अनुभव बना वी पी सिंह का. राजनीति इसी अंतराल में उनका विषय बनी. उनके व्यक्तित्व में दो ध्रुव थे. वैज्ञानिक बनने और सामाजिक कार्यों से मान्यता की मंशा थी. चित्रकारी सामाजिक ध्रुव का हिस्सा थी. इन ध्रुवों के बीच कोई महत्वाकांक्षा नहीं थी. इसी के बीच एक ठोस वी पी सिंह का उदय हुआ. 24 साल वर्ष की आयु में वह राजनीति की तरफ़ संयोगवश मुख़ातिब हो गए. यहां भी वोट की राजनीति की कल्पना नहीं थी. 1955 में कांग्रेस के चवन्निया सदस्य बने, 24 साल की उम्र में. कांग्रेस में आने का विचार इतर था, सत्ता में हिस्सेदारी नहीं. अपने इलाक़े के साधारण आदमी की सुनवाई जो नहीं हो रही थी, वही उनकी राजनीति का कालांतर में केंद्र बनी. वी पी सिंह तन-मन से कांग्रेस की राजनीति में आ गए. 1957 में कठौली गांव के एक भूदान शिविर में अपना एकमात्र फार्म लैंड, 200 एकड़ की उपजाऊ और नहर से जुड़ी भूमि, बिल्कुल सड़क के किनारे वाली भूदान में दे दी. तब विनोबा भावे ने कहा था कि राजपुत्र सिद्धार्थ ने त्याग किया तो संसार का कल्याण हुआ. राजपुत्र विश्वनाथ ने आज जो त्याग किया है, उससे भविष्य में भारत का कल्याण होगा. 1969 के विधानसभा चुनाव में वह सोरांवा विधानसभा सीट से जीतकर विधानसभा पहुंच गए. यहीं से उनका राजनीतिक प्रशिक्षण शुरू हुआ. विधायक के रूप में 1974 तक का कार्यकाल बचा था, लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों में उन्हें 1971 का लोकसभा चुनाव फूलपुर क्षेत्र से लड़ना पड़ा. इसमें उन्होंने जनेश्वर मिश्र जैसे तपे-तपाए समाजवादी नेता को पछाड़ा था. वह राजनीति के मानचित्र पर आ गए थे. 10 अक्टूबर, 1976 को इंदिरा गांधी के मंत्रिमंडल में व्यापार के उपमंत्री बना दिए गए. जहां वह दिसंबर 1976 तक रहे. आपातकाल की समाप्ति के बाद जनवरी 1977 में नए चुनाव की घोषणा हुई. उन्हें फूलपुर से चुनाव लड़ना पड़ा. आपातकाल की ज़्यादती का फल उस चुनाव में कांग्रेसियों को भोगना पड़ा. इंदिरा भी हारीं, वीपी भी. सत्ता बदल गई.

केंद्र में पहली बार ग़ैर कांग्रेसी सरकार का आगमन हुआ. कांग्रेस के लोग इंदिरा को छोड़ रहे थे. वीपी ने इंदिरा का साथ न छोड़ने का निर्णय लिया. जनता शासनकाल में इंदिरा गिरफ़्तार हुईं. विरोध में कांग्रेसियों का जेल भरो अभियान शुरू हुआ. वह दिल्ली कोर्ट में पेश हुईं तो उस प्रदर्शन में वीपी भी थे. उन्होंने इलाहाबाद में तीन बार जेल भरो अभियान चलाया. नैनी जेल में बंद किए गए. यह आज़ाद भारत में वीपी की पहली जेल यात्रा थी. जनवरी 1980 में इंदिरा गांधी की केंद्र में वापसी हुई. वीपी इस बार इलाहाबाद सीट से जीतकर लोकसभा पहुंचे, लेकिन केंद्रीय मंत्रिमंडल में उन्हें जगह नहीं मिली. लोकसभा सदस्य बने छह माह भी नहीं हुए थे कि एक दिन इंदिरा गांधी का बुलावा आया और उन्होंने पार्टी प्रमुख के सामने वीपी को बताया कि आप उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं. अपना मंत्रिमंडल बनाइए. वीपी ने इस ज़िम्मेदारी को स्वीकार किया. वह मंत्रिमंडल गठन में गुटों से परे रहे. उन्होंने ख़ुद को छोटा नहीं बनाया, व्यापक राजनीति शुरू की. पहला मुद्दा था दलितों-पिछड़ों का. उन्होंने पिछड़े वर्ग के एक वकील को हाईकोर्ट का जज बनाया. राज्य में पिछड़े वर्गों के लिए मंडल कमीशन की सिफ़ारिशों को लागू किया. फिर आई डकैतों की समस्या. इसके लिए वीपी अपनी कुर्सी तक को जोख़िम में डालने से नहीं चूके. उन्होंने अफसरों को अपना इस्तीफा देने तक की धमकी दी. एक मुठभेड़ में थानेदार, सिपाही मारा गया तो मुख्यमंत्री ख़ुद उन्हें कंधा देने पहुंचे. शहादत की यह इज़्ज़त थी. पुलिस का मनोबल बढ़ा. डकैत घिरने लगे. इससे वीपी को ख़ूब राष्ट्रीय प्रचार और यश मिला. इसी बीच वीपी जिंदवारी क्षेत्र से विधानसभा के लिए भी चुने गए. वीपी के बड़े भाई चंद्रशेखर सिंह एक दिन डकैतों द्वारा ग़लतफहमी में मारे गए. उन्हीं दिनों मुलायम सिंह यादव ने आरोप लागाया कि वीपी के निर्देश पर डकैतों के नाम पर पिछड़े मारे जा रहे हैं. इससे वीपी को बड़ा क्षोभ हुआ. बिना किसी से परामर्श लिए वीपी ने मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया. इस तरह वीपी जून 1980 से जून 1982 तक सिर्फ़ दो साल उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे. वह अब कांग्रेस की राजनीति का अपरिहार्य हिस्सा हो चुके थे. जुलाई 1983 में वह राज्यसभा के सदस्य बने. यहां वह अप्रैल 1988 तक रहे. फिर केंद्र में 29 जनवरी, 1983 से सितंबर 1984 तक वाणिज्य मंत्री रहे. आपूर्ति मंत्रालय का अतिरिक्त प्रभार भी संभाला. सितंबर 1984 में उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष बने. दिसंबर 1984 से जनवरी 1987 तक भारत सरकार के वित्त मंत्री रहे. इंदिरा गांधी की असामयिक मौत के बाद राजीव गांधी प्रधानमंत्री बने. उन्होंने भी वीपी को वित्त मंत्री बनाया. वीपी ने महसूस किया कि इस व्यवस्था में केवल धनपतियों की चलती है. उन्होंने पूंजीवादी, काले धनपतियों और कर चोरों के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल फूंक दिया. वह वित्त से रक्षा मंत्री बना दिए गए. बतौर रक्षा मंत्री उन्होंने बोफोर्स सौदे में दलाली के मद्दे को उठाया और सत्ता के चरित्र का पर्दाफाश कर दिया. तब तक प्रधानमंत्री राजीव गांधी से उनका मतभेद काफी बढ़ चुका था. उन्होंने रक्षा मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया. उन्हें नहीं मालूम था कि जनता उनके नेतृत्व का इंतज़ार कर रही है. मुजफ़्फ़रनगर के किसान सम्मेलन में लाखों की भीड़ को देखकर पता चल गया कि देश की जनता उन्हें अपना नेता मान चुकी है. 19 जुलाई, 1987 को वीपी कांग्रेस से निकाल दिए गए. वीपी ने जनमोर्चा का गठन किया. इसी बीच अमिताभ बच्चन के इस्तीफे से ख़ाली हुई इलाहाबाद सीट से वीपी ने निर्दलीय लड़कर कांग्रेस के सुनील शास्त्री को सवा लाख वोटों के अंतर से हरा दिया. वीपी के प्रयास से व्यापक विपक्षी एकता बनी. सात प्रमुख विपक्षी दलों को मिलाकर एक राष्ट्रीय मोर्चा तैयार हुआ. राजीव सरकार को भ्रष्टाचार, महंगाई समेत कई मुद्दों पर घेरना शुरू हो गया. बोफोर्स मुद्दा अग्रणी बना. लोकसभा चुनाव जनवरी, 1990 में होना चाहिए था, लेकिन राजीव गांधी ने नवंबर, 1989 में ही चुनाव कराने का निर्णय ले लिया. वीपी को पूरे देश में चुनावों का संचालन देखना पड़ा. कोई बड़ा आंदोलन नहीं हुआ, कहीं रक्तपात भी नहीं हुआ. केवल जनता की इच्छा थी कि सत्ता और विकास आम आदमी के दरवाज़े तक जाए. इसलिए जनता ने उस चुनाव में कांग्रेस को सत्ताच्युत कर दिया. राष्ट्रीय मोर्चा पूर्ण बहुमत में आया. वीपी के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार ने दो दिसंबर, 1989 को अपना कार्यभार संभाल लिया. चौधरी देवीलाल उप प्रधानमंत्री बनाए गए. राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार तो बन गई, पर उसमें घटकवाद जारी रहा. मेहम कांड को लेकर देवीलाल नाराज़ रहने लगे तो चंद्रशेखर का भी वीपी से दुराव जारी रहा. फिर भी जिन मुद्दों पर सरकार बनी थी, वीपी ने सब पर अमल किया. सबसे चौंकाने वाली बात उनके द्वारा सात अगस्त, 1990 को मंडल कमीशन की सिफ़ारिशों को लागू करने की घोषणा थी. वीपी का यह निर्णय भारतीय इतिहास में वंचितों के उत्थान के लिए एक मील का पत्थर साबित हुआ.

मंडल कमीशन की सिफारिशें लागू होने से नाराज़ भाजपा ने राम जन्मभूमि मामले को लेकर सरकार पर दबाव बनाना शुरू कर दिया. वीपी ने विवाद को सुलझाने के लिए कई बैठकें बुलाईं, लेकिन नतीजा सिफ़र रहा. आख़िरकार भाजपा ने समर्थन वापस ले लिया. सरकार अल्पमत में आ गई और सात नवंबर, 1990 को वीपी ने प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया. इसी बीच कांग्रेस ने सरकार बनाने के लिए जनता दल से 25 सांसदों को लेकर अलग हुए गुट के नेता चंद्रशेखर को समर्थन देने की घोषणा कर दी. कांग्रेस समेत कुछ क्षेत्रीय पार्टियों के समर्थन से चंद्रशेखर प्रधानमंत्री बन गए. इस्तीफा देने के बाद भी वीपी के क़दम नहीं रुके . वह पूरे देश में घूम-घूमकर जनता के हितों के लिए संघर्ष करते रहे. इस दौरान जनता दल कई बार टूटा. धीरे-धीरे दलगत राजनीति से वीपी का मोहभंग होता गया और जुलाई 1993 में उन्होंने पार्टी संसदीय दल के नेता पद से त्यागपत्र दे दिया. कुछ महीने बाद उन्होंने लोकसभा की सदस्यता भी छोड़ दी. दलगत राजनीति से बाहर आए तो जनचेतना मंच से जनसंघर्ष की शुरुआत की. दिल्ली की 30 हज़ार आबादी वाली वजीरपुर झुग्गी बस्ती को उजाड़ने के लिए सरकार ने बुलडोज़र चलाने की कोशिश की तो वह यह कहते हुए बुलडोज़र के सामने खड़े हो गए कि अगर सरकार सभी अनाधिकृत फार्म हाउसों को भी ढहा दे तो हम इन झुग्गी बस्तियों को उजाड़ने से नहीं रोकेंगे. बाध्य होकर सरकार को अपना निर्णय वापस लेना पड़ा. इस प्रकार झुग्गी झोपड़ी वालों की समस्या को वीपी ने एक राष्ट्रीय परिघटना बना दिया. तब तक वीपी गुर्दे और कैंसर जैसी कई बीमारियों से घिर गए थे. धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिरता गया, पर ज़िंदगी ने हार नहीं मानी. शैय्या पर वह कविताएं लिखते रहे, चित्र बनाते रहे. मौत के नीम अंधेरे में उन्होंने संबंधों, सरोकारों और मुसीबतों पर कविताएं लिखीं. वीपी का जाना हुआ बिल्कुल चुपचाप. 26-27 नवंबर 2008 को पूरा देश मुंबई आतंकी हमले से सहमा था. डॉक्टर दोपहर में रूटीन चेकअप में आए. उन्हें देखते ही वीपी बोल पड़े, डॉक्टर, मुझे आज़ाद कर दो. सचमुच पांच मिनट बाद यानी एक बजकर 55 मिनट पर उनकी धड़कन ठहर गई. आज़ाद हो गए. ज़िंदगी को सलाम करके चले गए. परीक्षित का अंत हो गया. इस प्रकार वीपी जबसे राजनीति में आए, केंद्र में रहे. कांग्रेस की राजनीति में तो एक विश्वासपात्र की तरह रहे ही, उनके चरित्र की छाप बाहर भी फैलती गई. जब भ्रष्टाचार के मुद्दे का शंखनाद किया तो जन-लहर के प्रणेता बन गए. उनका नक्षत्रीय उत्थान हुआ. इसके पहले भ्रष्टाचार, महंगाई और बेरोज़गारी का मुद्दा जयप्रकाश की संपूर्ण क्रांति का कारण बना, जिस पर संपूर्ण भारत आपातकाल की स्मृतियों से एकजुट हुआ. वीपी का मुद्दा भी भ्रष्टाचार था और संस्थागत स्वरूपों का क्षरण. जयप्रकाश की क्रांतिकारी पहल में बहुत से युवा नेता शामिल हुए, पर वे क्रांति के आदर्शों पर क़ायम न रहकर, सत्ताकामिता के शिकार हो गए. वीपी की विद्रोही जमात में उस समय की विपक्षी राजनीति और असंतुष्ट नेता थे, जो कुचक्रों के चलते मुख्यधारा से छिटकते चले गए. वीपी ने युवा वर्ग को ही नहीं, संपूर्ण जनता को गोलबंद किया. ऐसी जन लहर कभी भारतीय राजनीति में नहीं आई थी, जबकि मुद्दा और व्यक्तित्व दोनों जनता की नज़र में प्रधान होकर भविष्य का सपना बन जाए. व्यापक लोकतंत्रीय जनहित में इस सपने को भुनाना नहीं, उतारना ही वीपी की असली छाप को समझने का सबब है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

मेरी दुनिया.... ख़तरनाक हवाई सफ़र ...धीर

राजपूतों एवं भूमिहारों के वोटों को लेकर अनिश्चितता बनी हुई है. ब्राह्मण मतदाता भी नया ठिकाना खोज रहे हैं.

बिहार की सियासत पर माया की छाया

सरोज सिंह

यूपी हुई हमारी, अब दिल्ली की बारी है और बहन जी संघर्ष करो, हम तुम्हारे साथ हैं जैसे नारों से पटना का गांधी मैदान बीते 15 जून को गूंजता रहा. चिलचिलाती धूप में नारा लगाती भीड़ को मायावती ने भी निराश नहीं किया. उन्होंने ऐलान किया कि उत्तर प्रदेश की तर्ज पर पूरे देश में बसपा जल्द ही जनता के सहयोग से एक बड़ी ताकत बनकर उभरेगी. बिहार की सभी 243 सीटों पर चुनाव लड़ने की घोषणा करके मायावती ने राज्य की राजनीति में उथल–पुथल मचाने का संकेत भी दे दिया. उन्होंने साफ कहा कि न केवल दलित एवं मुसलमान, बल्कि सभी वर्गों को साथ लेकर गरीबों की सरकार बनाई जाएगी.

आंकड़ों की बात करें तो बिहार में बसपा का जनाधार धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है. लोकसभा चुनाव में लगभग पांच फीसदी वोट बसपा को मिले थे. राज्य में नवंबर 2005 में हुए चुनाव में पार्टी ने चार सीटों पर कब्जा जमाया था. उक्त सभी सीटें उत्तर प्रदेश की सीमा के आसपास की थीं. इसके बाद 2009 में हुए उपचुनाव में बसपा ने चंपारण में एक सीट जीतकर सबको चौंका दिया. बसपा की इस जीत ने साबित कर दिया कि धीरे–धीरे ही सही, पार्टी जमीनी स्तर पर संगठन को मजबूत करने में कामयाब हो रही है. दरअसल बिहार में अभी जो राजनीतिक हालात हैं, उन्हें देखते हुए मायावती इस तरह का जाल फैलाना चाहती हैं कि अगली सरकार के गठन में बसपा की निर्णायक भूमिका हो. मायावती विधायकों की ऐसी संख्या चाहती हैं, जिसके बिना बिहार में किसी की सरकार बन ही न पाए. पूरा ताना–बाना इसी के आसपास खींचा जा रहा है. सवर्ण मतदाताओं पर खास नजर रखी जा रही है. इसके अलावा जदयू, भाजपा एवं राजद से नाराज चल रहे नेताओं से भी पार्टी के कई नेता संपर्क में हैं. टिकट बंटवारे के समय भड़कने वाले दूसरे दलों के नेताओं को भी बसपा खास तवज्जो देगी. पार्टी सूत्रों पर भरोसा करें तो भले ही 243 सीटों पर चुनाव लड़ने की घोषणा की गई हो, पर मोटे तौर पचास सीटों पर खास ध्यान दिया जाएगा. पार्टी सामाजिक एवं राजनीतिक स्थितियों का आकलन करके इन सीटों पर टिकटों का बंटवारा करेगी और उक्त सीटें जीतने के लिए अपनी पूरी ताकत झोंक देगी. मायावती यह चाहती हैं कि कम से कम दो दर्जन विधायकों की ताकत नई विधानसभा में बसपा के पास हो. पार्टी यह मानकर चल रही है कि राज्य के जो हालात हैं, उनमें किसी भी दल को बहुमत मिलने की संभावना कम है. ऐसे में त्रिशंकु विधानसभा में बसपा के दो दर्जन विधायक सरकार गठन में निर्णायक भूमिका में होंगे और मायावती अपनी शर्तों पर सरकार बनवा पाने में सफल होंगी. बसपा ने यह उम्मीद यूं ही नहीं पाल रखी है. पार्टी ने जमीनी स्तर पर जो सर्वे किया है, उसका निष्कर्ष यह है

कि अगड़ी जातियों में नीतीश कुमार के प्रति नाराजगी लगातार बढ़ती जा रही है. खासकर राजपूतों एवं भूमिहारों के वोटों को लेकर अनिश्चितता बनी हुई है. ब्राह्मण मतदाता भी नया ठिकाना खोज रहे हैं. ऐसे में अगर बसपा सही तरीके से इन मतदाताओं तक पहुंच गई तो बिहार के चुनावी परिणाम चौंकाने वाले हो सकते हैं. पटना में मायावती ने अपने नेताओं को यही मंत्र दिया. मायावती ने साफ कहा कि बसपा की ताकत नए इलाकों में फैलानी है और इसके लिए न केवल दलित एवं मुसलमान, बल्कि सभी जातियों में पैठ बनानी होगी. बिहार में दलितों की 22 जातियों में पासवान को छोड़कर अन्य सभी में कुछ न कुछ बसपा का जनाधार है. इन दलितों में भी पार्टी अपनी पूरी ताकत लगाने की तैयारी में है. न केवल बिहार विधानसभा चुनाव, बल्कि 2014 का लोकसभा चुनाव भी बसपा के एजेंडे में है. मायावती ने अपने कार्यकर्ताओं को यह भी संदेश दिया कि दिल्ली में जब तक पूंजीपतियों की सरकार रहेगी, तब तक दलितों का कल्याण नहीं होगा. दलितों के सपने साकार करने के लिए दिल्ली में बसपा की सरकार जरूरी है. मायावती ने उत्तर पूर्व के राज्यों पर भी पकड़ बनाने का आह्वान कार्यकर्ताओं से किया. उनकी राय थी कि इन इलाकों के हालात खराब होते जा रहे हैं और बसपा ही ऐसी पार्टी है, जो वहां के लोगों के दर्द को दूर कर सकती है. मायावती ने अपने समर्थकों को आश्वस्त किया

> राज्यसभा चुनाव में बसपा ने सभी दलों को बेचैन कर दिया. अब बिहार के चुनाव में तथाकथित बड़े नेताओं को भी बसपा की ताकत का एहसास हो जाएगा. रामचंद्र यादव की बातों पर भरोसा करें तो जल्द ही कई बड़े नेता बसपा का दामन थाम सकते हैं.

कि वह बिहार में अब ज्यादा समय देंगी. उन्होंने कहा कि जहां भी दलितों एवं गरीबों पर जुल्म होगा, वह वहां मौजूद रहेंगी. उत्तर प्रदेश का उदाहरण देते हुए मायावती ने कहा कि वहां बसपा सरकार ने विकास के इतने काम कर दिए हैं, जिसकी कल्पना तक विरोधियों ने नहीं की होगी. बसपा विधायक दल के नेता रामचंद्र यादव कहते हैं कि बसपा का हाथी सही रास्ते पर है और मायावती को दिल्ली की गद्दी पर बैठाने के लिए पार्टी का एक–एक कार्यकर्ता अपना सब कुछ कुर्बान कर देगा. राज्यसभा चुनाव में बसपा ने सभी दलों को बेचैन कर दिया. अब बिहार के चुनाव में तथाकथित बड़े नेताओं को भी बसपा की ताकत का एहसास हो जाएगा. रामचंद्र यादव की बातों पर भरोसा करें तो जल्द ही कई बड़े नेता बसपा का दामन थाम सकते हैं. उन्होंने कहा कि जो नेता बसपा की नीतियों को आगे बढ़ाने वाला होगा, उसे ही पार्टी में जगह दी जाएगी. कुल मिलाकर यह बात कही जा सकती है कि बसपा इस बार के चुनाव में काफी गंभीरता से भाग लेगी और यह साबित करने की कोशिश करेगी कि कोई भी दल उसे हल्के में न ले. पार्टी ने अपना चुनावी लक्ष्य एवं खाका तैयार कर लिया है और मायावती के निर्देश के बाद राज्य के नेताओं ने नए उत्साह के साथ चुनावी बिगुल फूंक दिया है.

feedback@chauthiduniya.com

e देश का पहला इंटरनेट टीवी

तीन महीने में रचा इतिहास

- हिन्दी की सबसे पॉपुलर वेबसाइट
- हर महीने 12,00,000 से ज़्यादा पाठक
- हर दिन 40,000 से ज़्यादा पाठक
- स्पेशल प्रोग्राम-भारत का राजनीतिक इतिहास
- समाचार-राजनीति, खेल, पर्यावरण, मनोरंजन
- संगीत और फ़िल्मों पर विशेष कार्यक्रम
- साई की महिमा

www.chauthiduniya.tv

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301

बारिश या खेती के लिहाज़ से व्यस्त मौसम में ग्रामीण इलाक़ों में भी ऊंची मज़दूरी वाले रोज़गार के अवसर उपलब्ध हो जाते हैं.

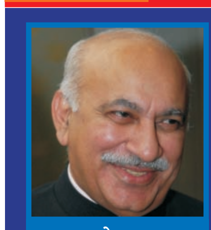

एम जे अकबर

भोपाल का फ़ैसला राजनीतिक-न्यायिक-सामाजिक धोखा

संशयवादिता कभी अतार्किक नहीं होती. कुतर्क, जो अक्सर ग़लत होता है और कभी-कभी सही भी होता है, कभी सोच तो कभी हृदयगत भावनाओं या फिर कभी अंतरात्मा से निकली आवाज़ पर आधारित होता है. निराशावादियों का नैतिकता से कोई ख़ास वास्ता नहीं होता. आंकड़ों के बजाय वे आंखों देखे सत्य को ज़्यादा मानते हैं. संशयवादिता के मामले में अपनी दिल्ली का कोई जवाब नहीं. सच्चाई तो यह है कि इसने संशयवादिता के नए मापदंड खड़े कर दिए हैं, जिनके आधार में चार मूलभूत बातें हैं. पहली यह कि आम लोगों की स्मरण शक्ति बहुत छोटी होती है और उनका गुस्सा बुदबुदाने के स्तर से कभी ऊंचा नहीं उठता. दूसरी यह कि मीडिया को ज़रूरत के हिसाब से मैनेज किया जा सकता है. तीसरी यह कि लोगों की किसी भी बड़ी मांग को छोटे-छोटे टुकड़ों में बांटकर निस्तेज किया जा सकता है और चौथी बात यह कि स्वार्थी तत्वों द्वारा निजी स्वार्थों को साधने का क्रम पर्दे के पीछे से अनवरत जारी रहता है.

भोपाल गैस लीक मामले में ग्रीन ट्रिब्यूनल के गठन का जयराम रमेश का वायदा सरकारी बेहयापन का सबसे सटीक उदाहरण है, जिसे पाखंड के लबादे में ढंक कर पेश किया गया है. पिछले 26 सालों में ऐसे किसी ट्रिब्यूनल का गठन क्यों नहीं किया गया, जबकि गैस लीक के चलते हुई मौतें, हमेशा के लिए अपाहिज या अंधे हो गए लोग और अपनी माताओं के पेट में पल रहे बच्चे भी चिल्ला-चिल्ला कर हमें याद दिला रहे थे कि न्याय की ज़रूरत है! या फिर कहीं यह ट्रिब्यूनल ऐसे ही किसी रासायनिक गैस की लीक से भोपाल में होने वाले अगले नरसंहार के लिए तो नहीं गठित किया जा रहा? वारेन एंडरसन के ख़िलाफ़ केस बंद न होने का दावा कर करोड़ों लोगों को मूर्ख बनाने वाले यह वीरप्पा मोइली कौन हैं? वह इस केस को थोड़ा और लंबा खिंचने के लिए छोड़ क्यों नहीं देते, ताकि अल्लाह खुद भोपाल के इस कसाई की फाइल बंद कर दे. मंत्रियों के एक कार्यदल का गठन ज़रूर किया गया है, लेकिन इसका मक़सद सिर्फ़ एक है, मामले को फिर से ठंडे बस्ते में डालना.

भोपाल मामले का निर्णय 7 जून, 2010 को नहीं हुआ, इसका फ़ैसला तो दिसंबर, 1984 में हुए हादसे के चार दिनों बाद ही हो गया था, जब एंडरसन को चोरी-छुपे राज्य सरकार के एक विमान में बैठा कर पहले भोपाल से बाहर और फिर देश से भी बाहर अमेरिका भेज दिया गया था. तबसे लेकर अब तक हम न्याय के नाम पर खेले जा रहे इस गंदे खेल को अपनी आंखों से देख रहे हैं, जिसमें सरकार, पुलिस और सुप्रीम कोर्ट सहित पूरा न्यायिक तंत्र शामिल है. इस खेल में सुप्रीम कोर्ट का शामिल होना सबसे ज़्यादा चौंकाता है, क्योंकि किसी राजनीतिज्ञ या पुलिस अधिकारी के मुक़ाबले एएम अहमदी जैसे मुख्य न्यायाधीश से हम ज़्यादा पारदर्शी आचरण की अपेक्षा रखते हैं.

चीफ जुडिशियल मजिस्ट्रेट मोहन तिवारी के फ़ैसले ने केवल एक अच्छा काम किया है. आरोपियों के ख़िलाफ़ उनके सहृदयतापूर्ण फ़ैसले ने लंबे समय से दबे आक्रोश के ज्वार को फिर से हवा दे दी है. आक्रोश का यह लावा कई दरारों से बाहर निकल रहा है और कई पर्दों में छुपे उस मुखौटे को जला रहा है, जिसने एक पूरी पीढ़ी को धोख़े में रखा है. पुरानी यादें फिर से ताज़ा हुईं तो उस समय के कई अधिकारियों ने इसका ख़ुलासा किया कि किस तरह हादसे के बाद बनी सरकारों ने न्यायिक प्रक्रिया को धीमा और एंडरसन को भारत प्रत्यर्पित करने की संभावनाओं को कमज़ोर करने के लिए अपनी पूरी ताक़त लगा दी. इनमें अधिकतर अधिकारी ऐसे हैं, जिन्हें इस बात का अफ़सोस है कि उनकी चुप्पी को भलीभांति पुरस्कृत नहीं किया गया. यूनियन कार्बाइड और उसके सहयोगियों, जिनमें निश्चित रूप से भारतीय भी शामिल हैं, इस झूठ की बिना पर बचते रहे हैं कि हादसे में उनकी कोई भूमिका नहीं थी, क्योंकि यह प्लांट भारत द्वारा बनाया गया था और भारतीयों द्वारा ही संचालित होता था. सच्चाई यह है कि यह प्लांट अमेरिकी डिजाइन पर बना था और इसका प्रबंधन एक ऐसे अमेरिकी के हाथों में था, जो भारतीय अदालतों से ख़ौफ़जदा था.

देश की राजनीतिक व्यवस्था ने यह मान लिया कि 7 जून का दिन कैलेंडर की अन्य तारीख़ों की तरह ही केवल एक तारीख़ बनकर रह जाएगा. उसे यह भी लगा कि थोड़ा-बहुत शोरशराबा भी हुआ तो यह सिर्फ़ अरण्य रोदन ही होगा. अदालत को एक क़िले में तब्दील कर दिया गया और अपीलकर्ताओं के साथ-साथ पीड़ितों एवं मीडिया के लिए भी इसके दरवाजे बंद कर दिए गए. मामले की अदालती कार्रवाई की जो तस्वीर मेरे जेहन में क़ैद है, वह टेलीविजन की देन है. मैं इस तस्वीर में एक पुलिसवाले को दो पीड़ित महिलाओं पर हंसते हुए देखता हूं. इन महिलाओं के चेहरों पर आते-जाते भावों को देखकर मेरा दिल कौंध उठता है. इन भावों में उस व्यवस्था के प्रति गहरी निराशा और आक्रोश झलकता है, जिसने न केवल खुद उनकी ज़िंदगियों को लील लिया, बल्कि हादसे का शिकार हुए उनके बच्चों की मौत में भी उनके साथ धोख़ा कर रही है.

मेरा भरोसा कीजिए कि यदि उस भयावह रात को भोपाल में आम लोगों की जगह राजनीतिज्ञों या उनके दूर के रिश्तेदारों या फिर धनाढ्य लोगों की मौत हुई होती तो एंडरसन आज भी भारत की किसी जेल में सड़ रहा होता. अमेरिका या यूनियन कार्बाइड या फिर प्रभावशाली लोगों की उसकी मित्रमंडली भी उसका बचाव नहीं कर पाती. लेकिन भोपाल के इस भयावह नरसंहार का शिकार केवल ग़रीब लोग ही हुए थे. ग़रीब तबके के लोगों को हम ऐसी चल संपत्ति के रूप में देखते हैं, जिनके न होने से भी आर्थिक परिदृश्य पर कोई ख़ास असर नहीं पड़ने वाला, क्योंकि वे आसानी से उपलब्ध हैं. मांग से कहीं ज़्यादा उनकी आपूर्ति संभव है. इस नज़रिये से देखें तो भोपाल वर्ग संघर्ष का सटीक उदाहरण है.

क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा का प्रशासन भी इस मामले में कोई सहानुभूतिपूर्ण सलाह देने से खुद को रोक नहीं पाता, लेकिन हमारे अपने प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के पास कहने को कुछ नहीं है? शायद नहीं, क्योंकि हम तो ऐसी बातों पर आश्चर्य करना भी अब भूल चुके हैं. यह भी हो सकता है कि प्रधानमंत्री को लगा हो कि वह बोलें भी तो उनकी बातों में दोहराव के सिवा और कुछ नहीं होगा. मोटे तौर पर देखें तो दिल्ली से लेकर वाशिंगटन तक से संदेश एक ही है, वह भी बिल्कुल स्पष्ट कि मरने वालों को भूल जाओ, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दौर में जीना सीखो.

बराक ओबामा राष्ट्रपति इसलिए नहीं चुने गए थे कि उन्हें भारत के पीड़ितों को न्याय दिलाना था. वह अमेरिकी हितों की रक्षा के लिए व्हाइट हाउस में बैठे हैं और उनका पहला मक़सद अमेरिकी विदेश नीति की उसी टू-लॉज थ्योरी की रक्षा करना है, जिसे युद्धकाल के साथ-साथ शांति के दिनों में भी एक जैसी होशियारी से इस्तेमाल किया जाता है. मेक्सिको की खाड़ी में एक तेल खदान में विस्फोट हुआ और 11 अमेरिकी मज़दूरों की मौत हो गई. अमेरिका ने इसके एवज में भारत पेट्रोलियम से 1.5 मिलियन डॉलर हर्ज़ाने की मांग की. भोपाल हादसे में बीस हज़ार के करीब मौतें हुईं और पचास हज़ार से ज़्यादा लोग इससे प्रभावित हुए और हर्ज़ाने के रूप में मिली कुल राशि है केवल 470 मिलियन डॉलर. अपनी गणितीय योग्यता का इस्तेमाल कीजिए. तेल के बिखराव के लिए भारत पेट्रोलियम को ज़िम्मेदार मानते हुए ओबामा ने उस पर करोड़ों मिलियन डॉलर का जुर्माना लगाने का वादा किया था. और हमारे मजिस्ट्रेट मोहन तिवारी को इस नरसंहार के एवज में यूनियन कार्बाइड से केवल पांच लाख रुपये जुर्माना चाहिए.

अलास्का क्षेत्र में तेल के फैलाव के बाद एक्जॉन को पांच बिलियन डॉलर का जुर्माना भरना पड़ा था. इससे प्रभावित हुए हर समुद्री ऊदबिलाव (सी-ऑटर) को पहले जैसी अवस्था में लाने के लिए औसतन चालीस हज़ार डॉलर ख़र्च किए गए थे. भोपाल हादसे के हर पीड़ित को इसके मुक़ाबले दो सौ डॉलर से ही संतोष करना होगा.

गणित का ज़्यादा इस्तेमाल करने की आदत छोड़ दीजिए, कहीं यह आपको भी संशयवादी बनाकर न छोड़ दे.

feedback@chauthiduniya.com

मनरेगा : अधिकारियों की ज़िम्मेदारी तय हो

डॉ. सौमित्र मोहन

महात्मा गांधी नेशनल रूरल इंप्लॉयमेंट गारंटी योजना में सौ मानव श्रम दिवसों की सीलिंग में बदलाव किए जाने का फ़ैसला दूरगामी असर वाला होगा और इसके कई फ़ायदे हो सकते हैं. मज़दूरों को यदि यह लगे कि गांव में रहकर भी रोज़गार के अवसर मिल सकते हैं तो उन्हें इसके लिए शहर जाने की ज़रूरत कम महसूस होगी. इससे गांव से शहर की ओर हो रहे पलायन पर लगाम लगेगी तो शहरों की आधारभूत संरचनाओं और सुविधाओं पर पड़ने वाले दबाव में भी कमी आएगी. शहरों में रहने वाले मज़दूरों के लिए रोज़गार के अवसरों में वृद्धि होगी. शहरों में रोज़गार के लिए मची धमाचौकड़ी में कमी आएगी तो इससे शहरी मज़दूरों को मिलने वाली मज़दूरी के स्तर में भी सुधार होगा. यदि एक बार ऐसा हो गया तो सरकार को शायद शहरी मज़दूरों के लिए इंप्लॉयमेंट गारंटी प्रोग्राम जैसी योजना चलाने की ज़रूरत ही न रहे.

मनरेगा का उद्देश्य केवल ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराकर गांवों से शहरों की ओर हो रहे पलायन पर रोक लगाना ही नहीं है, बल्कि दूरदराज के क्षेत्रों में परिसंपत्ति का निर्माण करना भी है. इस नज़रिये से देखें तो सरकार को बाज़ार के अनुरूप न्यूनतम मज़दूरी में लगातार बदलाव करना होगा. इससे ग्रामीण मज़दूर शहरों में उपलब्ध ज़्यादा मज़दूरी वाले रोज़गार के अवसरों की ओर कम आकर्षित होंगे. यदि ऐसा नहीं होता है तो लोग गांव में रहकर मनरेगा के लिए काम करने को तैयार नहीं होंगे और ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना के निर्माण एवं विकास की हमारी हसरत भी धरी की धरी रह जाएगी. कई लोगों का मानना है कि चूंकि मनरेगा एक मांग केंद्रित योजना है, लोगों को मज़दूरी की सरकारी दरों पर काम करने के लिए तैयार होना चाहिए. इनका मानना है कि मज़दूरी की उक्त दर यह ध्यान में रखकर निर्धारित की गई है कि इससे एक घर की रोज़ाना की आर्थिक ज़रूरतें पूरी हो सकें. फिर भी यदि मज़दूरों को ऊंची दरों पर रोज़गार के अवसर मिल रहे हैं तो उन्हें इसे स्वीकार करना चाहिए. इससे सरकारी धन की बचत होगी, जिसे मनरेगा जैसी दूसरी जनकल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में बेहतर तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है.

बारिश या खेती के लिहाज़ से व्यस्त मौसम में ग्रामीण इलाक़ों में भी ऊंची मज़दूरी वाले रोज़गार के अवसर उपलब्ध हो जाते हैं. इससे मनरेगा के अंतर्गत काम करने के लिए उपलब्ध मज़दूरों की संख्या में कमी आती है और सरकारी धन का पूरा इस्तेमाल नहीं हो पाता. फिर भी हमें यह ज़रूर मानना चाहिए कि मनरेगा की सफलता या विफलता का पैमाना सरकारी धन का इस्तेमाल नहीं होना चाहिए. योजना के अंतर्गत आवंटित राशि के कम इस्तेमाल का यह कारण भी तो हो सकता है कि उस इलाक़े में रोज़गार के ऐसे अवसरों की मांग कम हो. यह वास्तव में विकास के बढ़ते स्तर का एक सूचक भी है, क्योंकि इसका मतलब यह है कि लोगों को कहीं और बेहतर मज़दूरी वाले रोज़गार के अवसर मिल रहे हैं और जीवनयापन के लिए सरकारी योजनाओं पर उनकी निर्भरता भी कम है. हैरानी तब होती है, जब ऐसे इलाक़ों में भी मनरेगा के अंतर्गत काम मांगने वाले लोगों की संख्या कम देखने को मिलती है, जहां ग़रीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों की संख्या अपेक्षाकृत ज़्यादा है. इससे भी ज़्यादा आश्चर्य तब होता है, जब ऐसे लोग घरों में निठल्ले बैठे रहते हैं, जबकि मनरेगा के अंतर्गत उनके लिए काम उपलब्ध रहता है, जिससे वे न केवल कमाई कर सकते हैं, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में आधारिक संरचना का निर्माण भी संभव हो सकता है और दूरदराज के इलाक़ों में लोगों के जीवन स्तर में सुधार आ सकता है. इस तथ्य को ध्यान में रखें तो स्पष्ट हो जाता है कि ज़मीनी स्तर पर योजना के बारे में जागरूकता फैलाने के पर्याप्त प्रयास नहीं किए गए हैं. ऐसा महसूस किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्र के अधिकांश लोगों को अभी भी यह नहीं पता कि मनरेगा के अंतर्गत काम की मांग करना उनका अधिकार है. उन्हें यह भी नहीं पता कि काम मांगे जाने के पंद्रह दिनों के भीतर यदि क्रियान्वयन के लिए ज़िम्मेदार एजेंसी उन्हें रोज़गार के अवसर उपलब्ध नहीं करा पाती है तो वे बेरोज़गारी भत्ता पाने के हक़दार हैं. निराशाजनक बात तो यह है कि योजना के अंतर्गत सूचना, शिक्षा एवं जागरूकता जैसे कार्यक्रमों के लिए आवंटित राशि का इस्तेमाल भी विरले ही हो पाता है.

देश के किसी भी इलाक़े में बेरोज़गारी भत्ते के मद में अदा की गई राशि योजना मद में ख़र्च की गई कुल राशि की तुलना में नगण्य ही है. इसका मतलब यह है कि क्रियान्वयन एजेंसियां लोगों को पंद्रह दिन की समय सीमा के अंदर रोज़गार के अवसर उपलब्ध करा रही हैं, लेकिन यह सच्चाई नहीं है. वास्तविकता यह है कि क्रियान्वयन के लिए ज़िम्मेदार एजेंसियां काम की मांग करने पर लोगों को हस्ताक्षरित रसीद नहीं देतीं. इससे एक तो तय समय सीमा के अंदर रोज़गार के अवसर उपलब्ध न करा पाने की उनकी नाकामी छुपी रह जाती है और फिर बेरोज़गारी भत्ता भी नहीं देना पड़ता. वैसे भी बेरोजगारी भत्ते के भुगतान के लिए राज्य सरकार ज़िम्मेदार होती है. यह विफलता सामने आने पर संबद्ध अधिकारियों से जवाब-तलब किया जा सकता है और उनके ख़िलाफ़ कार्रवाई की जा सकती है. इसीलिए क्रियान्वयन एजेंसियां बेरोज़गारी भत्ते के भुगतान से बचने की कोशिश में लगी रहती हैं. कई ऐसे उदाहरण देखने को मिले हैं, जब एजेंसियां पंद्रह दिनों के अंदर रोज़गार के अवसर उपलब्ध करा पाने में नाकाम रही हैं, जबकि यह मनरेगा के आधारभूत लक्ष्यों में शामिल है. इतना ही नहीं, अब तक किसी भी ज़िम्मेदार अधिकारी के ख़िलाफ़ इस विफलता के लिए कार्रवाई नहीं की गई है, जबकि योजना के अंतर्गत इसके लिए स्पष्ट प्रावधान मौजूद हैं.

(लेखक पश्चिम बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से कोई संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

चिंता का विषय

आवरण कथा- ख़तरे में वायुसेना (14-20 जून) पढ़ी. विषय बहुत गंभीर है और उतनी ही गंभीरता से लिखा भी गया है. यह निश्चित रूप से चिंतनीय बात है कि नक्सलियों के सफ़ाए की योजना तो बनाई जा रही है, लेकिन वायुसेना का पश्चिम बंगाल स्थित कलाईकुंडा एयरबेस ख़तरे में है. सरकार और सेना को इस ओर जल्द से जल्द ध्यान देना चाहिए.

-ज्ञान सिंह, वाराणसी, *उत्तर प्रदेश.*

यह जानकर चिंता हुई कि एक ओर सरकार नक्सलियों से मुक़ाबले के लिए सेना के इस्तेमाल पर विचार कर रही है, वहीं दूसरी ओर नक्सली वायुसेना के एयरबेसों पर घात लगाए बैठे हैं. कलाईकुंडा एयरबेस पर मंडरा रहे ख़तरे से आगाह करके आपने सही किया. सरकार को इस दिशा में शीघ्र ही कोई ठोस कदम उठाना चाहिए.

-विपिन मुखर्जी, *कोलकाता, पश्चिम बंगाल.*

फांसी और राजनीति

सियासत की फांस में फांसी आलेख कई सवाल उठाता है. देश के दुश्मन जेलों में आराम फरमा रहे हैं और सरकार एवं राजनीतिक दलों को सियासी नफ़ा-नुकसान की चिंता है. जिन्हें उच्च अदालत ने फांसी की सज़ा सुना दी है, उन्हें अब उनके अंजाम तक क्यों नहीं पहुंचाया जा रहा? ऐसे तो अपराधियों और देशद्रोहियों के हौसले बढ़ते रहेंगे. आख़िर इस तरह की दोहरी राजनीति कब तक चलती रहेगी?

-डॉ. रवीश साहू, *कानपुर, उत्तर प्रदेश.*

सुसभ्यता ज़रूरी

राष्ट्रमंडल खेल तो संयोग की बात है, वैसे भी जगह-जगह गंदगी करना किसी भी सभ्य शहरी को शोभा नहीं देता. दिल्ली तो राष्ट्रीय राजधानी है, यहां के लोगों के लिए इस तरह की जागरूकता और भी ज़रूरी है. राष्ट्रमंडल खेलों के अवसर पर अनेक देशों के नागरिक, अधिकारी और अति विशिष्ट लोग दिल्ली आएंगे. ऐसे में ज़रूरी है कि हमारे द्वारा ऐसा कुछ न हो, जो राष्ट्रीय राजधानी की छवि को बट्टा लगाए. इस बात का हमें विशेष रूप से ध्यान रखना है.

-रश्मि रायजादा, *ई-मेल से.*

जॉर्ज हीरो हैं, निस्संदेह!

चौथी दुनिया में एक बार फिर जॉर्ज साहब के बारे में पढ़ा. उनकी मौजूदा हालत पर सिर्फ़ हम सब दुखी हो सकते हैं, कर कुछ नहीं सकते और यह हमारे लिए अफ़सोस की बात भी है. व्यक्ति कितना भी बड़ा क्यों न हो, वक़्त की बेरहम मार से उसे कोई नहीं बचा सकता, यह सच्चाई एक बार फिर हमारे सामने है. दूसरों के हक़ों की लड़ाई लड़ने वाला आज कितना असहाय है, यह जान-सुनकर मन में एकबारगी विधाता के प्रति भी शिकायत पैदा हो जाती है. बावजूद इसके आपका कहना अक्षरशः सही है कि जॉर्ज हमेशा हीरो रहेंगे.

-रविशंकर सिंह, *छपरा, बिहार.*

अमेरिकी मुस्लिमों की समस्या

राफिया ज़क़ारिया का आलेख नेतृत्वविहीन अमेरिकी मुस्लिम समुदाय पढ़कर अच्छा लगा. लेखक ने 9/11 के हमले के बाद अमेरिकी समाज में मुसलमानों की समस्याओं का सटीक चित्रण किया है, लेकिन जकारिया यह बताना भूल गईं कि केवल अमेरिका ही नहीं, पूरी दुनिया में क़मोबेश यही हाल है. हर जगह उन्हें संदेह की नज़रों से देखा जाता है. लोग यह समझने को तैयार नहीं कि हर मुसलमान आतंकवादी नहीं है. कुछ शरारती तत्वों की कारगुज़ारियों का दंड इस्लाम धर्म को मानने वाले हर शख़्स को भोगना पड़ रहा है. सच्चाई यह है कि अधिकांश मुसलमान आतंकियों की विचारधारा से इत्तेफ़ाक़ नहीं रखते, लेकिन इसकी चिंता न तो इस्लाम के तथाकथित ठेकेदारों को है और न ही अन्य धर्मावलंबी इसे मानने को तैयार हैं.

-जुबैर खान, *सागर, मध्य प्रदेश.*

लाजवाब चौथी दुनिया

चौथी दुनिया में प्रकाशित शाहरुख ख़ान-आईपीएल एवं रंगनाथ मिश्र आयोग वाले आलेख मुझे काफी पसंद आए. मैंने आपकी वेबसाइट भी देखी. अब मैं हर सप्ताह चौथी दुनिया ज़रूर पढ़ता हूं.

-सत्येंद्र, *ई-मेल से.*

यह पहला अखबार है, जिसने राजनीतिक गलियारे में हंगामा मचा कर रख दिया. मेरी आपसे गुजारिश है कि एक बार बिहार की दशा को भी उजागर करें.

-अनिल कुमार शुक्ला, *ई-मेल से.*

बदलाव लाना है

इस देश में बहुत ज्यादा जंगलराज है. आप और हम सब मिलकर इस जंगलराज को लोकराज में बदल सकते हैं. आइए, बदलाव की ओर अपने कदम बढ़ाएं.

-सुनिधि कालरा, *ई-मेल से.*

अन्य प्रदेशों की ख़बरें भी हों

मैं चौथी दुनिया का नियमित पाठक हूं. आपके अख़बार में प्रकाशित सभी लेख पठनीय होते हैं. मुझे आपसे यह शिकायत है कि अख़बार में जितना स्थान उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश को मिलता है, उतना अन्य राज्यों को नहीं. उम्मीद करता हूं कि अगले अंकों में इस बात का ध्यान रखा जाएगा.

-कमलजीत सिंह, *जालंधर, पंजाब.*

आप अपने स्वतंत्र विचार तथा प्रतिक्रियाएं हमें इसी पते पर भेजें. संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर-11 नोएडा, (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

उर्दू चौथी दुनिया निकालने का मक़सद

कई सवाल हैं, जिनका उत्तर शायद वक़्त के पास है. अगर सारे उत्तर वक़्त के पास हैं तो हमारे पास क्या है? हमारे पास है कोशिश और ईमानदार कोशिश. सवाल इसलिए खड़े हुए, क्योंकि हमने ऐसा काम करना चाहा, जो आम तौर पर लोग करने से हिचकते हैं. सहाराश्री सुब्रत राय ने उर्दू अख़बार निकालने की हिम्मत की, यह जानते हुए कि उर्दू में अख़बार निकालना फ़ायदे का सौदा नहीं है. उन्होंने इसके कई संस्करण निकाले.

अंकुश पब्लिकेशन समूह के मालिक कमल मोरारका को फ़ैसला करना था कि वह दिल्ली-मुंबई से एक साथ अंग्रेजी का द डेली निकालें या उर्दू का अंतरराष्ट्रीय साप्ताहिक, तो उन्होंने उर्दू के पहले अंतरराष्ट्रीय अख़बार को निकालने का फ़ैसला किया. हालांकि यह फ़ैसला लेना आसान नहीं था. जैसे ही यह फ़ैसला लिया गया कि उर्दू चौथी दुनिया को उर्दू के पहले अंतरराष्ट्रीय अख़बार के रूप में निकाला जाए, यह भी फ़ैसला हो गया कि यह अख़बार ब्रॉडशीट होगा, ग्लेज़ पेपर पर होगा और सेवेन कलर में छपेगा. एक प्रति को छापने पर बहुत ख़र्चा आएगा, पर इसे उर्दू जानने वालों को पांच रुपये में ही पहुंचाया जाएगा. यह फ़ैसला उर्दू जानने वाले बीस करोड़ लोगों के लिए उन लोगों ने लिया, जो ख़ुद उर्दू नहीं जानते हैं.

जब कुछ लोगों से राय लेनी शुरू की तो सबसे पहले सवाल आया कि हमें उर्दू का मिज़ाज़ जानना चाहिए. हम चौंक गए, क्योंकि हर तरह की सांप्रदायिकता से हमारा सामना हुआ था, लेकिन कभी भाषा की सांप्रदायिकता से सामना नहीं हुआ था. क्या हिंदी सिर्फ़ हिंदी बोलने वाले ग़ैर मुसलमानों के लिए है और उर्दू से क्या वे लोग प्यार नहीं कर सकते, जो मुसलमान नहीं हैं. हो सकता है हमारा पहला सामना सही लोगों से नहीं हुआ, पर भले वे ग़लत लोग रहे हों, उन्होंने सवाल तो खड़ा कर ही दिया. और हमने सोच-समझ कर फ़ैसला लिया कि उर्दू चौथी दुनिया निकालना ही है, क्योंकि उर्दू हमारे लिए आज़ादी की जंग लड़ने वाली ज़ुबान है, उर्दू दर्द और तक़लीफ को हथियार में बदलने वाली ज़ुबान है, उर्दू समाज के बदलाव की ज़ुबान है, उर्दू इंक़लाब की ज़ुबान है, उर्दू प्यार-मुहब्बत और भाईचारे की ज़ुबान है, उर्दू इस देश में रहने वाले हर भारतीय की ज़ुबान है.

देश के बुनियादी सवाल, जिनका रिश्ता भारत में रहने वाले हर इंसान से है, क्यों नहीं उर्दू जानने वालों के सामने लाए जाएं. बेकारी, भूख, दहशतगर्दी और असंतुलित विकास का शिकार हर भारतीय है तो क्यों नहीं उर्दू जानने वालों के सामने यह तथ्य लाया जाए. नाइंसाफ़ी के शिकार मुसलमानों के साथ भारत के दूसरे वर्ग भी हैं तो इसके आंकड़े क्यों उर्दू जानने वालों तक नहीं पहुंचते. कुछ लोग ज़रूर इस काम में लगे हैं, हम भी ऐसे लोगों की कतार में शामिल होना चाहते हैं.

दरअसल उर्दू में चौथी दुनिया निकालने का दबाव उन दोस्तों ने बनाया, जो उर्दू और हिंदी दोनों जानते हैं. उनका कहना था कि हर हालत में उर्दू में चौथी दुनिया निकाला जाए और वैसे ही बेबाक, बेलौस और बेख़ौफ़ अंदाज़ में निकले, जैसी हिंदी चौथी दुनिया निकलती है. यह हिंदी का उर्दू में तर्जुमा न हो, बल्कि मुक़म्मल अंतरराष्ट्रीय अख़बार का कलेवर और चेहरा लिए हुए हो. ऐसे लोगों में भारत के भूतपूर्व वित्त एवं वाणिज्य सचिव श्री एस पी शुक्ला का नाम पहला है, जिन्होंने इसके लिए एक साल तक बराबर दबाव डाला. ऐसे सभी दोस्तों की हौसला अफ़जाई की वजह से हम 20 करोड़ उर्दू जानने वालों के लिए चौथी दुनिया के रूप में सौगात लेकर आए हैं. हमारा मानना है कि उर्दू दुनिया की सबसे ताक़तवर ज़ुबानों में एक है. भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के लगभग 50 करोड़ लोग उर्दू जानते हैं और बोलते हैं. यह दुर्भाग्य है कि भारत में उर्दू अभी अपना सही स्थान बनाने के लिए संघर्ष कर रही है, जबकि होना यह चाहिए था कि उर्दू फैसला करने वाली जुबान के रूप में जानी जाती. उर्दू फैसला करने वाली जुबान बने, इसमें चौथी दुनिया भी अपना हाथ बटाना चाहती है.

देश के बुनियादी सवाल, जिनका रिश्ता भारत में रहने वाले हर इंसान से है, क्यों नहीं उर्दू जानने वालों के सामने लाए जाएं. बेकारी, भूख, दहशतगर्दी और असंतुलित विकास का शिकार हर भारतीय है तो क्यों नहीं उर्दू जानने वालों के सामने यह तथ्य लाया जाए. नाइंसाफ़ी के शिकार मुसलमानों के साथ भारत के दूसरे वर्ग भी हैं तो इसके आंकड़े क्यों उर्दू जानने वालों तक नहीं पहुंचते. कुछ लोग ज़रूर इस काम में लगे हैं, हम भी ऐसे लोगों की कतार में शामिल होना चाहते हैं.

क्यों उर्दू जानने वाले लोग अपने को कम संख्या में मानें, जबकि होना इससे अलग चाहिए. उर्दू जानने वाले लोग भारत में राजनैतिक रूप से सबसे जागरूक लोगों में से हैं. क्राइसिस के समय उन्होंने हमेशा सही राजनैतिक फ़ैसला लिया है. लेकिन आज वे न देश के राजनैतिक नक्शे में कहीं हैं, न शैक्षणिक, न आर्थिक और न सामाजिक नक्शे में दिखाई देते हैं. उनके अपनी मेहनत से शुरू किए गए संस्थानों पर बंद होने का ख़तरा मंडराने लगा है. चौथी दुनिया का मानना है कि उर्दू जानने वालों की यह बेबसी ख़त्म होनी चाहिए. इसी के साथ देश के राजनैतिक नेतृत्व में भी अगुआई लेने की लड़ाई उर्दू जानने वालों को शुरू करनी होगी. राजनैतिक पिछड़ापन और राजनैतिक पिछलग्गूपन कैसे समाप्त हो, इसकी रणनीति बनानी चाहिए.

उर्दू का इंक़लाबी चेहरा आज सामने लाने की ज़रूरत है. भगत सिंह, अशफाक उल्ला और राजगुरू ने आख़िरी समय इंक़लाब जिंदाबाद कहा था और यह नारा उर्दू का नारा न बनकर देश का नारा बन गया है. सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाज़ू-ए-क़ातिल में है, इसे लिखा उर्दू में बिस्मिल ने था, पर यह केवल उर्दू जानने वालों का गीत नहीं था, यह बदलाव और आज़ादी चाहने वालों का राष्ट्रीय गान बन गया था. जब तेलाई रंग में सिक्कों को नचाया जाएगा, ऐ वतन उस वक़्त भी मैं तेरे नग्में गाऊंगा, कभी बच्चा-बच्चा गाता था. आज फिर ऐसी नज़्मों और ग़ज़लों की ज़रूरत है. ऐसी उर्दू का क्रांतिकारी चेहरा थोड़ा धुंधला गया है, इसे निखारने की कोशिश हम सभी भारतीयों को करनी चाहिए और हम करेंगे.

भारत में एक ऐसा वर्ग है, जो उर्दू को जहालत, पिछड़ापन, सांप्रदायिकता और अलगाव की भाषा कहना चाहता है और प्रचारित करना चाहता है. इस वर्ग के साथ उन सभी को लड़ना चाहिए, जो इससे सहमत नहीं हैं. चौथी दुनिया इस लड़ाई में उर्दू जानने वाले उन सभी लोगों के साथ है, जो आगे बढ़कर ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ अपना हाथ खड़ा करना चाहते हैं.

एक सपना है और ज़ाहिर है हम ख्वाब अपनी ज़िंदगी में ही देख सकते हैं और पूरा करने की कोशिश कर सकते हैं. सपना है कि इंसानियत में भरोसा करने वाला, इंसानी उसूलों में विश्वास करने वाला समाज बने. इंसानी मूल्यों में विश्वास करने वाले सभी वर्ग एक साथ आएं और एक नया आग़ाज़ करें, एक नई शुरुआत करें. उर्दू बोलने वाले इसकी अगुआई क्यों न करें? चौथी दुनिया का सपना है कि ऐसा ही हो और इसी सपने को पूरा करने की कोशिश करने के लिए उर्दू चौथी दुनिया निकालने का फ़ैसला हुआ है. सपना पूरा कब होगा, पता नहीं, पर सपने को पूरा करने की कोशिश की ओर यह एक क़दम भर है.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

पोलियो उन्मूलन अभियान : कामयाबी अभी दूर है

पोलियो ख़तरनाक है, बच्चों के लिए और उनके भविष्य के लिए. सरकार और विश्व स्वास्थ्य संगठन मिलकर सालों से पोलियो उन्मूलन अभियान भी चला रहे हैं. क़ायदे से इस बीमारी का अब तक सफ़ाया हो जाना चाहिए था, लेकिन दु:ख की बात है कि अभी भी हर साल सैकड़ों बच्चे इस बीमारी की गिरफ्त में आ रहे हैं. यह आंकड़ा खुद सरकार का है. 2010 के जून महीने तक पोलियो के 20 मामले सामने आए हैं. निश्चित तौर पर इस ख़तरनाक बीमारी से पीछा छुड़ाने की तमाम कोशिशों के बाद भी पल्स पोलियो टीकाकरण अभियान अपने मक़सद में पूरा होता नहीं दिख रहा है. कम से कम भारत सरकार और नेशनल पोलियो सर्विलिएंस प्रोजेक्ट (एनपीएसपी) के आंकड़ों से तो यही लगता है. ग़ौरतलब है कि यह स्थिति तब है, जब सरकारी आंकड़ों के मुताबिक़, भारत में पोलियो उन्मूलन का काम 99 फ़ीसदी पूरा हो चुका है.

एनपीएसपी के रिपोर्ट के मुताबिक़, भारत में सिर्फ़ 2010 में (जून तक) पोलियो के 20 मामलों की पहचान की जा चुकी है. उत्तर प्रदेश के ही 7 ज़िलों में पोलियो के 10 मामले सामने आए. इसमें भी सभी मामले पी-3 टाइप के थे. इसके अलावा पोलियो के 6 मामले बिहार में भी मिले हैं. बाकी के मामले महाराष्ट्र, बंगाल और कश्मीर के हैं. उत्तर प्रदेश और बिहार को छोड़कर सभी मामले पी-1 टाइप के हैं. कुछ ग़ैर सरकारी संगठनों ने भी पोलियो अभियान पर 2009 में एक रिपोर्ट जारी की थी. 2009 में पोलियो के 236 मामले सामने आए थे. उत्तर प्रदेश में 181, बिहार में 49, दिल्ली में चार और एक-एक मामला राजस्थान एवं उत्तराखंड में. इनमें से 34 मामले ख़तरनाक पी-1 टाइप पोलियो के थे. कुल मामलों की संख्या में भी इस साल काफी कमी आई है, लेकिन फिर भी इसे संतोषजनक नहीं माना जा सकता. जहां तक 2008 की बात है तो इस साल भी पोलियो के 559 मामले सामने आए थे.

निश्चित तौर पर इस ख़तरनाक बीमारी से पीछा छुड़ाने की तमाम कोशिशों के बाद भी पल्स पोलियो टीकाकरण अभियान अपने मकसद में पूरा होता नहीं दिख रहा है. कम से कम भारत सरकार और नेशनल पोलियो सर्विलिएंस प्रोजेक्ट (एनपीएसपी) के आंकड़ों से तो यही लगता है.

फोटो-प्रभात पाण्डेय

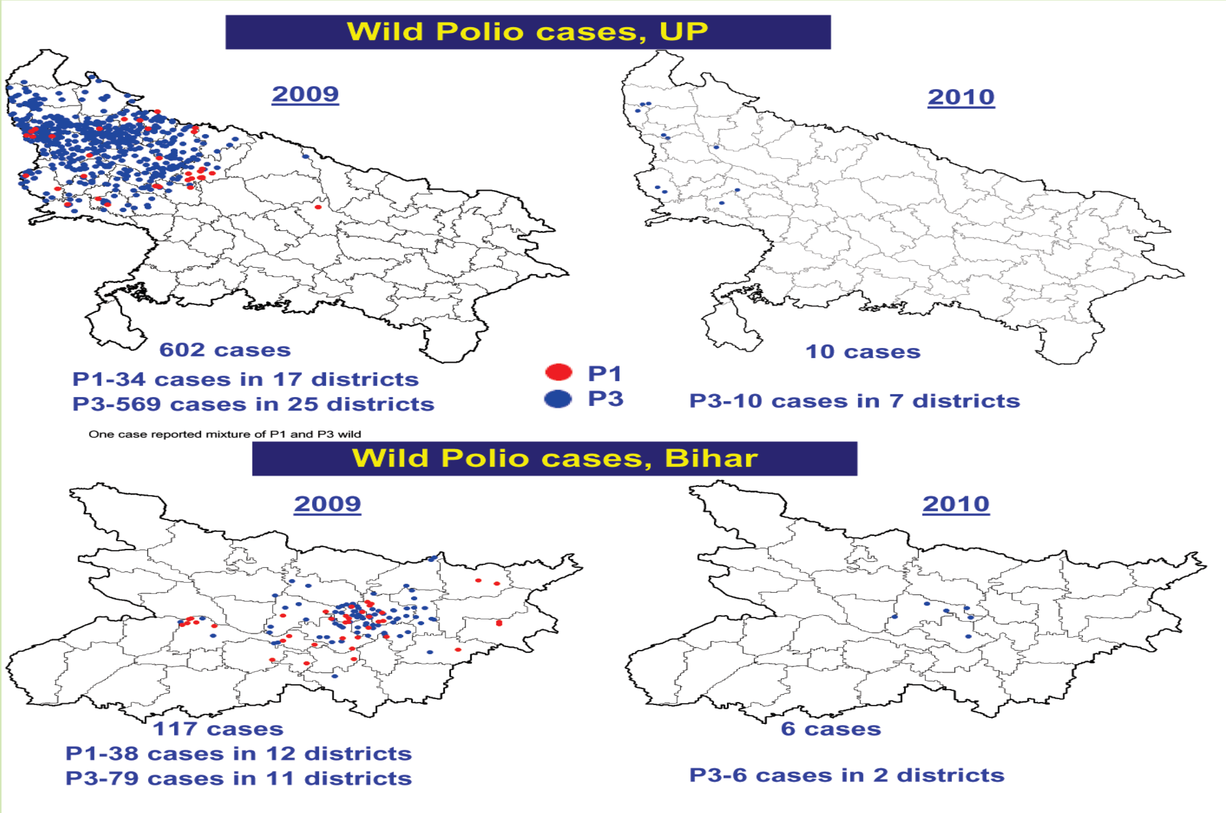

एनपीएसपी की रिपोर्ट पोलियो के क़हर से जूझ रहे भारतीय लोगों के लिए ख़ुशख़बरी है, क्योंकि पोलियो के मामलों में लगातार कमी आ रही है. इसी के साथ इस रिपोर्ट से दोबारा यह सच्चाई भी सामने आती है कि पोलियो उन्मूलन कार्यक्रमों में अभी कमी है. रिपोर्ट में पोलियो के मामले में सबसे आगे भारत का सबसे अधिक जनसंख्या वाला राज्य उत्तर प्रदेश है. उसने अपनी पुरानी जगह बरक़रार रखी है. उत्तर प्रदेश शुरु से ही पोलियो के मामले में सबसे पिछड़े राज्यों में रहा है. हालांकि स्थिति सुधरी है. 2008 में यहां तीन सौ से ज़्यादा पोलियो के मामले सामने आए थे. बिहार भी ठीक उत्तर प्रदेश से थोड़ा सा ही पीछे है. पोलियो उन्मूलन अभियान के बावजूद इतने मामलों का आना बिहार के लिए बुरी ख़बर है. जबकि सरकारी दावा है कि इसके उन्मूलन के लिए काफी प्रयास किए गए, लेकिन इस बार भी वह अपने पड़ोसी राज्य उत्तर प्रदेश के बाद पोलियो प्रभावित राज्यों के मामले में दूसरे स्थान पर रहा.

आधिकारिक सूत्रों के मुताबिक़, लगभग एक दशक पहले पोलियो टीकाकरण अभियान चलाने के बाद 2008 में पोलियो के सबसे अधिक 300 मामले दर्ज़ किए गए. जबकि साल 2006 में 61 और 2007 में 193 मामले सामने आए थे. बाक़ी राज्यों में पोलियो उन्मूलन अभियान सफल दिख रहा है, वैसे छिटपुट मामले सामने आते रहे हैं. लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि अभी काम पूरा नहीं हुआ है. जब तक पोलियो का एक भी मामला सामने आए, तब तक रुकना ख़तरनाक होगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

कम उम्र की लड़कियां यौन परिवर्तन से तालमेल नहीं बैठा पातीं, क्योंकि इस आयु में वे प्राथमिक स्कूलों में ही पढ़ रही होती हैं.

ऑनलाइन करें अपील या शिकायत

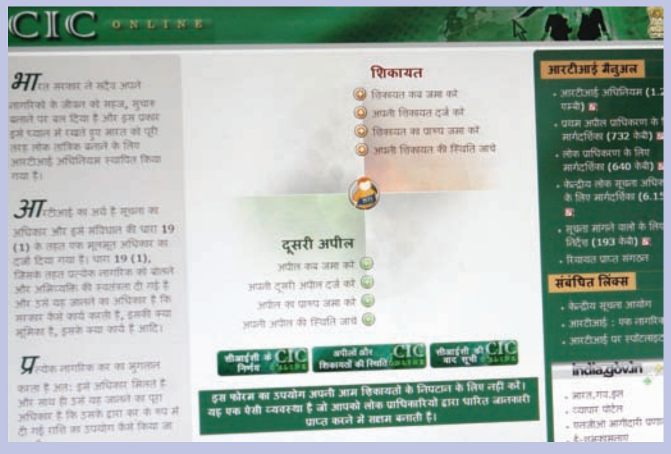

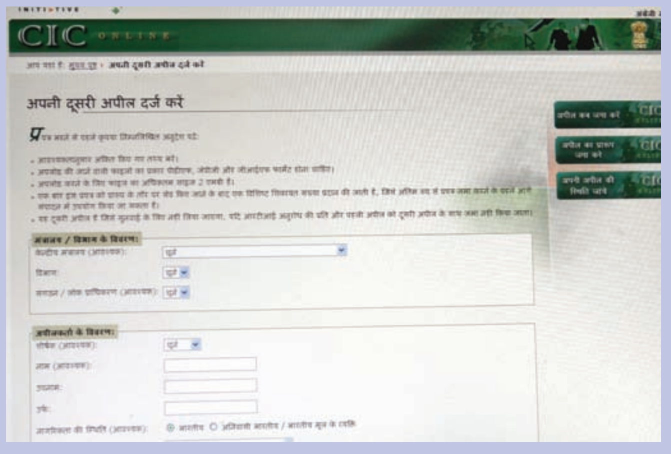

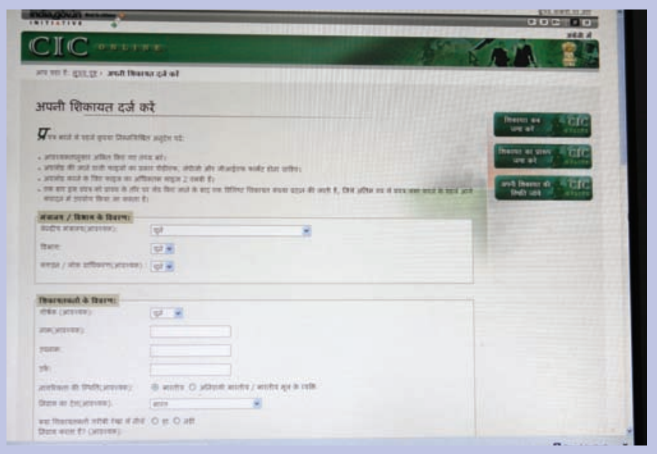

क्या लोक सूचना अधिकारी ने आपको जवाब नहीं दिया या दिया भी तो ग़लत और आधा-अधूरा? क्या प्रथम अपीलीय अधिकारी ने भी आपकी बात नहीं सुनी? ज़ाहिर है, अब आप प्रथम अपील या शिकायत करने की सोच रहे होंगे. अगर मामला केंद्रीय विभाग से जुड़ा हो तो इसके लिए आपको केंद्रीय सूचना आयोग आना पड़ेगा. आप अगर बिहार, उत्तर प्रदेश या देश के अन्य किसी दूरदराज के इलाक़े के रहने वाले हैं तो बार-बार दिल्ली आना आपके लिए मुश्किल भरा काम हो सकता है. लेकिन अब आपको द्वितीय अपील या शिकायत दर्ज कराने के लिए केंद्रीय सूचना आयोग के दफ्तर के चक्कर नहीं काटने पड़ेंगे. अब आप सीधे सीआईसी में ऑनलाइन द्वितीय अपील या शिकायत कर सकते हैं. सीआईसी में शिकायत या द्वितीय अपील दर्ज कराने के लिए http://rti.india.gov.in में दिया गया फार्म भरकर जमा करना है. क्लिक करते ही आपकी शिकायत या अपील दर्ज हो जाती है.

दरअसल यह व्यवस्था भारत सरकार की ई-गवर्नेंस योजना का एक हिस्सा है. अब वेबसाइट के माध्यम से केंद्रीय सूचना आयोग में शिकायत या द्वितीय अपील भी दर्ज की जा सकती है. इतना ही नहीं, आपकी अपील या शिकायत की वर्तमान स्थिति क्या है, उस पर क्या कार्रवाई की गई है, यह जानकारी भी आप घर बैठे ही पा सकते हैं. सीआईसी में द्वितीय अपील दर्ज कराने के लिए वेबसाइट में प्रोविजनल संख्या पूछी जाती है. वेबसाइट पर जाकर आप सीआईसी के निर्णय, वाद सूची, अपनी अपील या शिकायत की स्थिति भी जांच सकते हैं. इस पहल को सरकारी कार्यों में पारदर्शिता और जवाबदेही की दिशा में एक महत्वपूर्ण क़दम माना जा रहा है. सूचना का अधिकार क़ानून लागू होने के बाद से लगातार यह मांग की जा रही थी कि आरटीआई आवेदन एवं अपील ऑनलाइन करने की व्यवस्था की जाए, जिससे सूचना का अधिकार आसानी से लोगों तक अपनी पहुंच बना सके और आवेदक को सूचना प्राप्त करने में ज़्यादा दिक़्क़त न उठानी पड़े.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

आरटीआई ने दिलाई आज़ादी

मुंगेर (बिहार) से अधिवक्ता एवं आरटीआई कार्यकर्ता ओम प्रकाश पोद्दार ने हमें सूचित किया है कि सूचना का अधिकार क़ानून की बदौलत बिहार में एक ऐसा काम हुआ है, जिसने सूचना क़ानून की ताक़त से आम आदमी को तो परिचित कराया ही, साथ में राज्य की अफ़सरशाही को भी सबक सिखाने का काम किया. दरअसल राज्य की अलग-अलग जेलों में आजीवन कारावास की सज़ा काट रहे 106 क़ैदियों की सज़ा पूरी तो हो चुकी थी, फिर भी उन्हें रिहा नहीं किया जा रहा था. यह जानकारी सूचना क़ानून के तहत ही निकल कर आई थी. इसके बाद पोद्दार ने इस मामले में एक लोकहित याचिका दायर की. मार्च 2010 में हाईकोर्ट के आदेश पर ससमय परिहार परिषद की बैठक शुरू हुई, जिसमें उन क़ैदियों की मुक्ति का मार्ग खुला, जो अपनी सज़ा पूरी करने के बावजूद रिहा नहीं हो पा रहे थे.

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ई-मेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं. हमारा पता है :

चौथी दुनिया
एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा
(गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश
पिन -201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

कहीं इतिहास न बन जाए टाइपराइटर

कंप्यूटर क्रांति के इस दौर ने पूरी दुनिया में जिस एक चीज को सबसे ज़्यादा प्रभावित किया है, वह है टाइपराइटर. कभी हर कार्यालय और हर घर का एक अभिन्न हिस्सा माना जाने वाला टाइपराइटर धीरे-धीरे इतिहास के पन्नों में समाता जा रहा है. सॉफ्टवेयर क्रांति का अग्रदूत बने भारत में भी स्थिति इससे अलग नहीं है. हालांकि केंद्र सरकार द्वारा स्टेनो एवं क्लर्क भर्ती की परीक्षाओं में इसके इस्तेमाल से भारत में टाइपराइटर की उपयोगिता अब तक बनी हुई थी, लेकिन अब शायद ऐसा न हो. इसकी वजह यह है कि केंद्र सरकार ने अब इन परीक्षाओं में भी कंप्यूटर का इस्तेमाल करने का फ़ैसला लिया है. कार्मिक, लोक शिकायत एवं पेंशन मंत्रालय द्वारा कुछ दिनों पहले जारी एक सूचना के मुताबिक़, कर्मचारी चयन आयोग (स्टाफ सेलेक्शन कमीशन) ने तय किया है कि निम्न श्रेणी लिपिक और स्टेनोग्राफर की भर्ती परीक्षा अब सिर्फ कंप्यूटर पर ली जाएगी. अब तक इन परीक्षाओं के स्किल टेस्ट में टाइपराइटर का इस्तेमाल किया जाता था और खुद परीक्षार्थियों को टाइपराइटर साथ लेकर जाना पड़ता था. आयोग के इस फैसले से परीक्षार्थियों को इस परेशानी से भी छुटकारा मिल जाएगा. लेकिन डर इस बात का है कि भारतीय समाज से अब टाइपराइटर का अस्तित्व ही न खत्म हो जाए. केंद्र सरकार के कार्यालयों से टाइपराइटर लगभग पूरी तरह गायब है. निजी क्षेत्र के संस्थानों से इसकी विदाई काफी पहले हो चुकी थी. केंद्र सरकार द्वारा स्टेनो और क्लर्क भर्ती परीक्षाओं में इसकी उपयोगिता समाप्त किए जाने का यह फ़ैसला कहीं टाइपराइटर के ताबूत में आख़िरी कील ठोंकने वाला न साबित हो.

समय से पहले जवान हो रहीं लड़कियां

कुछ वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि अब लड़कियां 11 साल के बजाय नौ वर्ष की उम्र में ही यौवन की दहलीज छू रही हैं. इसकी वजह मोटापा या आहार पर पड़ता रासायनिक असर हो सकता है. द संडे टाइम्स की एक ख़बर के मुताबिक़, एक हज़ार लड़कियों पर शोध के बाद यह बात सामने आई कि उनके वक्षों का विकास अब औसतन नौ वर्ष 10 महीने की आयु में ही होने लगता है. यह 1991 में हुए समान तरह के अध्ययन में बताई गई उम्र से एक वर्ष कम है.

यह शोध डेनमार्क में हुआ. विशेषज्ञों का कहना है कि ऐसा ब्रिटेन एवं अन्य यूरोपीय देशों में देखा गया. अमेरिका से मिले आंकड़े भी कुछ ऐसे ही संकेत देते हैं. वैज्ञानिकों ने आगाह किया है कि कम उम्र की लड़कियां यौन परिवर्तन से तालमेल नहीं बैठा पातीं, क्योंकि इस आयु में वे प्राथमिक स्कूलों में ही पढ़ रही होती हैं. इस तरह के परिवर्तन से उन्हें स्तन कैंसर होने का ख़तरा हो सकता है.

कोपेनहेगन विश्वविद्यालय के अस्पताल के एंडर्स जूल ने बताया कि अगर लड़कियां जल्दी परिपक्वता की ओर बढ़ रही हैं तो किशोरवय की समस्याएं उन्हें पहले ही होने लगेंगी और बाद में उनमें बीमारियां होने का ख़तरा विकसित हो जाएगा. वैज्ञानिकों का कहना है कि यौवन की शुरुआत के पीछे आहार एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है. आज के बच्चे अपनी पिछली पीढ़ियों के मुक़ाबले ज़्यादा खा रहे हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

दिल्ली, 28 जून–04 जुलाई 2010

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)
दिल से जुड़े मामलों में शांति और खुशी मिलेगी. अपनी ज़िम्मेदारियों के प्रति उदासीन रवैया आपको अपनों से दूर कर सकता है. स्वास्थ्य अच्छा रहेगा. शांति की चाहत में आप योग और मेडिटेशन शुरू कर सकते हैं. परिवार के किसी बच्चे की वजह से चिंता हो सकती है.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)
मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. बच्चों की पढ़ाई के सिलसिले में आपको भागदौड़ करनी पड़ सकती है. किसी विवाद के चलते कोई महत्वपूर्ण योजना छोड़नी पड़ सकती है. उत्तराधिकार के मसले सुलझेंगे. स्वास्थ्य पर ध्यान अवश्य दें.

मिथुन (21 मई से 20 जून)
वित्तीय लाभ के योग हैं. आप अपने घर के लिए कुछ ख़ास चीजें ख़रीदने की योजना बनाएंगे. व्यवसायिक मामलों में ढिलाई महंगी साबित हो सकती है. इस हफ्ते आप व्यापारिक दौरों से बचें. स्वास्थ्य में धीरे-धीरे सुधार होगा.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)
इस हफ्ते दो प्रोजेक्ट आपके लिए परेशानी पैदा कर सकते हैं. परिवार के किसी छोटे सदस्य पर ख़र्च हो सकता है. भावनात्मक समस्याओं के चलते परिवार में झगड़ा हो सकता है. शांति और धैर्य की ज़रूरत है. यात्रा के दौरान फ़ायदा हो सकता है.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)
सेहत अच्छी रहेगी, लेकिन उसे लगातार बेहतर बनाए रखने के लिए प्रयास करने होंगे. ख़र्च बढ़ सकते हैं, इसलिए आपको सावधानी से काम लेना होगा. कार्यक्षेत्र में आपके लिए बेहतर उपलब्धियों के योग हैं. योजनाओं को साकार रूप देंगे.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)
बिना वजह की बातों पर ध्यान न देने से आपको और आपके पार्टनर को आपसी झगड़े निपटाने में मदद मिलेगी. कड़ी मेहनत के साथ-साथ आपको अपनी सेहत का भी ध्यान रखना होगा. पारिवारिक समस्याओं के समाधान में सभी का सहयोग मिलेगा.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)
मौजूदा परेशानियों से निपटने के लिए बातचीत से ही रास्ता निकालना होगा. ख़र्च बढ़ सकते हैं. ख़ास तौर पर जायदाद के मामले में पैसा ख़र्च करते वक़्त सावधानी बरतें. सेहत ठीक रहेगी. यात्रा के दौरान उम्मीद से थोड़ा कम फ़ायदा होगा.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)
आप विरोधियों को मात देने में कामयाब रहेंगे, लेकिन चौकन्ना रहें. अपने घर में जाने का कार्यक्रम बन सकता है. वाहन ख़रीदने का भी योग है. आप अति आत्मविश्वास के चलते कोई ऐसा काम कर बैठेंगे, जिससे आपकी मुश्किलें और बढ़ जाएंगी.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
आप अपनी समझदारी से तमाम परेशानियों से निपटने में कामयाब हो जाएंगे. इस हफ्ते व्यवसायिक मामलों में कुछ परेशानी हो सकती है. यात्रा के दौरान नए-नए लोगों से मुलाक़ात होगी. सुख-सुविधा का सामान ख़रीद सकते हैं.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
मित्रों के रूखे व्यवहार से खिन्नता बढ़ेगी. बड़ों की सलाह के बिना किए गए कार्य में नुक़सान हो सकता है. अचानक कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है. अपने सामान के प्रति सचेत रहें.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)
विवादास्पद मामलों में अपना पक्ष प्रभावी तरीक़े से रखें, सफलता मिलेगी. पड़ोसियों से संबंध सुधारने का प्रयास करेंगे. नए संपर्क भाग्योदय में सहायक होंगे. मांगलिक कार्यक्रमों में शामिल होने की रूपरेखा बन सकती है.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)
दिल के मामलों में कामयाब होने केलिए थोड़ा समझदार होने की ज़रूरत है. किसी के झगड़े में सुलह कराने की कोशिश न करें. हर किसी से बेहतर संबंध बनाकर रखने की ज़रूरत है. भावनात्मक संबंधों की शुरुआत होगी.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

किरगिज़स्तान में दंगों की शुरुआत ओश शहर के एक बाज़ार में दो गुटों की छोटी सी झड़प से हुई, लेकिन देखते ही देखते जंगल की आग की तरह यह हिंसा पहले इस शहर के कई इलाक़ों में, फिर दूसरे शहरों में फैल गई.

सेंट्रल एशिया

जातीय दंगों का ज्वालामुखी

मनीष कुमार

किरगिज़स्तान ही नहीं, पूरे सेंट्रल एशिया में जातीय दंगों का ख़तरा मंडरा रहा है. यूं कहें कि पूरा सेंट्रल एशिया जातीय दंगे के ज्वालामुखी पर बैठा है. किरगिज़स्तान के अलावा यह ज्वालामुखी फ़िलहाल शांत है. यह कब कहां और कैसे फट पड़े, इसका अंदाज़ा लगाना मुश्किल है. किरगिज़स्तान में जो जातीय दंगे हुए, वह कोई अचानक से घटित होने वाली घटना नहीं है. यह कई दशकों से चली आ रही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक नीतियों का नतीजा है.

ओश और ज़लालाबाद सेंट्रल एशिया के सबसे उपजाऊ इलाक़े फरगना घाटी के हिस्से हैं. सोवियत संघ के दौरान इस घाटी को उज़्बेकिस्तान, किरगिज़स्तान और ताज़िकिस्तान राज्यों के बीच बांट दिया गया. किरगिज़ और उज्बेक दोनों ही सुन्नी मुसलमान हैं, लेकिन उज़्बेकों के पास पैसा है, वे ज़्यादा अमीर हैं. सोवियत संघ के ज़माने से ही उज़्बेकों का इस इलाक़े में रुतबा रहा है. ओश में 1990 में भी भयंकर दंगे हुए थे. यह वक़्त सोवियत संघ का था. किरगिज़स्तान के उज़्बेकों ने अदालत नाम का संगठन बनाया था, जो ओश और इसके आसपास के इलाक़े को उज़्बेकिस्तान सोवियत सोशलिस्ट रिपब्लिक में शामिल करना चाहता था. साथ ही उज़्बेकी को इस इलाक़े में राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिए जाने की मांग को लेकर आंदोलन कर रहा था. इसके विरोध में किरगिज़ियों ने ओश ऐमागे नामक संगठन बना लिया. इलाक़े में बेरोज़गारी और ग़रीबी की वजह से जब ज़मीन के बंटवारे का मामला आया तो दंगे शुरू हो गए. इस दंगे में 300 से ज़्यादा लोगों की मौत हो गई, लेकिन वह सोवियत संघ का ज़माना था, इसलिए सोवियत सैनिकों ने उस पर क़ाबू पा लिया. लेकिन इस बार किरगिज़स्तान का दंगा सेंट्रल एशिया का सबसे ख़तरनाक दंगा है. इस दंगे में कितने लोग मारे गए हैं, अभी तक इसकी सही जानकारी नहीं मिली है. सरकारी और ग़ैर सरकारी आंकड़ों से यही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस हिंसा में 2000 से ज़्यादा लोग मारे गए हैं. मारे गए लोगों में ज़्यादातर लोग उज्बेक समुदाय के हैं. किरगिज़स्तान का उज़्बेक समुदाय अपने घरों को छोड़ कर किसी तरह से उज़्बेकिस्तान जाने की जुगत में है. किरगिज़स्तान के दक्षिणी इलाक़े से करीब चार लाख लोग पलायन कर चुके हैं. सीमा के पार पांच किलोमीटर की दूरी पर उज़्बेकिस्तान में उनके लिए बने कैंपों में खाने–पीने की व्यवस्था भी हो रही है. किरगिज़स्तान में दंगों की शुरुआत ओश शहर के एक बाज़ार में दो गुटों की छोटी सी झड़प से हुई, लेकिन देखते ही देखते जंगल की आग की तरह यह हिंसा पहले इस शहर के कई इलाक़ों में, फिर दूसरे शहरों में फैल गई. बाज़ार में हुई झड़प के कुछ ही घंटों बाद ओश शहर के कई इलाक़ों से गोलियों की आवाज़ें सुनाई देने लगीं. किरगिज़ समुदाय के लोगों ने उज़्बेकों पर हमला शुरू कर दिया. किरगिज़स्तान में उज्बेक अल्पसंख्यक हैं. ओश के कुछ ही घंटों बाद जलालाबाद में भी किरगिज़ियों ने उज़्बेकों पर हमला शुरू कर दिया. इससे तो यही लगता है कि उज्बेकों पर जो हमला हुआ, वह सुनियोजित था या फिर किरगिज़स्तान के लोग उज्बेकों से काफी नफ़रत करते हैं. इतने भयंकर दंगे को समझने के लिए हमें पूरे सेंट्रल एशिया के डेमोग्राफी और राजनीति को समझना ज़रूरी है.

> लगता है कि उज्बेकों पर जो हमला हुआ, वह सुनियोजित था या फिर किरगिज़स्तान के लोग उज्बेकों से काफी नफ़रत करते हैं. इतने भयंकर दंगे को समझने के लिए हमें पूरे सेंट्रल एशिया के डेमोग्राफी और राजनीति को समझना ज़रूरी है.

सेंट्रल एशिया के पांच देश कज़ाकिस्तान, उज़्बेकिस्तान, ताज़िकिस्तान, किरगिज़स्तान और तुर्कमेनिस्तान सोवियत संघ के हिस्से थे. 1991 में इन लोगों को आज़ादी मिली, लेकिन जातीय दंगों का सिलसिला 1985 से ही शुरू हो चुका था. यह दौर राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव का था, जब वह प्रेस्त्रोइका और ग्लोसनोस्त की नीति के ज़रिए सोवियत तंत्र का प्रजातांत्रिकरण करने की कोशिश कर रहे थे. गोर्बाचेव के इरादे नेक थे, लेकिन सोवियत का इतिहास ही कुछ ऐसा था कि उदारीकरण और प्रजातांत्रिकरण का हर दांव उल्टा पड़ने लगा. 1919 के दौरान लेनिन ने सोवियत संघ में राष्ट्रीयता की नीति अपनाई. इस नीति का मक़सद यह था कि सोवियत में रहने वाले हर जाति, समुदाय और नस्ल का विकास हो सके. इसलिए लेनिन ने इस नीति के ज़रिए सोवियत संघ की ज़मीन को इस तरह से राज्यों में बांटा, ताकि एक राज्य में एक ही समुदाय का वर्चस्व रहे, उसे राष्ट्र का बोध हो. यही लेनिन की फेडरलिज्म की समझ थी. लेनिन के लिए फेडरलिज्म कोई सरकारी तंत्र की सहूलियत के लिए बांटी गई प्रशासनिक यूनिट नहीं, बल्कि सांस्कृतिक यूनिट थी. इसी आधार पर सेंट्रल एशिया को पांच अलग–अलग राज्यों में बांटा गया. साथ ही इसके अलावा काराकल्पकस्तान, ततारिस्तान जैसे छोटे–छोटे समुदायों के लिए भी अलग से व्यवस्था की गई. 1920 के दशक में सेंट्रल एशिया के लोगों में राष्ट्रीयता का बोध नहीं था. इस इलाक़े में ताज़िक को छोड़कर ज़्यादातर लोग कबीलाई थे. ये लोग खुद की पहचान क्लैन से करते थे. इनकी अपनी बोली थी, लेकिन स्क्रिप्ट तक नहीं थी. सोवियत संघ की नीतियों ने यहां की जनता में राष्ट्रीयता का बोध कराया, लेकिन इस दौरान एक बड़ी चूक हो गई. ऐसी चूक, जिसका ख़ामियाज़ा सेंट्रल एशिया के लोग भुगत रहे हैं. लेनिन और स्टालिन ने इस तरह से सेंट्रल एशिया का बंटवारा किया कि ज़्यादातर लोग खुद को सीमा की दूसरी तरफ पाया. उदाहरण के तौर पर उज़्बेकिस्तान को ले लीजिए. राष्ट्रीयता नीति और नेशनल डीलिमीटेशन का मक़सद यह था कि उज़्बेक बहुल इलाक़ों को जोड़कर उज़्बेकिस्तान बनाया जाए, लेकिन जब उज़्बेकिस्तान बना तो उसमें कुछ उज्बेक बाहर हो गए और दूसरे समुदाय के लोग उज्बेकिस्तान में आ गए. हैरानी की बात यह है कि ताजिकिस्तान से ज़्यादा ताजिक उज़्बेकिस्तान में फंस गए. कई सदियों से जो शहर ताजिकों के थे, जैसे की समरकंद और बुखारा, उज्बेकिस्तान को दे दिए गए. वह जमाना सोवियत संघ का था, जहां सरकार सर्वशक्तिमान होती थी, इसलिए कोई संगठन या व्यक्ति इसके ख़िलाफ़ आवाज नहीं उठा सका. दूसरी बात यह थी कि धर्मों पर प्रतिबंध लगा था. लोग खुद को सुन्नी मुसलमान तो मानते थे, लेकिन मस्जिदें नहीं थीं, मिलजुल कर नमाज भी पढ़ना ग़ैरक़ानूनी था. सोवियत सरकार एथिस्म और धर्म का दमन करने वाली सरकार थी. लेकिन जो लोग धर्म को मानते थे, वे घर के अंदर ही नमाज पढ़ते, ईद–बकरीद मनाते और अपने बच्चों को धार्मिक शिक्षा देते. यही वजह है कि 75 साल के दमन के बाद भी सेंट्रल एशिया में इस्लाम मौजूद है. जब गोर्बाचेव ने सामाजिक एवं राजनीतिक उदारीकरण की राह पर चलना शुरू किया तो लोगों के बीच पहचान को लेकर रस्साकशी शुरू हो गई. हर राज्यों में दूसरे समुदाय के प्रति गुस्सा उभरने लगा. उज़्बेकिस्तान उज़्बेकों के लिए, ताज़िकों के लिए ताजिकिस्तान और किरगिज़ियों का किरगिज़स्तान जैसे नारे बुलंद होने लगे. सोवियत संघ जब तक जिंदा रहा, तब तक दूसरे राज्यों में फंसे लोगों को उतनी मुश्किलों का सामना नहीं करना पड़ता था, लेकिन अचानक इतिहास ने ऐसी करवट ली कि लाखों लोग रिफ्यूजी बन गए. 1991 में सोवियत संघ का आकस्मिक विघटन हो गया. सोवियत संघ के 15 राज्य अचानक 15 देशों में बदल गए. अब जो लोग दूसरे राज्य में थे, उन्हें विदेशी माना जाने लगा. किरगिज़स्तान में जिन उज़्बेकों को मारा जा रहा है, वे वही उज़्बेक हैं, जो सोवियत संघ की नीतियों की वजह से उज़्बेकिस्तान के बजाय किरगिज़स्तान में चले गए. किरगिज़स्तान के उज़्बेकों की तरह सेंट्रल एशिया में बीस से ज़्यादा समुदाय ऐसे हैं, जिनकी हालत इनकी तरह है. यही वजह है कि सेंट्रल एशिया के हर इलाके में ओश और जलालाबाद जैसी स्थिति मौजूद है. कहीं भी, कभी भी हिंसा भड़क सकती है.

सोवियत संघ के दौरान ग़लत फ़ैसले के अलावा धार्मिक कट्टरवाद भी सेंट्रल एशिया में जातीय दंगों को हवा देने का काम कर रहा है. सोवियत संघ के विघटन के बाद से इस इलाके में धर्म का विस्तार हुआ है. इनमें कट्टरवादी विचारधारा को ज़्यादा सफलता मिली है. उसकी वजह भी सेंट्रल एशिया की सरकारें ही हैं. दुनिया भर में प्रजातंत्र का परचम लहरा रहा है, लेकिन सेंट्रल एशिया में सोवियत संघ का तंत्र छोटे–मोटे बदलाव के साथ आज भी मौजूद है. यही वजह है कि विपक्ष के लिए इन देशों में कोई स्थान नहीं है. इन देशों के ज़्यादातर लोकप्रिय नेता या तो जेल में हैं या फिर यूरोप में छुपे बैठे हैं. इसलिए विपक्ष के स्थान पर कट्टरवादी संगठनों ने क़ब्ज़ा कर लिया है. सेंट्रल एशिया के पांचों देश इसी चक्र में फंसे हुए हैं. धार्मिक कट्टरवाद को मिटाने के नाम पर सरकार लोगों पर जुल्म करती है, जिससे कट्टरवादी संगठनों को ज़्यादा मज़बूती मिल जाती है. कुछ साल पहले ताशकंद विश्वविद्यालय के छात्रों को सरकार ने दाढ़ी–मूंछ साफ़ करने के आदेश दे दिए थे. जिसने भी ऐसा करने से मना किया, उसे सरकार ने वहाबी कहकर जेल में डाल दिया. जब किसी इलाक़े में इस तरह का माहौल हो तो कट्टरवादी संगठनों के लिए लोगों के बीच काम करना आसान हो जाता है. यही वजह है कि किरगिज़स्तान में हुए दंगों में कट्टरवादी संगठनों के नाम सामने आ रहे हैं. 1991 में आज़ाद होने के बाद उज़्बेकों और किरगिज़ों के बीच के रिश्ते अच्छे नहीं रहे. इसकी वजह यह है कि इन इलाकों में आतंकवादी और धार्मिक उन्माद फैलाने वाले कई संगठन सक्रिय हैं, जो किरगिज़ों और उज़्बेकों की ऐतिहासिक विभिन्नताओं का हवाला देकर समाज में हिंसा का ज़हर घोल रहे हैं.

पूरी दुनिया ग्लोबलाइजेशन की ओर बढ़ रही है. देशों, समुदायों एवं जातियों की पहचान मिल कर एक हो रही है. दुनिया एक ग्रह और एक इंसानियत की बात कर रही है. पूरा अफ्रीका एक पहचान की ओर बढ़ रहा है, यूरोपियन यूनियन बन रही है, लेकिन सेंट्रल एशिया दुनिया का अकेला ऐसा इलाक़ा है, जहां आज भी क्लैन, जाति और समुदाय की पहचान की लड़ाई चल रही है. जातीय दंगे हो रहे हैं. ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक या फिर सांस्कृतिक, वजह चाहे जो भी हो, सेंट्रल एशिया दुनिया के सामने एक अजीबोग़रीब मिसाल पेश कर रहा है.

manish@chauthiduniya.com

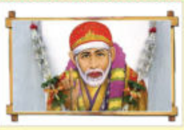

प्रेम अपने आप में ही जीवन है, संपूर्ण है. प्रेम करने में बुराई नहीं, गलती नहीं, बल्कि जिसके प्रति प्रेम है, वह उस लायक नहीं.

परमात्मा और मैं...

प्रेम करने में बुराई नहीं, ग़लती नहीं, बल्कि जिसके प्रति प्रेम है, वह उस लायक नहीं, क्योंकि वह कितना भी अच्छा, गुणी और निर्विकार हो, पर संपूर्ण नहीं है. प्रेम की धारा जो आपको बहा रही है, उसमें बहने को तैयार नहीं, जो प्राप्त हो रहा, उसे पाने के लिए तैयार नहीं. लेकिन अगर आप प्रेम की इस गहराई को जी चुके हैं तो उसे एक बार फिर जीवन में लाएं.

ऑसिम खेत्रपाल

आपने कभी किसी को प्रेम में डूबे हुए देखा है. जब कोई सचमुच प्रेम में होता है तब सिर्फ़ देना जानता है, प्रेम पवित्रता का प्रतीक है. परमात्मा का साक्षात केवल प्रेम ही करा पाता है. जब हम किसी से प्रेम करते हैं तो हर पल उसी के बारे में सोचते हैं. हर लम्हा उसी के साथ की चाह रहती है. बिना यह सोचे और देखे कि वो हमें क्या दे रहा है. हम अपने अंदर बहती प्रेम की धारा में बहते जाते हैं. ज़िंदगी के सबसे सुखद, सुदंर, अद्भुत पल होते हैं जब हम किसी से प्रेम करते है. आगे चल कर जीवन के प्रेम भरे उन पलों को जब याद करते है तो हंसते है, हैरान होते हैं, कि कैसा पागलपन था, क्योंकि प्रेम के उस दौर में सचमुच वो पागलपन ही होता था, सब कुछ छोड़ कर सिर्फ़ एक पल का उसका साथ जीवन भर का साथ लगने लगता था. जब हम प्रेम कि इस नदी में खुद को भूलकर सिर्फ़ उसी के नाम की रटन में लगे रहते थे, तब शायद हम सबसे जीवंत होते हैं. हमारे मन और तन का पोर-पोर जैसे खिला होता था. प्रेम की यह रोशनी हमारे जर्रे-जर्रे से टपकती थी. ऐसा लगता था प्रेम तो किसी और से किया, नूर मुझ पर आ गया. प्रेम का वो सुरूर हर कोई देख पाता था और समझ जाता था कि यह व्यक्ति प्रेम में है. खोए-खोए होते हुए भी शायद पहली बार अपनी सही पहचान में होते थे. जीवन के सारे काम स्वतः ही होते जाते, हमारे ध्यान में सिर्फ़ वही व्यक्ति होता था. अगर आज इसे पागलपन समझकर नकार देना चाहते हैं, अपना बचपना समझ भूल जाना चाहते हैं, जीवन की सबसे बड़ी ग़लती समझ ठुकरा देना चाहते हैं, तो रुकिए, प्रेम पागलपन नहीं बल्कि जीवन का लक्ष्य है. प्रेम बचपना नहीं आत्मा की परिपक्वता का परिचय है. प्रेम गलती नहीं बल्कि आपकी पहली सच्चाई है. ज़रूरत इस बात की है कि पहले यह समझा जाए कि हमें प्रेम किससे है. आज भी अगर आप पीछे मुड़ कर जब प्रेम के उन पलों को याद करते हैं तो अपना पागलपन अपनी शिद्दत, अपनी गहराई तो याद रहती है जिससे प्रेम था वह डगर में छूट गया तो वह शख्स तो कहीं याद ही नहीं रहता. बीस साल पहले किया गया प्रेम, अगर शादी में तब्दील नहीं हुआ तो कितना भी चाहें वह व्यक्ति जिसके प्रति प्रेम था कहीं कुछ ज़्यादा नहीं होगा, याद होगी अपने ही प्रेम की शिद्धत. क्यों? कभी सोचा आपने? क्योंकि प्रेम अपने आप में ही जीवन है, संपूर्ण है. प्रेम करने में बुराई नहीं, ग़लती नहीं बल्कि जिस के प्रति प्रेम है वह उस लायक नहीं, क्योंकि वो कितना भी अच्छा, गुण और निर्विकार हो पर संपूर्ण नहीं है. प्रेम की धारा जो आप को बहा रही हैं उसमें बहने को तैयार नहीं जो प्राप्त हो रहा उसकी प्राप्ति के लिए तैयार नहीं, लेकिन अगर आप प्रेम की इस गहराई को जी चुके हैं तो उसे एक बार फिर जीवन में लाएं. इस बार प्रेम का रुख करें. उसकी तरफ जो संपूर्ण है, जो शाश्वत है, जो स्वयं प्रेम का सागर है जो हर पल आपके प्रेम की नदी में आपके संग बहने को तैयार है. परमात्मा हमारे जीवन का आधार है परंतु हमारे प्रेम का लक्ष्य नहीं. क्यों? क्योंकि परमात्मा तो दाता है और हम लेने वाले. आइए आज समीकरण बदल देते हैं, धारा को मोड़ देते हैं, दाता को देने लगते हैं परमात्मा को प्यार की वो सौगात दो जिससे आप भरे हैं. वह आपके जीवन में हर पल रहता है. हम कहते हैं खुदा तो हमेशा मेरे साथ है. इसका मतलब तो यह हुआ कि वह मुझसे प्रेम करता है. तभी तो हर पल मेरे साथ रहता है. मेरे जीवन, घर और परिवार का एक हिस्सा है. लेकिन क्या मैं उसके जीवन का हिस्सा हूं? क्या मैं जीवन के हर पल में उसके साथ हूं? सोचने की बात है. क्या मैं उसके घर परिवार वालों को प्यार करती हूं. मज़े की बात तो यह है कि मैं उसे अच्छी तरह जानती ही नहीं हूं. जब ज़रूरत होती है उसी तरह उसे बना लेती हूं. कभी कृष्ण के रूप में, बाबा के रूप में तो कभी मां के रूप में. हर पल कहती हूं कि हे प्रभु मेरे साथ रहना. जिससे प्रेम किया था, क्या उससे यह कहती थी कि हर पल मेरे साथ रहना या फिर मैं हर पल उसके साथ थी. तो सबसे पहले उसे पहचानों जिससे जन्म-जन्म का साथ है. सात जन्मों का ही नहीं कितने जन्मों का और फिर वह जाने कहां मिलेगा, उसकी आवाज़ सुनों वो बच्चों की किलकारी में है सूरज की रोशनी, फूल की ख़ुशबू और बूढ़े कि खांसी में है. उसे काम करते देखना चाहते हो तो देखो अपने हर बच्चों से वह कैसे प्रेम करता है. प्रेम का सबसे बड़ा पुजारी तो परमात्मा है. उससे सीखो प्रेम कैसे होता है और फिर उससे प्रेम करो. जैसा प्रेम तुमने बीस साल पहले किया था. यकीन मानना तुम्हें कभी धोख़ा नहीं मिलेगा.साई भक्त परिवार में शामिल होकर अपनी साई भक्ति को और अधिक दृढ़ करने तथा सद्गुरु साई समर्थ की कृपा का अधिकारी बनने के लिए आप अपना नाम साई भक्त............. और फोन नंबर.......... कृपया 09999313918 पर एसएमएस करें.

ओम साई राम.

feedback@chauthiduniya.com

श्री सद्गुरु साई बाबा के ग्यारह वचन

1. जो शिरडी आएगा, आपद दूर भगाएगा.
2. चढ़े समाधि की सीढ़ी पर, पैर तले दुख की पीढ़ी पर.
3. त्याग शरीर चला जाऊंगा, भक्त हेतु दौड़ा आऊंगा.
4. मन में रखना दृढ़ विश्वास, करे समाधि पूरी आस.
5. मुझे सदा जीवित ही जानो, अनुभव करो, सत्य पहचानो.
6. मेरी शरण आ खाली जाए, हो कोई तो मुझे बताए.
7. जैसा भाव रहा जिस मन का, वैसा रूप हुआ मेरे मन का.
8. भार तुम्हारा मुझ पर होगा, वचन न मेरा झूठा होगा.
9. आ सहायता लो भरपूर, जो मांगा वह नहीं है दूर.
10. मुझ में लीन वचन मन काया, उसका ऋण न कभी चुकाया.
11. धन्य धन्य व भक्त अनन्य, मेरी शरण तज जिसे न अन्य.

- आस्था सबसे बड़ी चमत्कारी शक्ति है. आस्था कभी किसी व्यक्ति का साथ नहीं छोड़ती है. हम तब असफल होते हैं, जब अपनी आस्था का दामन छोड़ देते हैं. इसलिए कोई भी कार्य बिना आस्था के नहीं करना चाहिए.
- मनुष्य को अच्छाइयों और बुराइयों का पुतला कहा जाता है. ऐसा मनुष्य किस काम का, जो लोगों में केवल बुराई देखे. हमें इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि लोगों में बुराइयों के साथ-साथ अच्छाइयां भी होती हैं.
- देखने में फूल भले ही कितने सुंदर हों, पर अगर उनमें ख़ुशबू न हो तो कोई फ़ायदा नहीं है. उसी तरह आदमी कितनी भी मिठास से बोले, लेकिन अगर अच्छे काम न करे तो मीठी वाणी किस काम की.

मंदिर के कपाट पूजन के लिए अप्रैल के अंत अथवा मई के प्रथम पखवारे में श्रद्धालुओं के दर्शनार्थ खोल दिए जाते हैं. कुंभ 2010 के अवसर पर इस बार भी कपाट 19 मई को खोले गए.

पत्नी और भेड़िया के बीच फंसी कहानी

अनंत विजय

जॉर्ज बर्नाड शॉ ने अपने एक प्रसिद्ध लेख में आत्मकथाओं को झूठ का पुलिंदा बताया है. ऑटोबॉयोग्राफिज़ आर लाइज़ में बर्नाड शॉ ने कई तर्कों और प्रस्थापनाओं से यह साबित करने की कोशिश की है कि आत्मकथाएं झूठ से भरी होती हैं. कुछ हद तक बर्नाड शॉ सही हो सकते हैं, लेकिन यह कहना कि आत्मकथा तो झूठ का ही पुलिंदा होती है, पूरी तरह गले नहीं उतरता. बर्नाड शॉ के अपने तर्क हो सकते हैं, लेकिन विश्व साहित्य में कई ऐसी आत्मकथाएं हैं, जिनमें कूट-कूट कर सच्चाई भरी है. हिंदी में भी कई ऐसी आत्मकथाएं हैं, जो सच्चाई के करीब हैं और जिनमें झूठ का सिर्फ़ छौंक लगाया गया है. एक बार दिल्ली में एक वरिष्ठ आलोचक से आत्मकथा पर बात हो रही थी तो होते-होते बात हरिवंश राय बच्चन की आत्मकथा तक पहुंच गई. काफी लंबे विमर्श के बाद जो बात निकल कर सामने आई, वह यह कि बच्चन जी की आत्मकथा के चारों खंड बेहद अच्छे हैं, लेकिन उनका कहना था कि तेजी बच्चन के साथ ही आत्मकथा में झूठ का प्रवेश हो जाता है. आत्मकथा लिखने के लिए दरअसल साहस की आवश्यकता होती है और खुद को, खुद के संबंधों को सच की कसौटी पर कसना होता है, लेकिन आमतौर पर लेखक यह साहस दिखा नहीं पाते हैं और खुद को महान बताने के लिए आत्मकथा लिखते हुए भटक जाते हैं.

हिंदी साहित्य में पिछले दशक में कई दलित लेखकों की आत्मकथाएं प्रकाशित हुईं. शुरुआत में इन आत्मकथाओं ने हिंदी जगत को सकते में डाल दिया, लेकिन बाद में दलित लेखकों की आत्मकथा एक ख़ास किस्म के फॉर्मूले में बंध गई. परिवार की स्त्रियों पर दबंगों के ज़ोर-जुल्म की कहानी ही आत्मकथा के केंद्र में आ गई. इस ज़ोर-जुल्म और सेक्सुअल अत्याचार के बाद जो जगह बची, उसमें अपने को महान बनाने की कोशिश दिखाई देने लगी. अपने संघर्षों को पेश करने का तरीका भी एक ही रहा. हर किसी की कहानी, कहानी घर-घर की हो गई. नतीजा यह हुआ कि मराठी लेखकों के प्रभाव में लिखी गई ये आत्मकथाएं अपना प्रभाव छोड़ती चली गईं. इनको लेकर साहित्य में जो विमर्श शुरू हुआ था, वह धीरे-धीरे किनारे लगता चला गया और दलित साहित्य को साहित्य के केंद्र में लाने की राजेंद्र यादव की मुहिम को करारा झटका लगा.

अभी पिछले दिनों मेरी नज़र वाणी प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित किताब-मेरी पत्नी और भेड़िया पर गई, जिसके लेखक वरिष्ठ दलित लेखक एवं चिंतक डॉ. धर्मवीर हैं. शीर्षक पढ़कर मैं चौंका. मैंने किताब उलटना-पुलटना शुरू किया और फिर मैं इस उम्मीद में पढ़ता चला गया कि शायद इसमें लेखक का संघर्ष कहीं सामने आएगा. लगभग एक हज़ार पन्नों के इस भारी-भरकम ग्रंथ में डॉ. धर्मवीर ने अपनी पूरी पारिवारिक गाथा लिखी है. एक सौ बावन अध्यायों में धर्मवीर ने सिर्फ़ अपने झगड़े को समेटा है. दरअसल यह पूरी कहानी धर्मवीर, उनकी पत्नी रमेश रानी और भाई महीपाल के इर्द-गिर्द घूमती है. लेखक अपनी इस आत्मकथा की शुरुआत बेहद रोचक तरीके से करता है. दरअसल उनकी पत्नी अपने घर में एक भेड़िया पालना चाहती है और उसमें उनका छोटा भाई उसको समर्थन देता है. तमाम क़ानूनी सलाह और भेड़िए के लिए दिल में नफ़रत लिए धर्मवीर का अपने छोटे भाई और पत्नी से भेड़िए को लेकर विवाद होता है. विवाद काफी बढ़ जाता है. मारपीट तक की नौबत आती है. बेटी और दोस्तों के हस्तक्षेप के बाद किसी तरह मामला निबट जाता है, लेकिन भेड़िए को लेकर धर्मवीर ने जो प्रसंग बताया है, वह बेहद दिलचस्प होने के साथ-साथ एक व्यक्ति की विवशता को सामने लाता है. भेड़िए के विवाद के दौरान उनकी पत्नी रमेश रानी और भाई महीपाल एक तरफ खड़े नज़र आते हैं. होता यह है कि धर्मवीर की अनुपस्थिति में उनकी पत्नी और छोटे भाई के बीच संबंध बनते जाते हैं, जो

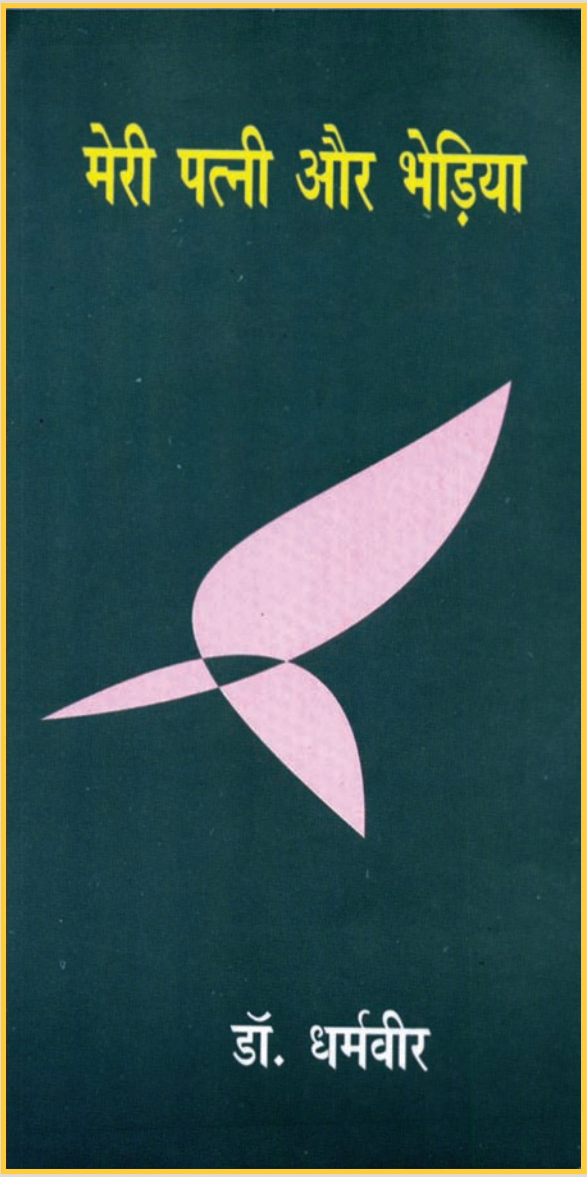

कालांतर में बेहद प्रगाढ़ हो जाते हैं. भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी धर्मवीर को जब इस बात का पता चलता है कि उनकी पत्नी और छोटे भाई के बीच शारीरिक संबंध हैं तो वह बेहद खिन्न होते हैं, स्वाभाविक भी है. तमाम समझाने-बुझाने के बाद भी इस संबंध पर कोई असर नहीं पड़ता है और दोनों के बीच अंतरंगता बढ़ती जाती है. दोनों भाइयों के बीच इसको लेकर लड़ाई-झगड़ा भी चलता रहता है. बेटी के बीचबचाव के बाद मामला थोड़े दिनों तक शांत रहता है, लेकिन फिर झगड़े शुरू हो जाते हैं, मामला कोर्ट-कचहरी तक पहुंच जाता है.

एक दिन जब डॉ. धर्मवीर अपने किसी जानने वाले श्यामलाल मक्करवाल के घर गए तो उन्हें एक ऐसी बात पता चली, जिसे सुनकर वह सन्न रह गए. कई बातें आपको पता होती हैं, वह राज़ आप दिल में छुपाकर रखते हैं, लेकिन जब वह राज़ आपके मित्रों और परिचितों पर फ़ाश हो जाए तो आप मुंह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहते हैं. मक्करवाल और पीतम ने महीपाल को समझाने की कोशिश की कि वह डॉ. धर्मवीर को, उनके परिवार को उनके हाल पर छोड़ दे, पति-पत्नी के बीच न आए. काफी समझाने-बुझाने पर महीपाल तैश में आ गया और उसने कहा, मैं उनकी पत्नी को नहीं छोड़ सकता. जब पूछा गया कि क्यों नहीं छोड़ सकते तो उसने कहा कि मैं अपने जीवन में आईएएस तो नहीं बन सका, लेकिन एक आईएएस की पत्नी को तो अपने घर में रखकर दिखा ही रहा हूं. यह थी महीपाल की मर्दानगी. इस बात को लेकर भी घर में जंग छिड़ी रहती थी कि रमेश रानी के गर्भ से जन्म लेने वाले लड़के संजय का पिता कौन है. क्या संजय धर्मवीर की संतान है या फिर वह महीपाल और रमेश रानी के अवैध संबंधों का नतीजा है. धर्मवीर ने बहुत ही ज़्यादा विस्तार से पत्नी और भाई के साथ अपने झगड़े को लिखा है. अपने बच्चों को लेकर भी धर्मवीर लगातार आशंकित रहते हैं. यह जो एक मनोविज्ञान है, वह यह दिखाता है कि पत्नी से धोख़ा खाने के बाद एक पुरुष किस तरह से व्यवहार करता है.

लेकिन कुल मिलाकर यह आत्मकथा एक आईएएस अधिकारी और उसकी पत्नी के संघर्ष की बेहद बोरियत भरी गाथा है. हज़ार पन्नों के इस महाग्रंथ में साहित्य की इस विधा-आत्मकथा में कोई इज़ाफ़ा हुआ हो, ऐसा भी नहीं लगता. अगर आप एक परिवार की कहानी को व्यापक परिप्रेक्ष्य में बड़े सवालों के साथ पेश कर सकते हैं तो उसका एक स्थायी मूल्य होता है, लेकिन धर्मवीर की इस महाकिताब में न तो कोई व्यापक दृष्टि है और न ही कोई स्थायी मूल्य. एक परिवार की बेहद साधारण कहानी, जिसे विस्तार से लिखकर और किताब का शीर्षक चौंकाने वाला देकर लेखक ने बाज़ार को भुनाने की कोशिश की है.

(लेखक आईबीएन-7 से जुड़े हैं)

feedback@chauthiduniya.com

मनोहर मुलगांवकर नहीं रहे

अंग्रेज़ी के मशहूर साहित्यकार मनोहर मुलगांवकर का निधन हो गया. मुलगांवकर अट्ठानवे साल के थे और कर्नाटक के सुदूर जबलपेट में अपने घर में रह रहे थे और वहीं उनका निधन हुआ. मुलगांवकर ने आठ उपन्यास और लगभग पचास कहानियां लिखीं. साठ के दशक में अंग्रेज़ी में लिखा उनका उपन्यास डिस्टैंट ड्रीम और कॉम्बैट आफ शैडो काफी चर्चित रहा था और देश-विदेश में उसे खासी प्रशंसा भी मिली थी. वर्षों तक मनोहर मुलगांवकर ने डेक्कन हेराल्ड और स्टेट्समैन में साप्ताहिक स्तंभ लिखकर समसामयिक विषयों पर सार्थक हस्तक्षेप किया. मुलगांवकर के निधन से आज़ादी के पहले और बाद की लेखक पीढ़ी के बीच का एक ऐसा सूत्र चला गया, जिसने अपने लेखन से बाद की पीढ़ियों को एक रास्ता दिखाया था. चौथी दुनिया परिवार की ओर से मुलगांवकर को विनम्र श्रद्धांजलि.

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

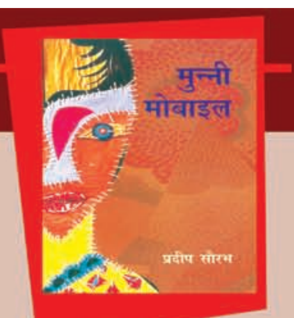

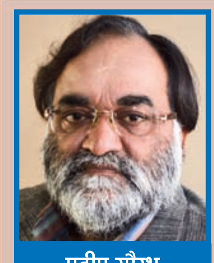

प्रदीप सौरभ

ट्रेन पटरियों पर दौड़ती जा रही थी. इलाहाबाद अभी मीलों दूर था, पर आनंद की आंखों में जैसे वह पूरी तरह सजीव हो गया था... मानसी की यादों की चादर को आज वह पूरी तरह ओढ़ लेना चाहते थे. कुछ इस तरह कि उसका पूरा वजूद उनमें समा जाए. आनंद के इस पहलू को बहुत कम लोग जानते थे कि उनके बाहरी अक्खड़-फक्कड़ व्यक्तित्व के भीतर भावनाओं का मीठा झरना भी बहता है.

अखरोट हो तुम, पूरे अखरोट, बाहर से सख्त...अंदर से मुलायम, मानसी उन्हें अक्सर ऐसे ही कहा करती थी. यह सोचते हुए आनंद की आंखों की कोर गीली हो गई थी. परीक्षाओं के दिनों में यह मित्रता घर आने-जाने में तब्दील हो गई थी. आनंद अक्सर शाम होने पर उसके घर जाया करते थे. नोट्स, पढ़ाई, संबंधित विषय पर चर्चा...किसी विषय पर देर-देर तक बातचीत...मानसी का भाषा पर अधिकार भरपूर था और लिखावट मोती सी सुंदर. ये दोनों चीज़ें आनंद को आकर्षित करती थीं और मानसी को पसंद था-आनंद का स्वाभिमान, उसमें कुछ कर गुजरने का पैनापन, उसकी कविताएं...उसका तेवर...उसका विद्रोही स्वभाव...उसकी डांट...उसका रौब...सब कुछ.

विचारों के इस साहचर्य ने दोनों को अच्छा मित्र बना दिया था. आनंद भारती कभी बहुत ज़्यादा बोलने वाले नहीं रहे और मानसी जैसे उनकी चुप्पी में भी अर्थ खोज लेती थी.

आनंद तब बिल्कुल फक्कड़ थे. उनके पास आज जैसा कुछ नहीं था...न ठाठ-बाट, न बढ़िया घर, न बहुत पैसा...पर लोगों के बीच खासी पहचान थी उनकी. विचार और कला, साथ ही कलम के धनी थे वह और मानसी उन्हें हमेशा कहती थी, तुम एक दिन बहुत बड़े बनोगे.

आनंद हंसकर कहते, वह तो मैं आज भी हूं.

आनंद भारती की अनेक महिला मित्र हमेशा रहीं, तब भी थीं. पर मानसी को ऐसा लगता कि आनंद सबसे क़रीब सिर्फ़ उसके हैं. हालांकि स्वयं आनंद ने कभी इस बात को खुलकर उसके सामने स्वीकारा नहीं. उन्हें याद है...रिसर्च के दौरान लाइब्रेरी के बाहर की सीढ़ियों पर उन्होंने मानसी के साथ बहुत गहरा वक़्त बिताया है.

...अचानक चाय! चाय! गुहार से आनंद की तंद्रा टूटी. लगता है, अलीगढ़ आ गया. उनके पास के यात्री आपस में बात कर रहे थे. उनकी इच्छा हुई कि वह उतर कर एक चाय ले लें, पर जैसे आज इस समय वह ख़ुद को मानसी की यादों से मुक्त नहीं करना चाहते थे. वह सोचने लगे, लाइब्रेरी के बाहर का वह चाय वाला भी उनके रिश्ते की कद्र करता था. उस दोपहरी में बाहर से पटस उठाकर भीतर की ओर डाल देता. मानसी और आनंद उस पर बैठकर भरी दोपहरी में भी चाय पीते. तपती लू में भी, वह चाय के धुएं में ख़ामोश बैठे रहते और मानसी हमेशा की तरह उनकी ख़ामोशी को शब्दों में परिभाषित करती रहती. उन्हें याद आ गया-एक बार चाय छलक कर मानसी के कुर्ते पर गिर गई थी और आनंद के मुंह से बेसाख्ता निकल पड़ा था, कहीं दाग न लग जाए. मानसी ने उस शब्द के भी नए अर्थ खोज लिए थे.

ऐसी थी मानसी! हां, बिल्कुल ऐसी. हलका गेहुंआ रंग, सामान्य कद. पर नई राह पर चलने का हौसला लिए...सामाजिक परंपराओं की परवाह से बेपरवाह...बेख़ौफ़. उसे लेकर अक्सर अपने परिवार से लड़ पड़ती...जहीन दिमाग़ की और परिश्रमी स्वभाव की. जब आनंद भारती को कोई नहीं समझता तो भी मानसी उसे समझ लेती. आनंद भारती की पलकों के उठने और गिरने के आयाम भी वह खोज लेती थी.

अगले अंक में जारी...

पावन धाम बद्रीनाथ

धरती पर स्वर्ग की परिकल्पना को साकार करने वाले पावन बद्रीनाथ धाम नर-नारायण पर्वत के मध्य में हिमालय की कोख में बसा है. इसीलिए पूरे उत्तराखंड को देवभूमि के नाम से पुकारा जाता है. यह धाम भगवान विष्णु को प्रिय होने के कारण नारद जैसे श्रेष्ठ मुनियों द्वारा अनवरत सेवित एवं साधना स्थली के रूप में विख्यात है. प्राकृतिक वैभव एवं हिम की मनोहारी पर्वत मालाओं के मध्य बसा होने के कारण यह नर-नारायण दोनों को सदैव आकर्षित करता रहा है. सनातन धर्मानुयायियों के मध्य जगत नियंता की सृष्टि में बद्रिकाश्रम को अष्टम बैकुंठ के रूप में मान्यता प्रदान की गई है. चार युगों में धरती पर नारायण द्वारा चार धामों की स्थापना की बात पुराणों में मिलती है. सतयुग के पावन धाम के रूप में बद्रीनाथ धाम की मान्यता है, जिसकी स्थापना स्वयं नारायण के हाथों की गई. त्रेता में रामेश्वरम की स्थापना स्वयं भगवान श्रीराम ने की. द्वापर में द्वारिका धाम एवं कलयुग के लिए जगन्नाथ धाम की स्थापना स्वयं भगवान श्रीकृष्ण द्वारा की गई.

कलयुग में जगन्नाथ धाम की विशेष महत्ता का उल्लेख मिलता है. पावन बद्रीनाथ धाम अपने प्राकृतिक वैभव के कारण मानव को सशरीर स्वर्ग के आनंद की अनुभूति कराता है. बद्रीनाथ के संदर्भ में मान्यता है कि सतयुग के प्रारंभ में ही जगत के कल्याण की कामना धारण करके स्वयं नारायण ने मूर्तिमान होकर इस धाम में एक तपस्वी की तरह तप किया. सतयुग में भगवान श्रीनारायण के प्रत्यक्ष दर्शन होने के कारण यह धाम मुक्तिप्रदा के नाम से विख्यात हुआ. त्रेता युग में योगाभ्यासरत रहकर कुछ काल तक भगवान श्रीराम के दर्शन का लाभ मानव को मिलने के कारण इसे योगिसिद्धदा के नाम से जाना गया. द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण के प्रत्यक्ष दर्शन की आशा में बहुजन संकुल होने के नाते विषाला के नाम से जाना गया. प्रकृति के वैभव से आच्छादित, नर-नारायण को लुभाने वाला यह कलयुग में बद्रिकाश्रम बदरीनाथ धाम के नाम से विख्यात है. बौद्ध धर्म के नयन-महायान समुदायों के आपसी संघर्ष ने बद्रिकाश्रम को भी प्रभावित किया. आक्रमण एवं विनाश की आशंका से ग्रस्त एवं खुद रक्षा करने में असमर्थ इस धाम के पुजारी भगवान की मूर्ति को नारद कुंड में डालकर यहां से पलायन कर गए. जब भगवान की प्रतिमा के दर्शन नहीं हुए तो नर-देवता संयुक्त रूप से देवाधिदेव भगवान शिव की शरण में जाते हैं, जो उस समय कैलाश में समाधि लिए हुए थे. आराधना से प्रकट

होकर भगवान कैलाशपति ने कहा कि नारायणश्री की मूर्ति कहीं गई नहीं है. वहीं समीप के नारद कुंड में ही है, परंतु तुम लोग वर्तमान में शक्तिहीन हो. भगवान नारायणश्री मेरे भी आराध्य हैं. अतएव मैं स्वयं अवतार धारण करके मूर्ति का उद्धार कर जगत का कल्याण करूंगा. कालांतर में भगवान आशुतोष शिव ही दक्षिण भारत के कलाड़ी नामक स्थान में ब्राह्मण भैरवदत्त उर्फ़ शिव गुरु के घर माता आर्यम्बा की कोख से जन्म लेकर आदिगुरु शंकराचार्य के नाम से विख्यात हुए.

जगतगुरु शंकराचार्य द्वारा संपूर्ण भारत में अव्यवस्थित तीर्थों का सुदृढ़ीकरण, बौद्ध मतों का खंडन एवे सनातन वैदिक मत का मंडन सर्वविदित है. शिव रूप आदिगुरु शंकराचार्य ने ठीक ग्यारह वर्ष की अवस्था में दक्षिण भारत से बद्रिकाश्रम पहुंच कर नारद कुंड से भगवानश्री की दिव्य मूर्ति का विधिवत उद्धार करके उसे पुन: प्राण प्रतिष्ठित किया. बद्रीनाथ धाम में आज भी उन्हीं के द्वारा शुरू परंपरा के अनुसार उन्हीं के वंशज नांबूदरीपाद ब्राह्मण ही भगवान नारायण रूप बद्रीनाथ जी की पूजा-अर्चना वैदिक परंपरा के अनुसार करते हैं. अति हिमपात के कारण इस धाम के कपाट वर्ष में छह माह बंद रहते हैं. मंदिर के कपाट पूजन के लिए अप्रैल के अंत अथवा मई के प्रथम पखवारे में श्रद्धालुओं के दर्शनार्थ खोल दिए जाते हैं. कुंभ 2010 के अवसर पर इस बार भी कपाट 19 मई को खोले गए. मंदिर खुलने के दिन अखंड ज्योति दर्शन का विशेष महत्व है. छह माह बाद मंदिर के पट बंद होने का दिन लगभग नवंबर मास के दूसरे सप्ताह में आता है, जो प्रत्येक वर्ष दशहरे के दिन निश्चित किया जाता है. भगवान बद्रीनाथ जी की मूर्ति का स्वरूप एवं भगवानश्री की दिव्य मूर्ति की प्रतिष्ठा का इतिहास लगभग द्वापर युग के श्रीकृष्णावतार के समय का माना जाता है. भगवान बद्रीनाथ की इस तीसरी प्रतिष्ठा का इतिहास कुछ इस प्रकार है, जब विधर्मियों-पाखंडियों का प्रभाव बढ़ा तो उन्होंने भगवानश्री की प्रतिमा को क्षति पहुंचाने का प्रयास किया. बचाव में पुजारियों ने भगवानश्री की प्रतिमा पास के नारद कुंड में डाल दी, जिसकी प्राण प्रतिष्ठा स्वयं शिवावतार आदि शंकराचार्य ने की. भगवानश्री की दिव्य मूर्ति हरित वर्ण की पाषाण शिला में निर्मित है, जिसकी ऊंचाई लगभग डेढ़ फुट आंकी जाती है. भगवानश्री नारायण यहां पद्मासन में विराजमान हैं, पद्मासन भी योग मुद्रा में है. पद्मासन पर भगवानश्री के गंभीर बुर्तलाकार नाभिहृदय के दर्शन होते हैं. यही ध्यान साधक को साधना में गंभीरता प्रदान करता है, जिससे साधक के मन की चपलता स्वयं समाप्त हो जाती है. नाभि के ऊपर भगवानश्री के विशाल वक्षस्थल के दर्शन होते हैं. बाएं भाग में भृगुलता का चिन्ह एवं दाएं भाग में श्रीवत्स चिन्ह स्पष्ट दिखता है. भृगुलता भगवानश्री की सहिष्णुता एवं क्षमाशीलता का परिचायक है. श्रीवत्स दर्शन शरणागत दायक और भक्त वत्सलता का प्रतीक है. पुराण इसका स्वयं साक्षी है कि त्रिदेवों में महान कौन है के परीक्षण के क्रम में भृगुऋषि ने भगवान विष्णु जी के वक्षस्थल पर पैर से प्रहार किया तो भगवान ने क्षमादान के साथ अपने श्रेष्ठ गुणों का भी प्रदर्शन किया. श्रीवत्स चिन्ह में बाणासुर की रक्षा के लिए भगवान शिव द्वारा फेंके गए त्रिशूल के घाव एवं श्रीकृष्ण के वक्षस्थल स्पष्ट रूप से दिखते हैं. सुवर्ण रेखा के रूप में लक्ष्मी प्रदाता प्रतीक बने हैं. यह चिन्ह दाएं भाग में स्थित हैं. इस पर भगवानश्री के दिव्य कंबुग्रीवा के दर्शन होते हैं, जो महापुरुषों के लक्षणों का परिचायक है. इसके ऊपर भगवान बद्रीनाथ जी की विशाल जटाओं से सुख भाग के दर्शन होते हैं. भगवानश्री का दर्शन मानव को जन्म-मृत्यु के बंधन से मुक्ति प्रदान करने वाला है. नारद जी-भगवान बद्रीनाथ जी के दरबार के बाएं भाग में ताम्रवर्ण की छोटी सी मूर्ति मुनिवर नारद जी की है. परंपरानुसार शीतकाल में देव पूजा के क्रम में नारद जी द्वारा ही भगवानश्री एवं देवतागण सुपूजित होते हैं. उद्धव जी-नारद जी के पृष्ठ भाग में चांदी की दिव्य मूर्ति उद्धव जी की है. द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण के सखा रहे उद्धव जी उन्हीं के आदेश से यहां पधारे थे. यह भगवानश्री के उत्सव मूर्ति के रूप में सुपूजित होती है. शीतकाल में देव पूजा के समय उद्धव जी की ही पूजा पांडुकेश्वर के योगध्यानी मंदिर में संपन्न होती है. नरपूजा में ग्रीष्मकाल में उद्धव जी पुन: भगवानश्री की पंचायत बद्रीनाथ के वामपार्श्व में विराजते हैं. भगवान नारायण उद्धव एवं नारद जी के बाएं भाग में शंख, चक्र एवं गदा धारण किए हुए पद्मासन में स्थित हैं. स्कंध भाग में लीलादेवी, बाएं उरुभाग में उर्वशी, बाएं मुखारबिंद के पास श्रीदेवी एवं कटि भाग के पास भूदेवी भगवानश्री की सेवा में विराजमान हैं. स्वयं भगवान नारायण योग मुद्रा में तपस्या में लीन हैं.

राजकुमार शर्मा
feedback@chauthiduniya.com

जोश है बातें करने का

आधुनिक युग में तकनीक ने लोगों का जीवन आसान बना दिया है. इस क्रम में सबसे पहला नंबर है मोबाइल का. मोबाइल के प्रति युवाओं का क्रेज देखकर कई कंपनियां ख़ुद को भारतीय बाज़ार में साबित करने के लिए नए-नए लुभावने ऑफर ला रही हैं. वे नए-नए मोबाइल बाज़ार में उतार कर युवाओं को ख़ुश करने की कोशिश में लगी हैं. वर्ष 2010 में श्री हरि ओवरसीज के बैनर तले स्थापित हुई मोबाइल कंपनी जोश ने भी अपनी नई रेंज लांच की है. इस नई रेंज में जेएस-26, जेएस-86, जेएस-38, जेएस-02 एवं जेएस-60 समेत नौ मॉडल हैं. इन मॉडलों में वे सारी ख़ूबियां हैं, जिनकी एक आम मोबाइल फोन उपभोक्ता को जरूरत होती है. मसलन ई-कॉमर्स, एम- कॉमर्स, मूवी, ब्राउजिंग, वीडियो, गेमिंग, जीपीएस नेविगेशन के अलावा भी बहुत सारी %ख़ूबियां हैं. ग्राहकों की संतुष्टि को ध्यान में रखते हुए कंपनी ने मोबाइल सेटों को एक साल के वारंटी पीरियड में रखा है. आपको बैट्री बार-बार चार्ज न करना पड़े, इसके लिए इनमें पचास घंटे का इमर्जेंसी बैकअप मौजूद है. कंपनी ने देश भर में जोश नेटवर्क बढ़ाने के लिए 210 सेंटर शुरू किए हैं. यह संख्या अगले कुछ दिनों में बढ़कर 400 से ज्यादा हो जाएगी.

विवेरो का नया कलेक्शन

आज का दौर फैशन का दौर है. कहते हैं कि फैशन के इस दौर में गारंटी की इच्छा न करें. यह बात काफ़ी हद तक सही भी है. इस दौर में सिर्फ़ स्टाइल की गारंटी मिलती है. हर बड़ा ब्रांड दूसरे ब्रांड से बेहतर और स्टाइलिश डिज़ाइन बाज़ार में उतारना चाहता है. इसके लिए वह हर उस चीज को मॉडर्न अवतार बनाता है, जो पहले स्टाइल स्टेटमेंट नहीं माना जाता था. विवेरो एक अंतरराष्ट्रीय ब्रांड है, जिसे क्लॉथिंग बिज़नेस में एक ख़ास मुकाम हासिल है. यूं तो यह कंपनी शर्ट, ट्राउजर्स एवं सूट के प्रोडक्शन के लिए पूरे यूरोप और इटली में प्रसिद्ध है, लेकिन युवाओं में फैशन के बढ़ते क्रेज़ को देखते हुए इसने इस बार अपनी छवि से अलग काम किया है. आजकल कपड़ों के अलावा पुरुष एवं महिलाओं में जूतों और सैंडलों के प्रति दिलचस्पी बढ़ती जा रही है. गर्मी के इस मौसम में चप्पल स्टाइल सैंडल का क्रेज़ बढ़ गया है. इस बात को ध्यान में रखते हुए विवेरो ने चप्पल स्टाइल खुले सैंडल्स का डिजाइन कलेक्शन भारतीय बाज़ार में उतारा है. इस कलेक्शन में आपको स्टाइलिश और आरामदायक सैंडल्स के कई बेहतरीन मॉडल मिल जाएंगे. ख़ासियत यह है कि यह सारा कलेक्शन इटैलियन लेदर से बना हुआ है.

इटैलियन लेदर से बने सामानों की सारी दुनिया में मांग है. व्हाइट, ब्लू और ब्राउन कलर्स के उक्त सैंडल नैप्पा लेदर से बने हैं. ख़ूबसूरत डिज़ाइन के साथ- साथ पहनने में भी ये आरामदायक हैं. रही बात क़ीमत की तो इनके लिए आपको लगभग 3750 रुपये चुकाने होंगे. एक व़क्त था, जब इनकी ख़रीददारी के लिए आपको अपने विदेशी दोस्तों पर निर्भर रहना पड़ता था, लेकिन अब आप इन्हें दिल्ली के एंबिएंस मॉल और सेलेक्ट सिटी वॉक से भी हासिल कर सकते हैं.

घड़ियों का टशन

इस कलेक्शन की क़ीमत 59,000 रुपये है. कंपनी ने टैग हायर सिल्वर स्टोन कैलीबर 11 ऑटोमेटिक क्रोनोग्राफ घड़ियों की रेंज के 3000 पीस भी लांच किए हैं.

आधुनिक ड्रेसिंग सेंस में घड़ियों की अपनी ख़ास जगह है. घड़ी अब केवल समय जानने का साधन भर नहीं, बल्कि स्टाइल स्टेटमेंट भी बन गई है. इसी ट्रेंड को आगे बढ़ाते हुए घड़ियों की कंपनी टैग हॉयर ने महिलाओं के लिए स्टाइलिश कलेक्शन की नई रेंज लांच की है. इसमें दो तरह की ख़ास घड़ियों को पेश किया गया है. महिलाओं के लिए तैयार की गई फार्मूला-1 लेडी स्टील और सेरामिक नॉयर की ख़ास बात यह है कि उक्त मॉडल टेनिस सुपर स्टार मारिया शारापोवा द्वारा डिज़ाइन किए गए हैं. इनमें सैफायर क्रिस्टल लगे हैं, इसके ब्लैक डायल में 3 संख्या के पास डेट विंडो है, मिनट और घंटे की सुइयों के कोनों पर चमकदार मार्कर हैं. इसके साथ ही मोनोक्रोम टैग हायर लोगो है. इस पर 12 की संख्या ऐरेबिक स्टाइल में लिखी है. इस कलेक्शन की क़ीमत 59,000 रुपये है. कंपनी ने टैग हायर सिल्वर स्टोन कैलीबर 11 ऑटोमेटिक क्रोनोग्राफ घड़ियों की रेंज के 3000 पीस भी लांच किए हैं. ब्लू रंग के डायल में सफेद सुइयां कमाल दिखती हैं. स्क्वायर शेप में ब्लू रंग का पॉलिश्ड स्टेनलेस स्टील 41 मिमी का केस शानदार है. डायल के साथ लगे स्टेनलेस स्टील फोल्डिंग क्लैस्प, फेस पर हॉयर का लोगो एवं सेफ्टी पुश बटन इस घड़ी को शालीन बनाते हैं. इस घड़ी की क़ीमत 33,500 रुपये है. चमकदार एवं पॉलिश्ड कोनों वाले स्टील केस में स्टेनलेस स्टील बेस दिया गया है. पॉलिश्ड सुइयों के छोर पर चमकीला मार्कर और संख्या 6 के पास डेट विंडो है.

अमेरिका को भारत से जोड़ेंगी जैकलिन

बॉलीवुड एक्ट्रेस जैकलिन फर्नांडीस यूएस-एशिया बिजनेस फोरम की ब्रांड एंबेसडर बन गई हैं. आइफा अवार्ड में धूम मचाने वाली मिस श्रीलंका जैकलिन के नाम की घोषणा पिछले दिनों की गई. दिल्ली के होटल ताज मान सिंह में आयोजित एक कार्यक्रम में यूएस-एशिया बिजनेस फोरम के संस्थापक अध्यक्ष केविन कॉल ने जैकलिन को अपने ग्रुप का ब्रांड एंबेसडर घोषित किया. जैकलिन ने फोरम के कार्यों की सराहना करते हुए कहा कि ब्रांड एंबेसडर के तौर पर उनकी प्राथमिकता यह होगी कि वह फोरम के मिशन को विश्व के दूसरे देशों के बीच आसानी से पहुंचा सकें. ग़ौरतलब है कि फोरम इस साल सितंबर में यूएएस के लॉस एंजेलिस में तीसरे यूएस-एशिया एक्सपो का आयोजन करने जा रहा है. यह जानकारी केविन कॉल ने दी. कार्यक्रम में केंद्रीय मंत्री डॉ. फ़ारुख़ अब्दुल्ला एवं सुबोधकांत सहाय के अलावा 46 देशों के प्रतिनिधि मौजूद थे. फ़ारुख़ अब्दुल्ला एवं सुबोधकांत सहाय ने यूएस-एशिया बिजनेस फोरम द्वारा किए जा रहे कार्यों की सराहना की और हर तरह की मदद देने का वायदा किया. उन्होंने कहा कि वर्तमान समय में विश्व जिस दौर से गुज़र रहा है, उसमें आपसी सहयोग द्वारा ही हम आगे बढ़ सकते हैं. भारत की अर्थव्यवस्था की सराहना करते हुए अब्दुल्ला ने कहा कि आज एक ओर जहां अमेरिका मंदी की मार से जूझ रहा है, वहीं भारत ने विश्व के सामने एक उदाहरण पेश किया है. शायद यही कारण है कि विश्व के कई देश भारत की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ा रहे हैं. ऐसे में यूएस-एशिया बिजनेस फोरम एक अच्छा प्लेटफार्म साबित हो सकता है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

भारतीय खेलों की यह त्रासदी रही है कि विश्व प्रतियोगिताओं में देश का नाम रोशन करने वाली महिला खिलाड़ियों के नाम उंगलियों पर गिने जा सकते हैं,

गोल्डन बूट के लिए मची होड़

डिएगो फॉरलान

लुइस फेबिआनो

गोंजालो हिग्वैन

गैब्रिएल हिंज

लियोनेल मेस्सी

आदित्य पूजन

फीफा वर्ल्ड कप

19वें फीफा वर्ल्ड कप का शबाब अपने चरम पर है. पूरी दुनिया की 32 टीमों के बीच श्रेष्ठता की यह लड़ाई दक्षिण अफ्रीका की सरज़मीं पर धीरे-धीरे महासंग्राम का रूप लेती जा रही है. हर टीम अपनी प्रतिद्वंद्वी टीमों से आगे निकलने के लिए हर नुस्खे आज़मा रही है. टीमों के बीच छिड़ी इस जंग के बीच खिलाड़ियों की अपनी प्रतिष्ठा भी दांव पर है. इंग्लैंड के वायने रूनी हों या ब्राजील के लुइस फेबिआनो, जर्मनी के मीरोस्लाव क्लोस हों या अर्जेंटीना के लियोनेल मेस्सी या फिर कार्लोस तावेज, हर खिलाड़ी विपक्षी टीम की रक्षा पंक्ति को भेदते हुए बॉल को गोल पोस्ट के अंदर पहुंचाने के लिए जीतोड़ कोशिश कर रहा है. इसका मक़सद केवल अपनी टीम की जीत का रास्ता तैयार करते हुए विश्व चैंपियनशिप का ख़िताब हासिल करना ही नहीं है, बल्कि उनकी निगाहें गोल्डन बूट के उस प्रतिष्ठित अवार्ड पर भी टिकी हैं, जो फुटबॉल के मैदान पर खिलाड़ियों की व्यक्तिगत योग्यता और तेज़ी का सबसे बड़ा पैमाना है.

डेविड विल्ला

मीरोस्लाव क्लोस

2006 के फीफा वर्ल्ड कप में जर्मनी के क्लोस ने गोल्डन बूट अवार्ड जीता तो 1970 के बाद यह उपलब्धि हासिल करने वाले वह पहले जर्मन खिलाड़ी बने. 1970 में गर्ड मूलर ने यह अवार्ड अपने नाम किया था. हालांकि यदि वह इस साल फिर से गोल्डन बूट अवार्ड विजेता बनते हैं तो लगातार दो बार यह ख़िताब जीतने वाले विश्व के पहले खिलाड़ी बन जाएंगे. क्लोस ने ऑस्ट्रेलिया के ख़िलाफ़ अपनी टीम की 4-0 की जीत में एक गोल करके इस दिशा में पहला क़दम बढ़ा ज़रूर दिया है, लेकिन उनके लिए चुनौतियां कम नहीं हैं. इंग्लैंड के वायने रूनी, अर्जेंटीना के लियोनेल मेस्सी, गोंजालो हिग्वैन एवं गैब्रिएल हिंज, स्पेन के फर्नांडो टॉरेस एवं डेविड विल्ला, उरूग्वे के डिएगो फॉरलान, पराग्वे के रोक सांता क्रूज और ब्राजील के लुइस फेबिआनो उनके रास्ते में बाधाएं खड़ी कर सकते हैं.

अब तक करीब 60 मैचों में भाग ले चुके रूनी का प्रति मैच औसत एक गोल के करीब है. मतलब यह कि रूनी हर मुक़ाबले में औसतन एक बार गेंद को गोल पोस्ट के अंदर पहुंचाने में कामयाब होते हैं. 2006 के वर्ल्ड कप फुटबॉल टूर्नामेंट में रूनी पूरी तरह फिट नहीं थे, लेकिन इस बार यदि वह अपनी लय पाने में सफल होते हैं तो गोल्डन बूट अवार्ड अपने नाम करके हमवतन गैरी लिनेकर की 1986 की उपलब्धि को दोहरा सकते हैं. फीफा वर्ल्ड कप 2010 की सबसे मज़बूत टीमों में शामिल ब्राजील की टीम इस प्रतियोगिता में कैसा प्रदर्शन करती है, इसका काफी कुछ दारोमदार लुइस फेबियानो के कंधों पर है. पिछले साल ब्राजील जब कन्फेडरेशन कप विजेता बना था तो पांच मुक़ाबलों में पांच गोल करके फेबियानो टूर्नामेंट में सबसे ज़्यादा गोल करने वाले खिलाड़ी बने थे. यदि वह अपने इस प्रदर्शन को वर्ल्ड कप में दोहराने में कामयाब होते हैं तो न केवल ब्राजील ख़िताब जीतने के करीब पहुंच सकता है, बल्कि फेबियानो भी गोल्डन बूट अवार्ड के नज़दीक पहुंच जाएंगे.

अर्जेंटीना के लियोनेल मेस्सी मौजूदा दौर में विश्व फुटबाल के सबसे महंगे खिलाड़ियों में गिने जाते हैं. मैदान पर उनकी चपलता और गोल करने की क़ाबिलियत उन्हें गोल्डन बूट अवार्ड का प्रबल दावेदार बनाती है. हालांकि कई लोगों का मानना है कि मेस्सी जब अपने क्लब बार्सिलोना के लिए खेलते हैं तो उनका प्रदर्शन ज़्यादा दमदार होता है, लेकिन अपनी राष्ट्रीय टीम का प्रतिनिधित्व करते हुए वह इसे दोहराने में कामयाब नहीं हो पाते. स्पेन के फर्नांडो टॉरेस और डेविड विल्ला भी इस ख़िताब के प्रबल दावेदारों में शुमार किए जा सकते हैं. विल्ला स्पेन के लिए अंतरराष्ट्रीय मैचों में सबसे ज़्यादा गोल करने वाले खिलाड़ियों की सूची में दूसरे नंबर पर हैं, जबकि टॉरेस के गोल ने स्पेनिश टीम को 2008 के यूरो कप में जीत दिलाई थी. गोल्डन बूट अवार्ड की दौड़ में फ्रांस के निकोलस अनेल्का की दावेदारी को भी कम करके नहीं आंका जा सकता. इस सीजन में चेल्सी क्लब के लिए खेलते हुए अनेल्का ने बेहतरीन प्रदर्शन किया है, हालांकि मेस्सी की तरह ही राष्ट्रीय टीम का प्रतिनिधित्व करते हुए अनेल्का भी अपने प्रदर्शन का स्तर बरक़रार नहीं रख पाते.

फुटबाल के मैदान पर अपनी श्रेष्ठता साबित करने के लिए टीमों के बीच छिड़ी इस लड़ाई में खिलाड़ियों की आपसी प्रतिद्वंद्विता मुक़ाबले को और ज़्यादा रोचक बनाती है. जिस तरह फीफा वर्ल्ड कप 2010 के विजेता के बारे में कोई भविष्यवाणी करना ख़तरे से खाली नहीं है, उसी तरह गोल्डन बूट अवार्ड जीतने वाले खिलाड़ी के बारे में भी कोई कयास लगाना काफी मुश्किल है. ख़ासकर इसलिए भी कि अक्सर कोई अंडरडॉग इसे अपने नाम करने में कामयाब हो जाता है. 1998 के फीफा वर्ल्ड कप में चैंपियन बनी फ्रांस की टीम के सेंटर फॉरवर्ड स्टीफेन गुईवार्क पूरे टूर्नामेंट में एक बार भी गेंद को गोल पोस्ट के अंदर पहुंचाने में सफल नहीं हो पाए थे, जबकि टूर्नामेंट की शुरुआत में उन्हें गोल्डन बूट अवार्ड के सबसे मज़बूत दावेदारों में गिना जा रहा था. हर मुक़ाबले के साथ दर्शकों के बढ़ते उत्साह और खिलाड़ियों की तेज़ होती धड़कनों के बीच यह देखना रोचक होगा कि गोल्डन बूट का ताज इस बार किसके सिर बंधता है.

aditya@chauthiduniya.com

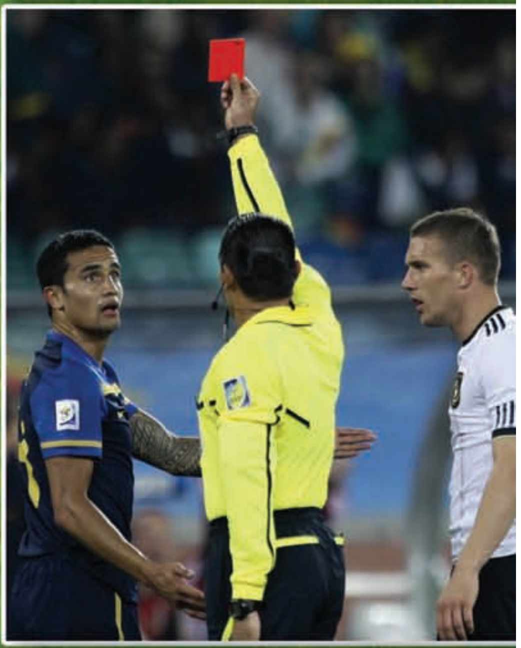

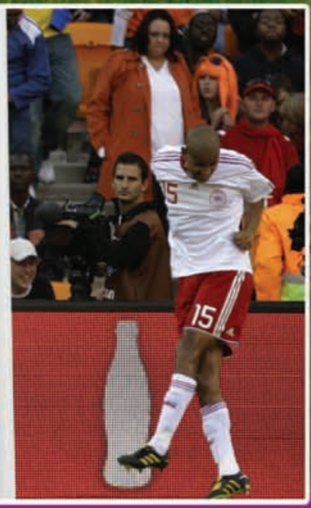

सायना नेहवाल : भारतीय खेल जगत की नई उम्मीद

पिछले दिनों चेन्नई में खेले गए योनेक्स-सनराइज इंडिया ओपन ग्रैंड प्रिक्स टूर्नामेंट में महिलाओं का ख़िताब जीत कर सायना नेहवाल ने अपने करियर की एक बड़ी कमी पूरी कर ली. 20 साल की छोटी सी उम्र में वर्ल्ड रैंकिंग में पांचवें स्थान तक का सफ़र तय कर चुकीं सायना पर अक्सर यह आरोप लगते थे कि वह विदेशी धरती पर अच्छा प्रदर्शन करती हैं, लेकिन भारतीय मैदानों पर उनका प्रदर्शन उम्मीदों पर खरा नहीं उतर पाता. इन आरोपों में सच्चाई भी है, क्योंकि दिसंबर 2009 में खेले गए सैयद मोदी मेमोरियल इंटरनेशनल इंडिया ग्रैंड प्रिक्स में ख़िताबी जीत के अलावा भारतीय ज़मीन पर खेले गए अंतरराष्ट्रीय स्तर के टूर्नामेंटों में वह अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाई थीं. सैयद मोदी ग्रैंड प्रिक्स में उनकी जीत को भी ज़्यादा महत्वपूर्ण नहीं माना जा सकता, क्योंकि विश्व बैडमिंटन की शीर्ष खिलाड़ियों ने इसमें भाग नहीं लिया था. योनेक्स-सनराइज इंडिया ओपन ग्रैंड प्रिक्स में भी चीन की महिला खिलाड़ी तो शरीक़ नहीं हुईं, लेकिन मलेशियाई और कोरियाई खिलाड़ियों की मौजूदगी से प्रतियोगिता का स्तर अंतरराष्ट्रीय बना रहा. सायना ने फाइनल में मलेशिया की चू वांग म्यू को हराया, जिन्हें टूर्नामेंट में दूसरी वरीयता हासिल थी. वूमेंस सिंगल्स में सायना के अलावा ज्वाला गत्ता और वी दीजू की जोड़ी ने मिक्स्ड डबल्स के फाइनल में याओ लाइ और चायत की जोड़ी को हराकर ख़िताब जीता. मेंस सिंगल्स में भारत की प्रमुख उम्मीद चेतन आनंद फाइनल में इंडोनेशिया के युनुस आलमस्या से हार गए तो वूमेंस डबल्स के फाइनल में ज्वाला गत्ता और अश्विनी पोनप्पा की जोड़ी को पराजित होना पड़ा.

कभी भारतीय खेल जगत के नए वूमन फेस के रूप में अपनी पहचान दर्ज कराने वाली सानिया मिर्ज़ा भले ही केवल तेईस साल की उम्र में टेनिस को अलविदा कहने के बारे में घोषणाएं कर रही हों, लेकिन बैडमिंटन कोर्ट में सायना नेहवाल की मौजूदगी ने भारतीय महिलाओं के लिए उम्मीद की नई किरण जगाई है. हरियाणा के हिसार में पैदा हुई और आंध्र प्रदेश के हैदराबाद में पली-बढ़ी सायना ने पिछले कुछ सालों में टेनिस की अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में बेहतरीन प्रदर्शन करते हुए यह उम्मीद बंधाई है कि पीटी उषा, अश्विनी नाचप्पा, अमिता मोदी एवं सानिया मिर्ज़ा की तरह महिला खेलों में भारत की उपस्थिति आगे भी दर्ज होती रहेगी. बैडमिंटन कोर्ट पर सायना नेहवाल को पहली प्रसिद्धि तब मिली, जब 2006 में फिलीपींस ओपन जीत कर वह किसी फोर स्टार टूर्नामेंट में ख़िताबी जीत हासिल करने वाली पहली भारतीय महिला खिलाड़ी बनीं. सायना ने इस टूर्नामेंट में पहली बार खुद से ऊंची रैंकिंग वाले खिलाड़ियों को हराया. 2006 में ही बीएमडब्ल्यू वर्ल्ड जूनियर चैंपियनशिप में भी अच्छे प्रदर्शन का उनका सिलसिला जारी रहा, लेकिन फाइनल में उन्हें चीन की वांग झियांग से हारना पड़ा. सायना ने यह कमी दो साल बाद पूरी कर दी, जब 2008 में यह ख़िताब अपने नाम कर वह यह उपलब्धि हासिल करने वाली पहली भारतीय खिलाड़ी बनीं. इसके बाद तो सफलताओं का ऐसा सिलसिला शुरू हुआ कि सायना को भारतीय खेल जगत की नई क्वीन कहा जाने लगा. ओलंपिक में बैडमिंटन की व्यक्तिगत स्पर्द्धाओं में क्वार्टर फाइनल तक पहुंचने वाली भी वह पहली भारतीय महिला खिलाड़ी बनीं. हालांकि क्वार्टर फाइनल मुक़ाबले में वर्ल्ड रैंकिंग में 16वीं वरीयता प्राप्त मारिया क्रिस्टिन युलियांती से मिली हार के चलते उन्हें ओलंपिक पदक से वंचित रहना पड़ा. सितंबर 2008 में सायना ने चायना-ताइपे ओपन का ख़िताब अपने नाम किया तो इसी साल दिसंबर में वह वर्ल्ड सुपर सीरीज़ के सेमी फाइनल में पहुंचने में भी सफल रहीं. जून 2009 में इंडोनेशिया ओपन जीत कर बीडब्ल्यूएफ सुपर सीरीज़ प्रतियोगिताओं में जीत हासिल करने वाली वह पहली भारतीय महिला खिलाड़ी बनीं. सुपर सीरीज़ टूर्नामेंट को बैडमिंटन की विश्व प्रतियोगिताओं में शीर्ष स्थान हासिल है और सायना से पहले केवल प्रकाश पादुकोण और पुलेला गोपीचंद ही इस स्तर की प्रतियोगिता (ऑल इंग्लैंड चैंपियनशिप) में ख़िताब जीत पाए थे. इंडोनेशिया ओपन जीत कर सायना ने इनकी बराबरी कर ली. इसके बाद उन्होंने सुपर सीरीज़ फाइनल्स में सेमी फाइनल तक का सफ़र तय किया तो 2010 में वह ऑल इंग्लैंड सुपर सीरीज़ के सेमी फाइनल में पहुंचने में भी सफल रहीं. इसी साल हुई एशियन बैडमिंटन चैंपियनशिप में तीसरे स्थान पर रहते हुए सायना ने कांस्य पदक पर क़ब्ज़ा किया तो इंडियन ओपन ग्रैंड प्रिक्स में ख़िताब जीत कर अपने देश में खेलते हुए अत्यधिक दबाव में रहने की धारणा को उन्होंने ख़ारिज़ कर दिया. भारतीय खेलों की यह त्रासदी रही है कि विश्व प्रतियोगिताओं में देश का नाम रोशन करने वाली महिला खिलाड़ियों के नाम उंगलियों पर गिने जा सकते हैं, लेकिन हाल के सालों में भारत की महिला क्रिकेट टीम ने कुछ उल्लेखनीय जीतें हासिल की हैं तो मुक्केबाज़ी में मैरी कॉम ने विश्व चैंपियनशिप का ख़िताब जीत कर अंतरराष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताओं में भारत के लिए नई उम्मीद जगाई है. फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि आने वाले कुछ सालों में भारतीय खेल जगत को सायना नेहवाल से ही सबसे ज़्यादा उम्मीदें होंगी. उन्होंने अपने अंतरराष्ट्रीय करियर की शुरुआत में इन उम्मीदों पर खरा उतरने की आस भी बंधाई है, लेकिन उनके लिए चुनौतियां तो अभी शुरू ही हुई हैं. कम उम्र में सफलता के शीर्ष पर पहुंचने वाले खिलाड़ी अक्सर प्रसिद्धि और पैसे के जाल में उलझ कर रह जाते हैं. फिर अंतरराष्ट्रीय खेलों के व्यस्त शेड्यूल के साथ तालमेल बैठाना भी उनके लिए ख़ासा मुश्किल होता है. सायना यदि इन कमज़ोरियों से पार पाने में कामयाब रहती हैं तो भारतीय खेल प्रेमियों के लिए इससे ज़्यादा खुशी की बात शायद ही कुछ और हो.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

दिल से बेहद संवेदनशील एवं रोमांटिक प्रिया अपने जीवनसाथी के रूप में एक सिद्धांतवादी और धूमपान-झूठ जैसी गंदी आदतों से दूर रहने वाले व्यक्ति की कल्पना करती है.

सेंसर बोर्ड, फिल्में और राजनीति–2

विज्ञापन का खेल

राजेश एस कुमार

सेंसर बोर्ड की कैंची सामाजिक दुष्प्रभाव की दुहाई देते हुए फिल्मों को तो अपने दोहरे मापदंड से काटती–छांटती रहती है, लेकिन वह यह भूल जाती है कि समाज पर फिल्मों से कहीं ज़्यादा असर विज्ञापनों का होता है, जो दिन में सैकड़ों बार दिखाए जाते हैं. अगर सेंसर बोर्ड को इस बात का खयाल होता तो वह विज्ञापनों को भी उसी कैंची से सेंसर करता, जिससे फिल्मों को करता है. सेंसर की दोहरी मानसिकता का नमूना देखिए कि जहां एक ओर रेडियो और टीवी पर कंडोम इस्तेमाल करने के फ़ायदे बताने वाले कई विज्ञापनों को छूट मिली हुई है, वहीं फिल्म हैलो में गुल पनाग द्वारा बोले गए शब्द कंडोम को हटाने का आदेश दिया गया है. इसी तरह अख़बारों और टीवी पर दिखाए जाने वाले गर्भ निरोधक गोलियों एवं कंडोम के विज्ञापनों में आपत्तिजनक और अश्लील चित्रों का प्रयोग होता है, लेकिन आर्थिक महत्व को देखते हुए धड़ल्ले से इनका प्रसारण और प्रकाशन हो रहा है.

क्या उक्त विज्ञापन लोगों तक नहीं पहुंचते या फिर उनसे पैसा ज़्यादा मिलता है? ऐसे में सवाल उठना लाज़िमी है कि जब फिल्मों के लिए सेंसर है तो विज्ञापनों के लिए क्यों नहीं?

दरअसल विज्ञापनों और फिल्मों का निर्माण एक दूसरे के पूरक के तौर पर किया जाता है. अलबत्ता फिल्में काफी हद तक विज्ञापनों पर ही निर्भर रहती हैं. जब फिल्में बननी शुरू हुईं, उससे पहले ही विज्ञापनों का दौर शुरू हो चुका था. पहले प्रिंट माध्यमों से विज्ञापन होता था. बाद में सिनेमाघरों में फिल्मों के प्रदर्शन से पूर्व विज्ञापन दिखाने का ट्रेंड शुरू हुआ, जो आज तक जारी है. इन्हें एक तरह से शॉर्ट फीचर फिल्मों की श्रेणी में रख सकते हैं. दोनों ही चलचित्र माध्यमों के ज़रिए अपना–अपना प्रभाव रखते हैं. इसलिए होना तो यह चाहिए कि जितना ध्यान फिल्मों को सेंसर करते समय रखा जाता है, उतना ही ध्यान विज्ञापनों को सेंसर करते वक़्त रखा जाए. ऐसा इसलिए भी, क्योंकि फिल्मों को तो विभिन्न वर्गों का सर्टिफिकेट देकर एक ख़ास वर्ग को देखने से रोका जा सकता है, लेकिन विज्ञापनों का सेंसर न होने से वे सभी उम्र के लोगों को बराबर दिखाई देते हैं. केबल और डीटीएच के इस दौर में दिन–रात विज्ञापनों से ही टीवी चैनल्स की कमाई होती है. ऐसे में सभी तरह के अनसेंसर्ड कमर्शियल विज्ञापन दिन–रात प्रसारित होते रहते हैं.

हालांकि पिछले साल एक दर्शक की शिकायत पर बोर्ड ने अंडरवियर के दो विज्ञापनों पर प्रतिबंध लगाया था. इन विज्ञापनों में एक मॉडल अंडरवियर को धोते हुए अश्लील एक्प्रेशन देती है. इसी तरह एक डियोड्रेंट का विज्ञापन भी उत्तेजकता की अति के चलते बैन किया गया. पेप्सी के विज्ञापन में एक नाबालिग बच्चे को कोल्ड ड्रिंक की ट्रे को खिलाड़ियों के लिए ग्राउंड में ले जाते हुए दिखाया गया था. बाद में ह्यूमन राइट्स ग्रुप ने शिकायत दर्ज करते हुए कहा कि इससे बालश्रम को बढ़ावा मिलता है. नतीजतन बोर्ड को यह विज्ञापन प्रतिबंधित करना पड़ा. इसी तरह रिन और टाइड डिटर्जेंट की आपसी प्रतिस्पर्धा के चलते सेंसर को अपना कर्तव्य याद आया था.

यहां ग़ौर करने वाली बात यह है कि उक्त सभी प्रतिबंध जनता की शिकायत के बाद लगाए गए. मतलब यह कि उससे पहले बोर्ड को कोई सुध ही नहीं थी.

पहले ऐसा नहीं था. दूरदर्शन के दौर में बोर्ड फिर भी काफी सजग था. जितना सख्त वह फिल्मों के लिए था, उतना ही विज्ञापनों के लिए. यहां तक कि सप्ताहांत में दिखाए जाने वाले विज्ञापनों और फिल्मों को सेंसर के अलावा दूरदर्शन द्वारा भी काटा–छांटा जाता था. कुछ ऐसे उदाहरणों पर नज़र डालते हैं. कई साल पहले कामसूत्र कंडोम के विज्ञापन पर जब संसद में सवाल उठा, तब दूरदर्शन पर उसका प्रसारण बंद किया गया और एडवर्टाइजिंग स्टैंडर्ड्स काउंसिल ऑफ इंडिया (एएससीआई) को भी शिकायत भेजी गई. अक्टूबर 1991 की डेबोनियर पत्रिका में मार्क रॉबिंसन और पूजा बेदी के अश्लील विज्ञापन पर भी काफी शोरशराबा हुआ था. मिलिंद सोमन और मधु सप्रे पर नग्नावस्था में फिल्माया गया एक शू कंपनी का विज्ञापन तो बहुचर्चित ही है. ग़ौरतलब है कि इसे भी बैन किया गया था. लेकिन आज ऐसे सैकड़ों विज्ञापन हिंसा और अश्लीलता को बढ़ावा दे रहे हैं और बोर्ड ख़ामोश है. जब कोई जागरूक दर्शक अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारी के नाते शिकायत दर्ज कराता है, तब जाकर बोर्ड की नींद टूटती है. छोटे निर्माताओं की फिल्मों एवं विज्ञापनों के लिए बोर्ड को सारे क़ानून और सांस्कृतिक मूल्य याद आ जाते हैं, जबकि बड़े निर्माताओं की फिल्मों में क्रिएटिविटी, कला की दृष्टि या कहानी की मांग का बहाना बनाकर कुछ भी दिखा दिया जाता है. यही वजह है कि आज लोग सेंसर बोर्ड की प्रमाणिकता पर सवाल उठाने लगे हैं.

rajeshy@chauthiduniya.com

मिसेज हिटलर नेहा

नेहा धूपिया इन दिनों बहुत उत्साहित हैं. वजह, उन्हें उनकी पसंदीदा स्क्रिप्ट वाली एक फिल्म मिल गई है. अनिल शर्मा द्वारा निर्देशित फिल्म डियर फ्रेंड हिटलर एक अलग तरह की कहानी है. इसमें नेहा इवा ब्राउन का चरित्र निभा रही हैं. इवा ब्राउन हिटलर की पत्नी थीं. अपने रोल के बारे में नेहा कहती हैं कि वह इतिहास की छात्रा रह चुकी हैं, इसलिए इस रोल को निभाने के लिए काफी उत्साहित हैं. यह फिल्म हिटलर के तानाशाही व्यक्तित्व को नहीं दर्शाएगी, बल्कि पत्नी इवा एवं अन्य करीबियों के साथ हिटलर के रिश्तों को दिखाएगी. इवा के किरदार को बख़ूबी निभाने के लिए नेहा ने इतिहास की कई किताबें खंगाल डाली हैं. उन्होंने कहा कि जब निर्देशक राकेश ने उनसे रोल के लिए पूछा, तभी उन्हें यह विषय काफी पसंद आ गया था. नेहा बताती हैं कि फिल्म का नाम डियर फ्रेंड हिटलर एक ख़ास वजह से रखा गया. दरअसल गांधी जी ने हिटलर को दो पत्र लिखे थे, तब उन्होंने हिटलर को डियर फ्रेंड कहकर संबोधित किया था. इस फिल्म का निर्माण आम्रपाली मीडिया विजन के बैनर तले हो रहा है. निर्देशक राकेश रंजन हैं. निर्देशक राकेश की यह पहली फिल्म है. वैसे राकेश इम्तियाज अली के सहायक रहे हैं. इस फिल्म के साथ इम्तियाज अली क्रिएटिव कंसल्टेंट के रूप में जुड़े हुए हैं. सशक्त अभिनेता अनुपम खेर इस फिल्म में हिटलर की भूमिका में हैं. देखना यह है कि नेहा इवा के किरदार में कितनी खरी उतरती हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

प्रिव्यू

सालों बाद फिर –मिलेंगे मिलेंगे

फिल्म जब वी मेट के बाद शाहिद कपूर और करीना कपूर के प्रेम की चर्चाओं में एक नया रंग आया था, उनके गहरे प्रेम की अफवाहें अलगाव में बदल गई थीं. इसी के साथ दर्शक भी पर्दे पर इस ख़ूबसूरत जोड़ी को साथ देखने से वंचित हो गए थे, लेकिन अब यह जोड़ी एक बार फिर से पर्दे पर रोमांस करती हुई दिखेगी और फिल्म होगी मिलेंगे–मिलेंगे.

फिल्म की कहानी कुछ यूं है कि शाहिद कपूर (अमित) एवं प्रिया (करीना कपूर) बैंकॉक के एक यूथ फेस्टिवल में मिलते हैं. हमउम्र एवं कॉलेज जाने वाली लड़कियों से बिल्कुल अलग प्रिया सिद्धांतों पर जीने में विश्वास रखती है. दिल से बेहद संवेदनशील एवं रोमांटिक प्रिया अपने जीवनसाथी के रूप में एक सिद्धांतवादी और धूमपान–झूठ जैसी गंदी आदतों से दूर रहने वाले व्यक्ति की कल्पना करती है. अमित उसकी इन चाहतों से बिल्कुल जुदा एक मस्तमौला इंसान है, जो शराब का सेवन बेफिक्र होकर करता है, हर बात में झूठ का सहारा लेता है और चेन स्मोकर है. प्रिया की पर्सनल डायरी गलती से अमित के हाथ लग जाती है और वह प्रिया की पसंद–नापसंद को जान लेता है. उसके बाद वह प्रिया को प्रभावित करने के लिए बिल्कुल उसके सपनों के राजकुमार जैसा बनकर ख़ुद को प्रस्तुत करता है. वह प्रिया को अपनी तरफ आकर्षित करने के लिए हरसंभव कोशिश करता है और बैंकॉक में घूमते हुए वे दोनों काफी करीब आ जाते हैं. फेस्टिवल के अंत में वे दिल्ली आने वाले होते हैं, तभी प्रिया अमित के कमरे में अपनी पर्सनल डायरी देख लेती है. वह समझ जाती है कि अमित ने उसे बेवकूफ बनाया है. प्रिया उसी वक्त अमित के पास जाती है, जहां वह प्रिया के साथ की गई चालाकी के बारे में अपने दोस्तों को बता रहा होता है. वह कहता है कि उसने प्रिया के साथ धोखाधड़ी की, लेकिन उससे सच्चा प्यार भी करता है और वह बिल्कुल वैसा ही इंसान बनेगा, जैसा प्रिया चाहती है, लेकिन प्रिया उसकी बातों से संतुष्ट नहीं होती और अमित से रिश्ता तोड़ लेती है. दिल्ली आने के बाद दोनों एक दूसरे से अंजान हो जाते हैं. सालों बीत जाने के बाद अमित अमेरिका से बिजनेस मैनेजमेंट की डिग्री लेकर लौटता है, उसकी पर्सनालिटी में पूरी तरह बदलाव आ जाता है. वह बिल्कुल वैसा ही इंसान बन जाता है, जैसा प्रिया को पसंद है. उधर प्रिया की भी ज़िंदगी बदल जाती है, वह एक सफल म्यूजिक वीडियो डायरेक्टर है और एक पॉप सिंगर के साथ प्रेम में रहती है. उसके साथ प्रिया की शादी होने ही वाली होती है कि अमित से उसका एक बार फिर सामना हो जाता है. बोनी कपूर द्वारा निर्मित इस फिल्म के निर्देशक हैं सतीश कौशिक. कहानी सिराज अहमद की है और संगीत निर्देशन हिमेश रेशमिया का. कलाकार हैं करीना कपूर, शाहिद कपूर, आरती छाबड़िया, डेल्नाज पॉल एवं हिमानी शिवपुरी. फिल्म आगामी 9 जुलाई को रिलीज होगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 28 जून-04 जुलाई 2010

www.chauthiduniya.com

भाजपा करेगी पलटवार

सरोज सिंह

बिहार के गांवों में एक कहावत बहुत प्रचलित है, न्योता देकर विज्जे ग़ायब. इन दिनों शादी-विवाह का मौसम है और यह कहावत जहां-तहां सुनी भी जा रही है, लेकिन पटना में भाजपा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक में जब यह कहावत गूंजने लगी तो वातानुकूलित सभागार में भी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष नितिन गडकरी समेत तमाम आला नेताओं के माथे से पसीना टपकने लगा. एक बार तो इन नेताओं को भरोसा ही नहीं हुआ कि नीतीश भाजपा नेताओं के सम्मान में आयोजित डिनर पार्टी रद्द करने की सार्वजनिक घोषणा करके भाजपा को धर्मसंकट में डाल देंगे, लेकिन नरेंद्र मोदी के साथ अपनी तस्वीर वाले विज्ञापन छप जाने से ख़फ़ा नीतीश कुमार ने मुसलमानों की सहानुभूति बटोरने के लिए डिनर पार्टी रद्द करने का तीर चलाकर अपनी सरकार ही दांव पर लगा दी. उधर भाजपा के केंद्रीय नेतृत्व ने राजनीतिक समझदारी का परिचय देते हुए नीतीश को मुसलमानों के नाम पर शहीद नहीं होने दिया. मौजूदा संकट टालने और कार्यकर्ताओं के मूड को भांपने के बाद भाजपा ने सही समय पर पलटवार का फ़ैसला किया है. पार्टी ने तय किया है कि अब स्वाभिमान से समझौता नहीं होगा और नीतीश को उनके ही स्टाइल में जवाब दिया जाएगा.

पिछले पौने पांच सालों में ऐसे कई मौके आए, जब बिहार भाजपा ने अपमान का घूंट पीकर भी गठबंधन धर्म निभाया. हालांकि इस कारण कार्यकर्ताओं का मनोबल काफी गिरा और उनके स्वाभिमान को ठेस पहुंची. उप मुख्यमंत्री सुशील मोदी एवं उनके समर्थकों को छोड़कर भाजपा का एक बड़ा तबका हमेशा यह चाहता था कि पार्टी का जो वाज़िब हक़ बनता है, उसे हासिल किया जाए. पार्टी अपने मूल सिद्धांतों से न भटके और बिहार के विकास का बराबर श्रेय भाजपा को मिले, लेकिन सूबे में जो कुछ विकास हुआ, उसका श्रेय सिर्फ़ नीतीश को मिला और भाजपा देखती रह गई. छोटे भाई की भूमिका निभाते-निभाते भाजपा को बहुत सारे राजनीतिक फ़ैसले नीतीश के दबाव में करने पड़े. लोकसभा चुनाव में किशनगंज की सीट छोड़ कर भाजपा ने एक तरह से नीतीश के सामने समर्पण ही कर दिया. उस समय भी पार्टी के कई मंत्रियों एवं नेताओं ने इसका विरोध किया, पर राष्ट्रीय राजनीति की दुहाई देकर मामले को शांत कर दिया गया, लेकिन कार्यकर्ताओं में गुस्सा था और जदयू यह सीट हार गया. इसी तरह किशनगंज में ही एएमयू की शाखा खोलने एवं ज़मीन आवंटित करने के मामले में भी भाजपा की नहीं चली. अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के लाख विरोध के बावजूद नीतीश सरकार ने एएमयू की शाखा खोलने के लिए ज़मीन आवंटित कर दी. मंत्रिमंडल में फेरबदल एवं विस्तार में भी भाजपा नेता नीतीश की तरफ टकटकी लगाए रहे, पर नीतीश ने यह कह दिया कि अब चुनाव नज़दीक है, इसलिए विस्तार का कोई मतलब नहीं रह जाता. जबकि इससे पहले सुशील मोदी ने सार्वजनिक तौर पर कहा था कि बहुत जल्द मंत्रिमंडल का विस्तार होने वाला है.

नीतीश कुमार ने डिनर पार्टी रद्द करके मुसलमानों को रिझाने का एक बड़ा दांव खेला, लेकिन भाजपा ने तय किया कि नाख़ून काट कर शहीद होने का मौक़ा नीतीश को न दिया जाए. नरेंद्र मोदी को आगे करके भाजपा ने अब प्रदेश में अपनी खोई प्रतिष्ठा वापस पाने की तैयारी शुरू कर दी है.

भाजपा-जदयू रिश्तों में नई खटास गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी को लेकर पैदा हुई है. मुसलमानों के बीच अपनी छवि चमकाने में जुटे नीतीश यह नहीं चाहते थे कि गुजरात दंगे का आरोप झेल रहे नरेंद्र मोदी बिहार आएं. लेकिन चूंकि यह राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक थी, इसलिए भाजपा ने इस बार नीतीश को मना कर दिया. सिर्फ़ इतना तय हुआ कि नरेंद्र मोदी का सारा भाषण विकास के आसपास ही घूमेगा. ग़ौरतलब है कि लोकसभा चुनाव में नीतीश की राय के कारण मोदी चुनाव प्रचार के लिए बिहार नहीं आ सके थे. भाजपा नेताओं के सम्मान में नीतीश ने डिनर पार्टी तय कर दी थी. राजनीतिक गलियारों में इस डिनर पार्टी के लजीज व्यंजनों के साथ ही मौके पर होने वाली राजनीतिक चर्चाओं की बातें तैरने लगीं, लेकिन बीते 12 जून को बिहार के अख़बारों में छपे एक विज्ञापन ने डिनर पार्टी के साथ ही सूबे की जदयू-भाजपा गठबंधन सरकार पर भी ग्रहण लगा दिया. प्रकाशित विज्ञापन में नीतीश एवं नरेंद्र मोदी की जो तस्वीर थी, उसमें वे एक-दूसरे से हाथ मिला रहे थे. यह विज्ञापन छपते ही पटना का राजनीतिक पारा काफी चढ़ गया. विज्ञापन कैसे छपा, इसकी जांच शुरू हो गई. विज्ञापन छापने वाले अख़बार तो परेशान रहे ही, विज्ञापन जारी करने वाली एजेंसी के यहां छापा तक पड़ गया. सफ़ाई देते-देते गला सूख गया तो विज्ञापन देने वालों से बयान दिलाया गया कि विज्ञापन के पीछे कुछ भी ग़लत मंशा नहीं थी, लेकिन नीतीश का गुस्सा शांत होने का नाम नहीं ले रहा था. अपने ख़ास सलाहकारों के साथ विचार के बाद नीतीश ने भाजपा नेताओं को बता दिया कि डिनर में नरेंद्र मोदी को न लाया जाए. इसके बाद तो भाजपा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक का एजेंडा ही बदल गया. मंत्रियों, नेताओं एवं कार्यकर्ताओं का गुस्सा इतना बढ़ गया कि कुछ मंत्रियों ने इस्तीफ़े की पेशकश तक कर डाली. अपमानित महसूस कर रहे कार्यकर्ताओं ने नीतीश का पुतला फूंकने का इरादा तक कर लिया, पर समझाने पर वे मान गए. दरअसल राष्ट्रीय नेताओं के साथ इस तरह के व्यवहार की उम्मीद प्रदेश के भाजपा नेताओं को नहीं थी. भाजपा अब धर्मसंकट की स्थिति में आ गई थी. बिना नरेंद्र मोदी के डिनर पार्टी में जाना आत्मघाती क़दम माना गया. आला नेताओं ने विचार के बाद नीतीश को बता दिया कि समय अभाव के कारण होटल चाणक्य में रविशंकर प्रसाद की पार्टी में ही सारे नेता रात का भोजन ले लेंगे. तब तक दोपहर हो गई थी और पत्रकारों को दिए गए भोज में नीतीश ने विज्ञापन छपवाने वालों के ख़िलाफ़ क़ानूनी कार्रवाई की घोषणा कर डाली. नरेंद्र मोदी के ख़िलाफ़ गुस्सा इतना बढ़ गया कि उन्होंने बाढ़ राहत के लिए गुजरात से आए पैसे लौटाने की बात भी कह दी. मुख्यमंत्री ने कहा, भारतीय संस्कृति यह है कि संकट के समय दी गई मदद का ढिंढोरा नहीं पीटा जाता. इस बीच लालू प्रसाद ने राजनीतिक नब्ज़ पकड़ते हुए नीतीश कुमार को भाजपा से गठबंधन तोड़ देने की चुनौती दे डाली. उन्होंने कहा, गुजरात दंगे के आरोपी नरेंद्र मोदी के साथ तस्वीर खिंचवाने वाले नीतीश मुसलमानों के हितैषी कैसे हो सकते हैं? राजनीतिक नफ़ा-नुकसान का आकलन करने के बाद नीतीश कुमार ने डिनर रद्द करने की सार्वजनिक घोषणा करके भाजपा नेताओं को चौंका दिया. जो बात अब तक पर्दे में थी, वह अब बाहर आ गई थी. इसी का मलाल भाजपा नेताओं को खाए जा रहा था. देर रात तक बैठकों का दौर चलता रहा और तमाम संभावनाओं पर ग़ौर होता रहा. प्रदेश विधानसभा एवं 2014 में लोकसभा चुनाव को ध्यान में रखकर बहुत सारी बातें तय की गईं. अगले दिन होने वाली रैली में नरेंद्र मोदी के भाषण पर सबकी नज़रें लगी थीं. रैली में नीतीश कुमार का नाम न लेने और विकास का श्रेय प्रदेश के भाजपाई मंत्रियों को देने की बात तय हुई. यह भी तय हुआ कि अब भाजपा अपने स्वाभिमान के साथ कोई समझौता नहीं करेगी. नितिन गडकरी ने कहा कि सत्ता के लिए स्वाभिमान से समझौता नहीं होगा. भाजपा अपनी नीतियों एवं कार्यक्रमों को आगे बढ़ाएगी. रैली में नरेंद्र मोदी के प्रति लोगों के आकर्षण को देखते हुए यह भी मोटे तौर पर तय हो गया कि आगामी विधानसभा चुनाव में भाजपा प्रचार के लिए उन्हें उतारेगी. भाजपा ने यह महसूस किया कि लोकसभा चुनाव में अगर नरेंद्र मोदी बिहार में प्रचार के लिए आते तो पार्टी को काफी फ़ायदा मिलता. सूत्रों पर भरोसा करें तो भाजपा अब मोदी के मामले में नीतीश की राय को तवज्जो नहीं देगी. पार्टी की प्रदेश इकाई की मांग पर विधानसभा चुनाव में नरेंद्र मोदी का कार्यक्रम तय करने की बात मोटे तौर पर तय हो गई है. इस मामले में पार्टी किसी भी हद तक जा सकती है. भाजपा के एक बड़े नेता ने नाम न छापने की शर्त पर नीतीश से सवाल पूछा कि गुजरात से आई मदद पर वह भारतीय संस्कृति की बात करते हैं, पर न्योता देकर विज्जे ग़ायब वाली कहावत का अनुसरण करके वह किस संस्कृति का संरक्षण कर रहे हैं? हमारे यहां तो क़र्ज़ लेकर भी मेहमानों के स्वागत का रिवाज़ है, पर डिनर पार्टी रद्द करके नीतीश कुमार ने यह साबित कर दिया कि उन्हें भारतीय संस्कृति का ज्ञान नहीं है. इन सारी बातों से साफ़ है कि भाजपा ने पलटवार की तैयारी शुरू कर दी है. अब इसका जदयू-भाजपा रिश्ते पर क्या असर होगा, यह न तो फ़िलहाल नीतीश जानते हैं और न भाजपा.

feedback@chauthiduniya.com

सरकार बनाने का फार्मूला यह बनाया गया है कि कांग्रेस, झाविमो और झामुमो में से दो दल सरकार में शामिल होंगे और एक बाहर से समर्थन करेगा.

आजादी के बाद सारण प्रमंडल के तीनों जिले, छपरा, सीवान व गोपालगंज में दशकों तक कांग्रेस की राजनीति का बोलबाला रहा.

पक रही है सरकार गठन की खिचड़ी

बाबूलाल मरांडी | सुबोधकांत सहाय | राजेंद्र प्रसाद सिंह

नवल किशोर सिंह

झारखंड में राष्ट्रपति शासन लागू होने के बाद विधानसभा को निलंबित रखा गया है. हालांकि विधायकों को वेतन मिल रहा है, लेकिन तमाम सुविधाएं और भत्ते बंद हो गये हैं. लिहाजा इनमें किसी तरह कोई भी कामचलाऊ सरकार बना लेने की छटपटाहट देखी जा रही है. मौजूदा विधायकों में अधिकांश को अगली बार चुनाव जीत पाने का भरोसा नहीं है. इसलिये वे विधायक होने का पूरा सुख इसी बार भोग लेना चाहते हैं. कांग्रेस इनकी मन:स्थिति को समझ रही है, इसलिए विधायकों को भरोसा दिलाया जा चुका है कि राज्यसभा चुनाव के बाद झारखंड में सरकार बनाने की पहल होगी. सरकार बनाने का फार्मूला यह बनाया गया है कि कांग्रेस, झाविमो और झामुमो में दो दल सरकार में शामिल होंगे और एक बाहर से समर्थन करेगा. चुंकि झामुमो और झाविमो की कुण्डली मिलने की गुंजाइश कम है. राजनीतिक पंडित बेमेल कुण्डली के गुणों को मिलाने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन ज्यादा से ज्यादा वे एक-दूसरे का समर्थन कर सकते हैं कदमताल नहीं कर सकते. इसलिए समझा जा रहा है कि सरकार में इनमें से कोई एक शामिल होगा और कांग्रेस दोनों ही स्थितियों में सरकार में रहेगी. झामुमो सुप्रीमो अपनी सरकार के कार्यकाल में ढुलमुलेपन, भाजपा के साथ एक महीने तक सांप-सीढ़ी के खेल और राज्यसभा चुनाव में बौरो प्लेयर लाने के कारण आलोचनाओं से घिर गए हैं. इनकी पदलोलुपता राजनैतिक दलों के बीच चर्चा का विषय बनी रही है. इस कारण संभव है कि वह सरकार को बाहर से समर्थन देकर झारखंडवासियों को यह संदेश देने का प्रयास करें कि वे पद और सत्ता के बगैर भी रह सकते हैं. राज्यसभा चुनाव में इन्हें पर्याप्त लाभ मिल चुका है, इसलिए संभव है वह कुछ समय तक खामोशी अख्तियार कर लें. कांग्रेस-झाविमो सरकार में इनका काम तो होता ही रहेगा. हेमंत अपनी पसंद के अधिकारियों का मनचाहा ट्रांसफर-पोस्टिंग करा ही सकेंगे. गुरुजी की बात कोई काट नहीं सकेगा. सत्ता में न रहते हुए भी इनकी हुकूमत तो चलती ही रहेगी. भाजपा-जदयू कांग्रेस के सरकार बनाने की इन कोशिशों से अवगत है और इस प्रयास में है कि वैकल्पिक सरकार बनाने की जगह विधानसभा भंग कर दोबारा चुनाव कराया जाए. इसके शीर्ष नेता यह आरोप लगा भी चुके हैं कि विधानसभा को भंग करने की जगह निलंबित रखना कांग्रेस की सोची-समझी चाल है. वह वैकल्पिक सरकार के गठन की संभावना को बचाये रखना चाहती है और नया जनादेश लेने से कतरा रही है. हालांकि मौजूदा स्थिति में भाजपा के पास अपने 18 और जदयू के 2 यानी 20 विधायकों का ही समर्थन है, जबकि कांग्रेस के पास 14 और झाविमो के 11 एवं बंधु तिर्की, गीता कोड़ा, एनोस एक्का, हरिनारायण राय के रूप में इसे चार निर्दलीय विधायकों का समर्थन प्राप्त है. इस तरह समर्थक विधायकों की कुल संख्या 29 हो जाती है. झामुमो के 18 विधायकों का समर्थन मिला तो कुल जोड़ 47 हो जाता है. इस गणित के हिसाब से सरकार का गठन हो जाता है.

झामुमो के साथ आजसू का गठबंधन अभी बरकरार है. आजसू के पास पांच विधायक हैं. इसके अलावा चमरा लिंडा और विदेश सिंह को मिला दिया जाए तो कुल 54 विधायकों का समर्थन हासिल हो सकता है. वहीं दूसरी ओर भाजपा के खेमे की बात करें तो जदयू के दो विधायकों को मिला कर इनकी संख्या 20 ही पहुंचती है. इसे किसी दूसरी पार्टी या निर्दलीयों विधायकों में किसी का समर्थन मिलेगा या नहीं, यह कहना मुश्किल है.

उल्लेखनीय है कि झाविमो सुप्रीमो बाबूलाल मरांडी और कांग्रेस के बीच राज्यसभा चुनाव के दौरान ही सरकार गठन पर विचार-विमर्श और सहमति बन चुकी थी. झामुमो भी इसके लिए तैयार हो चुका था. झामुमो की ओर से कहा गया था कि वह कांग्रेस के साथ मिल कर सरकार बनाने के लिए राजी है, बशर्ते वह कांग्रेस आलाकमान को राजी कर ले. यहां पेंच झाविमो की ओर से है. झाविमो सुप्रीमो अपनी शर्तों पर सरकार बनाने की पहल कर सकते हैं, हालांकि सार्वजनिक तौर पर वह इससे इंकार कर रहे हैं. उन्होंने कहा है कि वह सौदेबाजी के तहत सरकार बनाने की पहल नहीं करेंगे. इसी बीच झाविमो के विधायक समरेश सिंह ने कहा है कि अगर विधायकों को चुनाव में नहीं जाना है तो बगैर शर्त बाबूलाल मरांडी को नेता मान लें और सरकार बना लें. इसी को ध्यान में रख कर कांग्रेस के विधायकों की दिल्ली में सोनिया के राजनीतिक सलाहकार अहमद पटेल से एक दौर की बातचीत भी हो चुकी है. कयास लगाया जा रहा है कि सरकार गठन के मुद्दे पर विस्तृत चर्चा हुई है. कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष प्रदीप बालमुचू, विधायक दल के नेता राजेंद्र प्रसाद सिंह, केएन त्रिपाठी सहित कई विधायक लगातार कांग्रेस आलाकमान और केंद्रीय नेतृत्व को सरकार बनाने की संभावनाओं और इसके दूरगामी राजनैतिक लाभ से अवगत कराते रहे हैं. केंद्रीय मंत्री सुबोधकांत सहाय ने भी सरकार बनाने पर सहमति व्यक्त की और केंद्रीय नेतृत्व से इस मसले पर विचार-विमर्श करते रहे. हालांकि झारखंड मुक्ति मोर्चा के सुप्रीमो के पल में तोशा, पल में माशा की प्रवृति को देखते हुए यह कहना कठिन है कि वह सरकार को कब तक समर्थन देना जारी रखेंगे और कब पाला बदल लेंगे, लेकिन अभी इसके विधायक भी किसी तरह सरकार बनाने और अपनी सुविधाएं बहाल कराने के लिए गुरुजी पर दबाव डाल रहे हैं. चूंकि झारखंड में मात्र 5 माह बाद फिर राष्ट्रपति शासन लगने के पीछे भी गुरुजी ही मुख्य कारक रहे हैं, इसलिए उम्मीद की जा रही है कि अभी वह समझौते पर टिके रहेंगे और अपने विधायकों की नाराजगी मोल लेना नहीं चाहेंगे. बहरहाल सूबे में सरकार गठन की संभावनाओं के मद्देनजर एकबार फिर सियासी सरगर्मी तेज हो गयी है. सरकार गठन के लिए हांडी चढ़ायी जा चुकी है. खिचड़ी पक रही है, लेकिन इसका स्वाद चखना झारखंडवासियों के लिए एक और कटु अनुभव बनकर न रह जाए.

feedback@chauthiduniya.com

सारण में राजनीतिक ज़मीन तलाशने में जुटे बाहुबली

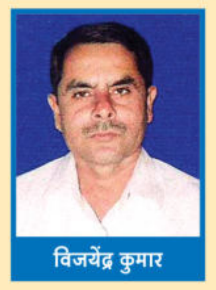

विजयेंद्र कुमार

स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई से लेकर आजाद भारत के पुनरुत्थान के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने वाले सारण के महान सपूतों की धरती पर आज स्वनामधन्य बाहुबली अपनी राजनीतिक सरजमीं की तलाश में हैं. विधानसभा चुनाव की आहट के साथ ही कई नामी सूरमाओं को अपने बल के भरोसे विधानसभा की दहलीज पार करने का भरोसा है. उनकी राजनीतिक गतिविधियां परवान चढ़ने लगी हैं. डॉ. राजेंद्र प्रसाद व मौलाना मजहरुल हक की धरती सारण के बहुतेरे विधान सभाई क्षेत्रों में आज महारथियों की राजनीति में दखल बनाने की कोशिशें मतदाताओं को पशोपेश में डाल रही हैं. आजादी के बाद सारण प्रमंडल के तीनों जिले, छपरा, सीवान व गोपालगंज में दशकों तक कांग्रेस की राजनीति का बोलबाला रहा. 1977 के उपरांत इन क्षेत्रों में समाजवादी राजनीति का दौर चला, जिसके ध्वजवाहक के रूप में समाजवादी आंदोलन के सशक्त सिपाही समाजवादी नेता व पूर्व केंद्रीय मंत्री राम बहादुर सिंह एवं महामाया प्रसाद सरीखे लोगों ने इस क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया. बाद में सन 1990 में पुराने सारण के गोपालगंज क्षेत्र से कलह की राजनीति की शुरुआत ने धीरे-धीरे समूचे क्षेत्र को आपराधिक वारदातों के आगोश में लेना शुरू कर दिया. पहली वारदात की भेंट चढ़े गोपालगंज के तत्कालीन सांसद नगीना राय. इस कड़ी में मशरख के कांग्रेस विधायक की हत्या सुर्खियों में रही. कालांतर में इन हत्याओं के आरोपी रहे लोगों ने लोक सभा व विधान सभा के चुनावों में जीत दर्ज कराकर अपने क्षेत्र का बखूबी प्रतिनिधित्व भी किया. सीवान की धरती पर बाहुबल के सहारे दशकों तक अपनी राजनीतिक हैसियत का लोहा मनवाने में शहाबुद्दीन का अपना अलग रिकॉर्ड रहा है. राजद शासनकाल में सीवान में शहाबुद्दीन का एकछत्र राज कायम रहा. बहरहाल इस बार सारण प्रमंडल के दर्जन भर विधान सभा क्षेत्रों में माफिया सरगना के रूप में अपनी पहचान काबिज रखने वाले कई महारथियों का नाम सुनने को आ रहा है, जो आगामी विधान सभा चुनावों में जीत हासिल कर विधानसभा की दहलीज तक पहुंचने की फिराक में लगे हैं. इस क्रम में पूर्व में बनियापुर का दो बार प्रतिनिधित्व कर चुके मनोरंजन सिंह उर्फ धूमल सिंह का नाम नवसृजित एकमा सीट से जदयू प्रत्याशी के रूप में लिया जा रहा है. उन्होंने अपना चुनावी जनसंपर्क अभियान शुरू भी कर दिया है. एकमा विधानसभा क्षेत्र से अपनी किस्मत आजमाने के लिए नचाप गांव के धनंजय सिंह का चुनावी अभियान भी तेज है. धनंजय सिंह का आपराधिक रिकॉर्ड भी खौफनाक रहा है. उन पर जिले के कई थानों में संगीन अपराधिक गतिविधियों के मामले दर्ज हैं. आतंक का पर्याय माने जाने वाले कुख्यात अय्यूब खां एवं रईस खां के पिता कमरुल हक व अजय सिंह के बीच चुनावी भिड़ंत की संभावना से सीवान के रघुनाथपुर विधानसभा क्षेत्र की बढी चुनावी तपिश मतदाताओं को परेशान करने लगी है. फिलहाल अय्यूब व रईस की जोड़ी सीवान जेल में कैद है. कहा जाता है कि ये दोनों अपने रसूख का इस्तेमाल कर अपने पिता के लिए चुनावी जमीन तैयार करने में लगे हुए हैं, जबकि रघुनाथपुर की जदयू विधायक जगमातो देवी का बेटा अजय सिंह भी पिछले महीने जेल से छूटकर आने के बाद अपना चुनावी कील-कांटा दुरूस्त करने में लग चुका है. आगामी विधान सभा चुनाव में बाहुबली सूरमाओं की रणभूमि के तौर पर नवसृजित विस क्षेत्र दुरौंधा व महाराजगंज का नाम सामने आता है. दुरौंधा पर पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के समर्थक माने जाने वाले पूर्व मुखिया परमेश्वर सिंह अपनी नजरें टिकाए हुए हैं. वहीं महाराजगंज के वर्तमान राजद सांसद उमाशंकर सिंह के पुत्र व राजद नेता जीतेंद्र स्वामी भी अपने पिता की विधान सभा सीट हथियाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ेंगे. रघुनाथपुर की विधायिका जगमातो देवी का नाम भी इस सीट से जदयू प्रत्याशी के रूप में सुनने को मिल रहा है. महाराजगंज विस क्षेत्र में उम्मीदवारों को लेकर उहापोह की स्थिति कायम है. इधर, सारण जिले की बनियापुर विस सीट पर पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के अनुज विधायक केदार सिंह का दावा पुख्ता बताया जाता है, लेकिन मुख्यमंत्री नीतीश कुमार व प्रभुनाथ सिंह के रिश्तों में खटास पैदा हो जाने से इस सीट को लेकर जदयू के उम्मीदवार के तौर पर नये मोहरे बिछाए जाने के संकेत भी मिलते हैं. ऐसी स्थिति में मशरख क्षेत्र में उनके धुर विरोधी माने जाने वाले पूर्व विधायक तारकेश्वर सिंह के परिवार के सदस्य को मैदान में उतारने की बात सामने आ रही है. बनियापुर विधान सभा क्षेत्र से अपना भाग्य आजमाने वाले उम्मीदवारों में अंडरवर्ल्ड के माफिया सरगना धनंजय प्रधान का नाम जुड़ जाने से इस क्षेत्र का चुनावी परिदृश्य कुछ बदला-बदला सा नजर आने लगा है. जरायम पेशा से राजनीति की दुनिया में अपना पहला दांव खेलने का इरादा रखने वाले धनंजय प्रधान के खौफनाक आपराधिक रिकॉर्ड के चलते इस क्षेत्र से चुनावी जोर-आजमाइश करने वाले संभावित उम्मीदवारों का अभी अभाव दिख रहा है. इससे अलग गोपालगंज की भूमि पर सतीश पांडेय की दास्तान भी कम रोचक नहीं है. गोपालगंज क्षेत्र में अपराध के बेताज बादशाह माने जाने वाले सतीश पांडेय विगत 20 अप्रैल को प्रशासन के समक्ष आत्म समर्पण कर राजनीतिक हल्कों में पहले ही भूचाल पैदा कर चुके हैं. कहा जाता है कि आगामी विस चुनाव को देखते हुए उन्हें आत्म समर्पण का संदेश मिला था. बिहार के अलावा उत्तर प्रदेश के कई कद्दावर नेताओं के साथ उनके गहरे संबंध हैं. सतीश पांडेय एक बार समता पार्टी के टिकट पर विस का चुनाव पहले लड़ भी चुके हैं. यह भी चर्चा है कि गोपालगंज में सतीश को तरजीह देकर लालू यादव को उनके गृह जिले में घेरने की कवायद है. फिलहाल सतीश पांडेय की राजनीतिक पकड़ के परिणाम स्वरूप उनके अनुज अमरेंद्र पांडेय उर्फ पप्पू पांडेय बसपा के विधायक व उनकी पत्नी जिला परिषद् की अध्यक्ष पद पर काबिज हैं. ऐसे माहौल में सारण की धरती सहमी हुई सी दिखती है.

अजय सिंह | धनंजय सिंह | धूमल सिंह | जितेंद्र स्वामी

feedback@chauthiduniya.com

पंजे के लिए मोतिहारी में घमासान

मनोज कुमार राव

अमरेन्द्र सिंह | रमेश वर्मा | अमर प्रसाद कुशवाहा | अमित सिंह लड्डू

विधानसभा क्षेत्र मोतिहारी

मोतिहारी विधान सभा चुनाव को लेकर अन्य पार्टियों के संभावित प्रत्याशियों के मुकाबले कांग्रेस के दावेदारों का तानाबाना जरा हट कर नजर आ रहा है. इस पार्टी में संभावित प्रत्याशियों की फेहरिस्त कुछ अधिक लंबी है. कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष व राज्य प्रभारी के बदले जाने के बाद मोतिहारी विधान सभा क्षेत्र के लिए कांग्रेस पार्टी के संभावित प्रत्याशियों ने अपना दावपेंच प्रारंभ कर दिया है.

मोतिहारी विधान सभा क्षेत्र के लिए कांग्रेस पार्टी के प्रत्याशियों में एक तरफ जहां अमित सिंह उर्फ लड्डू जी, अमरेन्द्र सिंह, अमर कुशवाहा, रमेश वर्मा के नामों की चर्चा है, वहीं रेणु सिन्हा भी खुद को पार्टी प्रत्याशी के बतौर देख रही हैं. पार्टी किसे अपना उम्मीदवार बनाएगी यह तो वक्त ही बताएगा, लेकिन सभी नेता अपने-अपने तरीके से पटना व दिल्ली के राजनीतिक गलियारों में धमाचौकड़ी मचाना प्रारंभ कर चुके हैं. कई माह पहले से ही मोतिहारी विधान सभा की मुख्य सड़कों सहित चौक चौराहों व अन्य रास्तों पर अमित सिंह उर्फ लड्डू के बैनर पोस्टर देखे जा रहे हैं, वहीं कई अन्य संभावित उम्मीदवारों ने भी अंदर ही अंदर बिना किसी बैनर व पोस्टर के आला कमान के इर्द-गिर्द अपना प्रभाव जमाना शुरू कर दिया है. अमित सिंह ने बताया कि पार्टी का जो भी निर्णय होगा, वह मान्य होगा. पार्टी में युवा नेताओं को तरजीह मिलने की संभावना ज्यादा है और मेरे कार्यों को देखते हुए पार्टी के वरिष्ठ नेता टिकट देते समय निश्चय ही मेरे नाम पर गंभीरता से विचार करेंगे. उन्होंने बताया कि अगर मोतिहारी विधान सभा से कांग्रेस पार्टी ने उन्हें उम्मीदवार बनाया तो हर हाल में उनकी जीत पक्की है. अमित सिंह के समर्थकों ने चौथी दुनिया को बताया कि विगत जाड़े के समय उन लोगों ने पूरे विधान सभा क्षेत्र का दौरा किया और गरीबों के बीच कम्बल व अन्य जरूरी सामानों का वितरण किया. उन्होंने दावा किया कि कांग्रेस के सदस्यता अभियान के दौरान भी उन्होंने लगभग ढाई हजार युवाओं को पार्टी के साथ जोड़ा. अग्निपीड़ितों के बीच कई दिनों तक कटहा गांव में लंगर की व्यवस्था कराई, जिससे वहां के सभी मतदाताओं में खुशी की लहर कायम हुई. इधर भाजपा से कांग्रेस में आए अनुभवी नेता अमरेन्द्र सिंह ने बताया कि युवा होने के साथ-साथ उन्हें कई साल का राजनीतिक अनुभव भी है और यदि कांग्रेस पार्टी उन्हें अपना प्रत्याशी बनाती है तो हर हाल में उनकी जीत पक्की है. उन्होंने पूरे मोतिहारी विधान सभा क्षेत्र में अपनी लोकप्रियता का हवाला भी दिया. अमरेन्द्र सिंह ने बताया कि क्षेत्र के दौरे के दौरान उन्हें मतदाताओं की ओर से जो संकेत मिले हैं, उससे यह जाहिर होता है कि इस बार मतदाता उन्हें वोट देने का मन बना चुके हैं. इधर बिहार विश्वविद्यालय में एनएसयूआई के अध्यक्ष रहे रमेश वर्मा ने भी मोतिहारी विधान सभा क्षेत्र से खुद को कांग्रेस का संभावित प्रत्याशी बताते हुए कहा कि पार्टी के वरिष्ठ नेताओं के पास यहां के मतदाताओं ने उनके नाम की चर्चा कर दी है और पार्टी की ओर से संकेत भी अच्छे मिल रहे हैं. जिला यूथ कांग्रेस के उपाध्यक्ष रहे रमेश वर्मा को अगर पार्टी अपना टिकट देती है तो वह कई अन्य प्रत्याशियों के लिए सिरदर्द साबित हो सकते हैं. लगभग दस साल तक पीसीसी के सदस्य रहे रमेश वर्मा वरिष्ठ कांग्रेसी नेता महाचंद्र सिंह के प्रतिनिधि भी रह चुके हैं, जिससे संभावना व्यक्त की जा रही है कि मोतिहारी विधान सभा के लिए टिकट बंटवारे में रमेश वर्मा के नाम पर भी पार्टी गंभीरता से विचार करेगी. बिहार प्रदेश किसान प्रकोष्ठ से जुड़े रहे रमेश वर्मा पुराने कांगेसी हैं जिससे पार्टी के वरीय नेताओं के बीच भी उनकी अच्छी साख है. उनके समर्थकों ने चौथी दुनिया को बताया कि अगर रमेश वर्मा को टिकट मिलता है तो उनकी जीत पक्की है.

इधर 1980 के दशक में सेवा दल से जुड़े रहे ढेकहां पंचायत की पूजा समिति के अध्यक्ष रहे अमर प्रसाद कुशवाहा ने भी मोतिहारी विधान सभा क्षेत्र से कांग्रेस पार्टी की ओर से प्रत्याशी बनाये जाने को लेकर अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है. अपनी राजनीतिक पृष्ठभूमि व अनुभव का जिक्र करते हुए उन्होंने बताया कि मोतिहारी विधान सभा सीट के लिए संभावित प्रत्याशियों की सूची में उनकी टक्कर का कोई नहीं है, इसलिए टिकट का फैसला करते समय पार्टी उन्हें नजरअंदाज नहीं करेगी. कुशवाहा व वैश्य समुदायों का पूरा समर्थन मिलने का दावा करते हुए अमर कुशवाहा ने बताया कि उनका अबतक का पूरा जीवन कांग्रेस पार्टी के लिए कार्य करते हुए ही बीता है. अपने क्षेत्र भ्रमण का जिक्र करते हुए उन्होंने बताया कि उनके द्वारा व्यापक ढंग से कांग्रेस पार्टी के लिए सदस्यता अभियान चलाया गया है जिसके ऐतिहासिक परिणाम सामने आये हैं. अगर कांग्रेस मोतिहारी क्षेत्र से उन्हें अपना प्रत्याशी बनाती है तो उनकी जीत को कोई नहीं रोक सकता.

पार्टी किसे अपना उम्मीदवार बनाएगी यह तो वक्त ही बताएगा, लेकिन सभी नेता अपने-अपने तरीके से पटना व दिल्ली के राजनीतिक गलियारों में धमाचौकड़ी मचाना प्रारंभ कर चुके हैं.

इधर पूर्वी चंपारण जिला कांग्रेस की पूर्व महिला अध्यक्ष रेणु सिन्हा ने बताया कि पार्टी इस बार महिलाओं को चुनाव मैदान में उतारने को लेकर गंभीर है और वह भी इसकी दावेदार हैं. उन्होंने यह दावा भी किया कि अगर उन्हें टिकट मिलता है तो उनकी जीत पक्की है. मोतिहारी से कांग्रेस की डेलीगेट रह चुकी रेणु सिन्हा अखिल भारतीय कायस्थ महासभा की प्रदेश महिला अध्यक्ष भी रह चुकी हैं. अभी टिकट की घोषणा तो हुई नहीं है लेकिन सभी संभावित प्रत्याशी अपनी-अपनी जीत का दावा करने की शुरुआत कर चुके हैं. हाल ही में प्रदेश अध्यक्ष व बिहार प्रभारी के बदल दिये जाने से नई खिचड़ी पकती नजर आ रही है, लेकिन यह किसकी थाली में पड़ेगी, यह तो आने वाला वक्त ही बताएगा.

feedback@chauthiduniya.com

सहरसा में चल रही है लूट की योजना

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना यानि मनरेगा की तस्वीर सहरसा, सुपौल व मधेपुरा जिलों में काफी धुंधली नजर आ रही है. पलायन रोककर स्थायी परिसंपत्ति निर्माण कराए जाने की सरकार की गरीब हितकारी योजना मनरेगा को इसमें जारी लूट-खसोट ने पूरी तरह विकृत कर रख दिया है. हकीकत यह है कि आज भी कोशी क्षेत्र से गरीब-मजदूर बड़ी संख्या में रोजी-रोटी के लिए दूसरे राज्यों में पलायन कर रहे हैं. पलायन करने वाले गरीब-मजदूरों की भीड़ से सहरसा से अमृतसर जाने वाली 5209 अप जनसेवा एक्सप्रेस ट्रेन भी छोटी पड़ जा रही है. हाल में पलायन करने वाले हजारों मजदूरों को चार दिन बाद भी जब जनसेवा एक्सप्रेस ट्रेन में जगह नहीं मिली, तो क्रोधित होकर करीब चार घंटे तक सहरसा जंक्शन पर न सिर्फ बवाल मचाया बल्कि नियंत्रित करने पहुंची सदर पुलिस व सैप के जवानों पर जमकर पथराव भी किया. केन्द्र सरकार ने मनरेगा योजना को काम के अधिकार के तहत लागू कर गरीब, मजदूर व बेरोजगारों को साल में 100 दिनों के रोजगार की गारंटी का वादा दिया था. लेकिन यह महत्वाकांक्षी योजना कतिपय पदाधिकारियों, पंचायत रोजगार सेवक, जनप्रतिनिधि व जिला मुख्यालय में बैठे उप विकास आयुक्त के लिए सोने की अंडा देने वाली मुर्गी बनकर रह गई है. गरीबों को कुछ रोजगार तो अवश्य मिला लेकिन बिचौलियों व कुछ भ्रष्ट पोस्ट मास्टरों की मिलीभगत से खाता से मिलने वाली रकम उनके हाथों तक नहीं पहुंच पाई. कुछ पोस्ट मास्टर व बिचौलिये साक्ष्य हेतु मजदूरी भुगतान की रसीद पर अंगूठे का निशान या हस्ताक्षर कराने में पीछे नहीं रहे लेकिन पोस्ट आफिस में संचालित मजदूरों के खातों व जॉब कार्ड की सूक्ष्मता पूर्वक तहकीकात की जाए तो घपलेबाजी व शोषण स्पष्ट उजागर हो जाएगा. पंचायतों के कुछ जनप्रतिनिधि भी मनरेगा की हालत को पस्त करने में पीछे नहीं हैं. जॉब कार्ड बनवाने में उन्होंने नियमों का खयाल नहीं रखा. आम तौर पर सहरसा व मधेपुरा में मनरेगा योजना के तहत वैसे ही रोजगारों का सृजन कार्यक्रम पदाधिकारी(पीओ) के द्वारा होता है, जिसमें लूट-खसोट का हिसाब-किताब ज्यादा बनता हो. खेतों में सड़क, पुल, बिना पानी वाले जगहों में पटवन हेतु नाला बनाने के नाम पर पूरे प्रमंडल में यह लूट देखा जा सकता है. आधा-अधूरा काम और पूरा भुगतान योजना की हकीकत है. हालांकि सहरसा के डीएम आर. लक्ष्मणन ने अभियान चलाकर जिले के विभिन्न प्रखंडों में मनरेगा योजना की स्थलीय जांच पदाधिकारियों की टीम के साथ किया है. घपला सामने आने पर प्राथमिकी भी दर्ज हुई, लेकिन नतीजा वही ढाक के तीन पात है. पिछले साढ़े चार साल में जिला ग्रामीण विकास अभिकरण विभाग के माध्यम से सहरसा जिले में कुल 9 लाख 34 हजार 904 लोगों को जॉब कार्ड वितरित कर 169.719 लाख मानव दिवस का सृजन किया गया और एक करोड़ 56 लाख 6 हजार 844 रुपया मजदूरी के रूप में भुगतान किया गया. योजना के तहत उपलब्धि के रूप में सौ दिनों का रोजगार देने के बाद सात हजार 228 परिसंपत्तियों का निर्माण किया गया, लेकिन इन परिसंपत्तियों का स्थलीय अवलोकन किया जाए तो कुछ कहने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी, सारे आंकड़े बेमानी होकर रह जाएंगे.

डीएम श्री लक्ष्मणन ने अपने मासिक निरीक्षण कार्यक्रम के दौरान सदर प्रखंड कहरा अन्तर्गत मनरेगा योजना से क्रियान्वित बरियाही पंचायत के महावीर स्थान से बरियाही बस्ती चौवट्टी तक ईंट सोलिंग सड़क का मरम्मती कार्य एवं वार्ड सं. नौ के सहरसा उप शाखा नहर से फुलेश्वर यादव के घर तक सड़क में पुलिया निर्माण कार्य के गुणवत्ता का प्राक्कलन के अनुरूप होने की स्थलीय जांच की. साथ ही मनरेगा के तहत कार्यान्वित योजना सं. 01/09-10 प्राक्कलित राशि 4 लाख 70 हजार 360 एवं योजना सं. 02/09-10 प्राक्कलित राशि 4 लाख 93 हजार 300 के अनुरूप गुणवत्तापूर्ण कार्य पूरा किये जाने की भी जांच की. जगह-जगह निर्मित सड़क की ईंट उखाड़कर व मिट्टी हटाकर तकनीकी अधिकारी आरईओ के एसडीओ अरविंद कुमार सिंह के सहयोग से सूक्ष्मतापूर्वक जांच किया गया. जांच में पुरानी ईंटों के उपयोग व मिट्टी कम होने की बातें प्रकाश में आईं. आरईओ के एसडीओ श्री सिंह के द्वारा जांच की विस्तृत व अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद संबंधित पंचायत रोजगार सेवक सह अभिकर्ता व कनीय अभियंता के विरूद्ध कार्रवाई भी शुरू की गई और बनगांव थाने में प्राथमिकी दर्ज कराई गई. फिर भी, सब कुछ पहले की तरह ही चल रहा है और पीओ व पीआरएस के साथ वरीय अधिकारी भी मालामाल हो रहे हैं. कहा जाता है कि जांच व बैठक, आदेश व निर्देश का खेल जिले में कनीय अधिकारियों से कमीशन वसूली के लिए ही खेला जाता है.

उदाकिशनगंज अनुमंडल में भी मनरेगा की तस्वीर धुंधली ही नजर आ रही है. इस योजना से जहां मजदूरों को सौ दिनों का रोजगार नहीं मिल सका है, वहीं पलायन का ग्राफ भी पहले से बढ़ गया है.

उदाकिशनगंज अनुमंडल में भी मनरेगा की तस्वीर धुंधली ही नजर आ रही है. इस योजना से जहां मजदूरों को सौ दिनों का रोजगार नहीं मिल सका है, वहीं पलायन का ग्राफ भी पहले से बढ़ गया है. पलायन का बढ़ता ग्राफ बता रहा है कि अनुमंडल में मनरेगा की परिभाषा मनचाहे रोजगार सृजन कर गारंटी के साथ राशि लूट लो' बनकर रह गयी है. अनुमंडल के आलमनगर, चौसा, पुरैनी, बिहारीगंज, उदाकिशनगंज एवं ग्वालपाड़ा में मनरेगा योजना की जमीनी हालत तमाम सरकारी दावों को खोखला साबित करती है. आलमनगर, चौसा, पुरैनी एवं बिहारीगंज प्रखंडों में कुल जॉब कार्डधारी परिवारों की संख्या 82 हजार 815 , कुल खाताधारी मजदूरों की संख्या 33 हजार 834 एवं वर्ष 2009-10 में व्यय राशि 5,49,97,572 रुपया और 2 लाख 76 हजार 253 सृजित मानव दिवस के तहत 335 परिवारों को 100 दिनों का रोजगार उपलब्ध कराया गया. लेकिन अनुमंडल के विभिन्न हिस्सों में जहां अधिकांश कार्य आधे-अधूरे पड़े हैं, वहीं मजदूरों को भुगतान की गई राशि भी दलालों की भेंट चढ़ गई है. पंचायत स्तर पर कार्यरत पंचायत रोजगार सेवक, स्थानीय जनप्रतिनिधि एवं कार्यक्रम पदाधिकारी की सांठ-गांठ से राशि की लूट कर ली जाती है. सरकार ने डाक घर के माध्यम से मजदूरी भुगतान का नियम बनाया है, लेकिन पोस्ट मास्टर की मिलीभगत से राशि की लूट-खसोट की जाती है. उदाकिशुनगंज प्रखंड के आनंदपुर पंचायत के रोजगार सेवक द्वारा मरनेगा मजदूरों की राशि डाकघर की मिलीभगत से 19 मजदूरों के पासबुक से फर्जी तरीके से निकाल लिया गया. इस बाबत मजदूरों ने उदाकिशनगंज के एसडीओ, कार्यक्रम पदाधिकारी समेत अन्य अधिकारियों से जांच की गुहार लगाई, परंतु उनकी यह गुहार खानापूर्ति में गुम हो कर रह गई है. हालांकि कार्यक्रम पदाधिकारी कुमार शैलेन्द्र ने कहा कि जांच के बाद 19 मजदूरों के मजदूरी भुगतान में किसी को भी दोषी नहीं पाया गया है. मजदूरों को अक्सर शिकायत रहती है कि रोजगार सेवक के द्वारा जॉब कार्ड व पासबुक रख लिया जाता है और मनमाने ढंग से खाते से राशि की निकासी कर ली जाती है. अधिकारी दबी जुबान से बताते हैं कि प्राक्कलित राशि का 40 प्रतिशत पीओ, जेई, खजांची व रोजगार सेवक एवं डाककर्मी समेत अन्य पदाधिकारियों के बीच बंदरबांट कर ली जाती है. लूट का जब यह आलम हो तो मनरेगा की जमीनी हकीकत की सहज ही कल्पना की जा सकती है.

अनुबंध पर बहाल रोजगार सेवकों का कहना है कि सरकार द्वारा मजदूरों को 114 रुपए भुगतान किया जाता है, मजदूरों के मेठ को 125 रुपया और रोजगार सेवक को 100 रुपये रोज यानि महीने के 3 हजार का भुगतान किया जाता है. ऐसे में लूट-खसोट लाजिमी ही है. आलमनगर सह चौसा के पीओ देवेश गुप्ता व बिहारीगंज पीओ बिनोद बैठा ने कहा कि मनरेगा की उपलब्धि का लोग बखान कम दुष्प्रचार ज्यादा करते हैं. कांग्रेसी नेता सर्वेश्वर प्रसाद सिंह का कहना है कि केन्द्र सरकार ने नरेगा का नाम बदलकर मनरेगा रख दिया है, लेकिन इसमें इतने व्यापक पैमाने पर लूट-खसोट हो रही है कि महात्मा गांधी का नाम भी कलंकित हो रहा है.

एस.सोनी/ब्रजेश
feedback@chauthiduniya.com

बिहार-यूपी सीमा विवाद

और कितनी जानें लेगा

बिहार और उत्तर प्रदेश सरकारों की घोर उदासीनता के कारण सीवान जिले के दियारा क्षेत्र की हजारों एकड़ भूमि विवादग्रस्त बनी हुई है. इससे एक तरफ जहां पैदावार में गिरावट आ रही है, तो दूसरी ओर भू-राजस्व का नुकसान भी हो रहा है. भू-स्वामित्व की लड़ाई में इस इलाके के अधिकांश लोग प्रभावित हैं.

धनंजय मिश्र

उत्तर प्रदेश के पूर्वी सीमांचल पर बिहार का पश्चिमी-दक्षिणी दियारा क्षेत्र कई वर्षों से रक्तरंजित होता रहा है. इस लंबे भूमि विवाद में अभी तक डेढ़ सौ से अधिक लोग अपने प्राण गंवा चुके हैं. बावजूद इसके दोनों राज्य सरकारें मूकदर्शक बनी हुई हैं. दरअसल दोनों प्रांतों के सीमांचल वाले किसान दो गुटों में बंटे हुए हैं. फसल की बोआई और कटाई जब शुरू होती है, तब दोनों गुटों की ओर से हिंसक संघर्ष शुरू हो जाता है. बंदूकें दोनों ओर से गरजती हैं. लाशें भी दोनों ओर से कमोबेश बराबर गिरती हैं. पिछले साल खरीफ के मौसम में सुखाड़ के चलते धान की फसल नहीं होने से कोई हिंसक घटना नहीं हुई, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि इस बार धान की फसल अच्छी हुई तो बंदूकें फिर गरजेंगी. कृषि के नाम पर इन इलाकों में हर वर्ष हिंसा की खेती होती है. ऐसी बात नहीं है कि इन घटनाओं की खबर पुलिस-प्रशासन और शासन तक नहीं पहुंचती.

बिहार और उत्तर प्रदेश सरकारों की घोर उदासीनता के कारण सीवान जिले के दियारा क्षेत्र की हजारों एकड़ भूमि विवादग्रस्त बनी हुई है. इससे एक तरफ जहां पैदावार में गिरावट आ रही है, तो दूसरी ओर भू-राजस्व का नुकसान भी हो रहा है. भू-स्वामित्व की लडाई में इस इलाके के अधिकांश लोग प्रभावित हैं. भारत सरकार के आदेशालोक में इस सीमा विवाद के निपटारे के लिए केन्द्र सरकार ने सन् 1962 में पीएन त्रिवेदी को पंच नियुक्त किया. उल्लेखनीय है कि यह नियुक्ति संबद्ध दोनों राज्य सरकारों की सहमति से हुई थी. इस व्यवस्था को तब त्रिवेदी अवार्ड के नाम से जाना गया. अपने करीब दो वर्षों के कार्यकाल में त्रिवेदी ने इस विवादित मुद्दे का विस्तारित हल निकाला तथा पूरे विवरण एवं मानचित्र के साथ अपना प्रतिवेदन तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री को 25 अगस्त, 1964 को सुपुर्द किया. इस पर 16 नवम्बर, 1964 को केन्द्रीय सरकार की मुहर लगी. इस फैसले को बिहार-उत्तर प्रदेश सीमा परिवर्तन अधिनियम 1968 के नाम से जाना जाता है. 22 मई, 1968 को इसे तत्कालीन राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली.त्रिवेदी अवार्ड के उक्त फैसले के अनुसार बिहार के सीवान जिले के दक्षिणी-पश्चिमी सीमा पर 24 गांवों में फैली 13092 एकड़ भूमि को उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के सीमा क्षेत्र में स्थानांतरित कर दिया गया. उस समय इससे जुड़े जोतदारों की संख्या 3081 थी. इसी प्रकार 10 हजार 72 रैयतों की 2 लाख 29 हजार 22 एकड़ जमीन बिहार राज्य से जोड़ दी गई. इस तरह बिहार राज्य के सीवान जिले के सिसवन प्रखंड के ग्यासपुर, हरेनवा, गंगपुर सिसवन, भागड़ दियारा और कचनार दियारा के क्रमश: 150, 79, 1124, 618 तथा 375 एकड़ और रघुनाथपुर प्रखंड के गभीरार आदि क्षेत्र की जमीन को बलिया (उ.प्र.) को सुपुर्द कर दिया गया. सच्चाई यह है कि त्रिवेदी अवार्ड का उपर्युक्त निर्णय केवल कागजी हस्तांतरण बनकर रह गया है. इसका नतीजा यह निकला कि विगत 42 वर्षों के बाद भी भूमि विवाद का यह मामला कमोबेश यथावत है, जबकि दूसरी ओर दोनों राज्यों के सीमांचल के मध्य से निकली सरयू नदी, जिसका प्रचलित नाम घाघरा है, के दोनों तरफ फैले इस दियारा का विस्तृत परिक्षेत्र विगत तीन दशकों से दोनों प्रांतों के दुर्दांत अपराधियों का अभ्यारण्य बना हुआ है. दोनों राज्यों के ये पेशेवर एवं कथित राजनीति-संरक्षित दुर्दांत अपराधी आपस में काफी मिले हुए हैं, जो अपहरण, हत्या, लूट आदि घटनाओं को अंजाम देकर एक-दूसरे के क्षेत्र में नदी को नावों से पार करके चले जाते हैं और पुलिस चाहकर भी पकड़ने में अक्सर विफल हो जाती है.

feedback@chauthiduniya.com

श्रेया को अब तक दर्जनों पुरस्कार मिल चुके हैं. वह एक हज़ार से अधिक शब्दों का हिंदी एवं अंग्रेजी में अर्थ बता सकती है.

पर्यावरण का रखवाला जय श्रीराम

दिव्या कुमारी

बख्तियारपुर (पटना) निवासी आरक्षी जितेंद्र शर्मा उर्फ़ जय श्रीराम उन चंद पुलिसकर्मियों में शामिल हैं, जिनके कार्य से प्रभावित हुए बिना कोई नहीं रह सकता. पटना के यातायात थाने में तैनात बिहार पुलिस का यह जवान एक अलग कार्य संस्कृति और जीवनशैली के लिए मशहूर हो रहा है. जुनून की सीमा से काफी आगे जाकर जय श्रीराम अब तक तीस हजार पेड़ लगा चुका है. हैरानी की बात यह है कि इस आरक्षी ने कभी किसी से कोई आर्थिक मदद भी नहीं ली. पेड़ों को अपनी संतान मानने वाला यह पर्यावरण प्रेमी पुलिसकर्मी पिछले पच्चीस वर्षों से अनवरत वृक्षारोपण अभियान में जुटा है. जितेंद्र शर्मा का संकल्प है कि वह अपने जीवनकाल में एक लाख वृक्ष लगा दें. इस महान लक्ष्य का करीब एक चौथाई हिस्सा वह तय कर चुके हैं. उन्होंने पूर्णिया, कटिहार, मुरलीगंज, सहरसा, फारबिसगंज, जोगबनी, समस्तीपुर, राघोपुर, बरौनी, पटना, बख्तियारपुर एवं किशनगंज आदि स्थानों पर पेड़ लगाए हैं.

जितेंद्र बताते हैं कि उनके पास अपनी ज़मीन नहीं है, परंतु जहां कहीं भी उन्हें खाली जमीन नजर आती है, वहीं पर वह अपना शौक पूरा करने के लिए खुरपी, टोकरी, कुदाल और पौधों के साथ हाजिर हो जाते हैं. पर्यावरण असंतुलन एवं प्रदूषण से बचने के लिए लोगों को सीख देता यह पुलिसकर्मी पर्यावरण संचेतना की अलख जगाने में जुटा है. जितेंद्र जब कभी किसी से मिलते हैं तो अभिवादन स्वरूप जय श्रीराम कहते हैं. जय श्रीराम कहने की आदत ने लोगों के बीच उन्हें इसी नाम से मशहूर कर दिया. आज स्थिति यह है कि लोग उन्हें जय श्रीराम के नाम से अधिक जानते हैं. वह सुबह कुदाल, खुरपी, टोकरी और फलदार छायादार वृक्षों के पौधे लेकर निकल पड़ते हैं. जगह का चयन करने के बाद जितेंद्र वहां पौधे लगाते हैं और फिर उसकी घेराबंदी भी करते हैं, ताकि पौधे को कोई नुकसान न पहुंचे. पेड़ों की अंधाधुंध कटाई से चिंतित जय श्रीराम बताते हैं कि अखबारों, समाचार चैनलों में पर्यावरण पर बढ़ते खतरों एवं प्रदूषण वृद्धि की खबरों ने उनके अंदर एक लक्ष्य पैदा कर दिया. उनके मन में ख्याल आया कि क्यों न वृक्षारोपण शुरू किया जाए. मन में आई एक बात जीवन का लक्ष्य बन गई. जय श्रीराम मुख्यत: पीपल, नीम, आम, पाकड़ एवं बड़ आदि के वृक्ष लगाते हैं. पीपल के पौधे लगाने पर जोर ज्यादा रहता है. उनका मानना है कि पीपल एवं पाकड़ जैसे वृक्ष चौबीसों घंटे ऑक्सीजन छोड़ते हैं और इनसे पर्यावरण का संतुलन बना रहता है.

नीम के पेड़ों के संबंध में उनका मानना है कि इनसे पर्यावरण साफ और स्वच्छ रहता है. वृक्षारोपण का शौक कभी उनके कार्य में बाधा नहीं बना. सरकारी नौकरी में रहते हुए गलत तरीके से कभी एक रुपया भी न कमाने वाला यह सिपाही अपने कर्तव्य के प्रति भी इतना ही मुस्तैद रहता है. राघोपुर में तैनाती के दौरान 20 मई 2002 को सहरसा से फारबिसगंज जाने वाली सवारी गाड़ी से जय श्रीराम ने दो रायफलें बरामदगी की थीं. बरौनी जीआरपी में रहते हुए गौहाटी-नई दिल्ली राजधानी एक्सप्रेस से 31 जुलाई 2002 को एक लाख रुपये मूल्य का तस्करी का सामान बरामद किया. जय श्रीराम किसी लावारिस लाश को देखकर मुंह नहीं फेरते, उसकी अंत्येष्टि खुद करते हैं. वह कहते हैं कि जीवन यदि मनुष्य का अधिकार है तो जीवन समाप्ति के उपरांत उसके शव का ससम्मान क्रियाकर्म भी उसका अधिकार है.

जय श्रीराम कभी सांप भी पाला करते थे. जब आरक्षी अधीक्षक ने विभागीय कार्रवाई की चेतावनी दी तो उन्होंने पाले गए सांप को छोड़ दिया. आरक्षी जय श्रीराम के कार्यों के मद्देनजर बख्तियारपुर बीडीओ माधव कुमार सिंह ने एक प्रशस्ति पत्र भी दिया. मजबूत आत्मविश्वास, अनोखी कार्यशैली और ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने वाले आरक्षी जय श्रीराम के कार्यों की सुधि न तो सरकार ने ली और न ही प्रशासन ने. जबकि अच्छे काम करने वाले लोगों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए. यह स्थिति तब है, जब रिकार्ड तोड़ संख्या में पेड़ लगाने वाला यह सिपाही उस शहर का है, जहां सूबे के मुखिया नीतीश कुमार का घर है. जय श्रीराम को भले ही किसी पुरस्कार की जरूरत न हो, परंतु बख्तियारपुर वालों की इच्छा है कि मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ऐसे पर्यावरण प्रेमी को सम्मानित करें, ताकि अन्य लोगों को भी अच्छे काम करने की प्रेरणा मिले.

feedback@chauthiduniya.com

बाबा रामदेव की नन्हीं योगगुरु

राजेश सिन्हा

सात साल की श्रेया त्यागी भले ही गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स में अपना नाम दर्ज नहीं करा पाई, लेकिन देश का शायद ही ऐसा कोई कोना बचा हो, जहां के लोग इस योगबाला को न जानते हों. 141 योगासन एवं 10 प्राणायाम करते हुए जब वह उनके लाभों से परिचित कराने लगती है, तब लोग दांतों तले उंगली दबाने को विवश हो जाते हैं. 2006 में राष्ट्रीय बाल पुरस्कार के लिए चुनी गई बिहार के खगड़िया जिले की श्रेया त्यागी सबसे कम उम्र की प्रतिभागी थी, जिसे महज 4 वर्ष की उम्र में यह सम्मान मिला. श्रेया के कारनामे देखकर लोगों के मुंह से यह बरबस निकल जाता है कि पूत के पांव पालने में दिख जाते हैं. नन्हें हाथों को जोड़कर जब वह सूर्य नमस्कार करती है, तब लोग अवाक रह जाते हैं और बाबा रामदेव के बाद दुनिया की दूसरी योगगुरु की उपमा देने लगते हैं.

21 सितंबर 2002 को खगड़िया जिला मुख्यालय स्थित एक व्यायामशाला में पैदा हुई श्रेया महज दो वर्ष बाद ही अपने पिता को देखकर खुद व्यायाम करने लगी. श्रेया के पिता ने उसकी प्रतिभा को पहचाना और उसे योग के प्रति प्रेरित किया. जिस योग को करने में पिता महेंद्र त्यागी को परेशानी होती थी, उसे वह सहजता से कर लेती थी. महेंद्र ने श्रेया को विशेष प्रशिक्षण देना शुरू कर दिया. धीरे-धीरे वह योग में पारंगत होती चली गई और आज योगपरी के नाम से विख्यात हो चुकी है. श्रेया की योग विद्या देखकर योग गुरु बाबा रामदेव ने भागलपुर स्थित सेंट जोसेफ स्कूल में आयोजित सभा में उसे बालगुरु कहकर संबोधित किया. नन्हीं श्रेया हठयोग द्वारा अपने सीने पर चार ईंटें रखकर हथौड़े से आसानी से तुड़वा लेती है. इतना ही नहीं, एक प्रशिक्षित जिम्नास्ट की तरह वह अपने शरीर को विभिन्न दिशाओं में किसी भी तरफ घुमाने की योग्यता रखती है. श्रेया को अब तक दर्जनों पुरस्कार मिल चुके हैं. वह एक हजार से अधिक शब्दों का हिंदी एवं अंग्रेजी में अर्थ बता सकती है. पिता महेंद्र त्यागी अपने जमाने में योग की दुनिया में खासे मशहूर थे. आंख से छड़ मोड़ कर, सीने पर जीप चलवा कर उन्होंने भी अपनी कला का लोहा मनवाया था. पूर्वजों द्वारा बनाए गए बद्दूलाल व्यायामशाला के योगाचार्य महेंद्र के साथ-साथ उनकी नन्हीं पुत्री को अन्य प्रशिक्षकों के साथ व्यायाम करते देखने के लिए लोगों की भीड़ लगी रहती है. श्रेया के संदर्भ में महेंद्र का कहना है कि योग के कठिन आसनों मसलन वृश्चिक, द्विपादसिरासन, गर्भासन, पक्षी आसन, सर्वांगासन, पूर्णभुजंगासन एवं मत्स्यासन आदि करके वह पटना में राष्ट्रीय युवा महोत्सव में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार, राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत एवं डीएवी स्कूल समूह की प्रबंध समिति द्वारा पुरस्कृत हुई. उसके हुनर को देखते हुए डीएवी द्वारा उसे 12वीं तक नि:शुल्क शिक्षा देने की पहल की गई. श्रेया फिलहाल तीसरी कक्षा की छात्रा है.

योगासन करती श्रेया

इसके पूर्व वह दिल्ली, राजस्थान, पंजाब, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, सिक्किम, झारखंड एवं उत्तर प्रदेश में भी प्रदर्शन कर चुकी है. महेंद्र त्यागी अपनी पुत्री की कला और शोहरत से अभिभूत हैं, लेकिन मायूस भी हैं, क्योंकि अभी तक श्रेया का नाम लिम्का बुक या गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स में दर्ज नहीं हो पाया है. बावजूद इसके वह कहते हैं कि एक दिन ऐसा जरूर आएगा, जब श्रेया बाबा रामदेव की तरह दुनिया में योग गुरु के नाम से जानी जाएगी. खगड़िया की जदयू विधायक श्रीमती पूनम देवी यादव, पूर्व राष्ट्रीय धाविका कृष्णा यादव एवं पार्षद हेमा भारती का कहना है कि श्रेया आने वाले समय में इलाके का नाम रोशन करेगी.

feedback@chauthiduniya.com

एक और राजनीति

भोजपुरी फिल्मों में एक नया ट्रेंड शुरू हुआ है. यह ट्रेंड है हिंदी की सुपरहिट फिल्मों के रीमेक का. जो भी फिल्म सुपरहिट हो जाती है, उसे सफलता का फार्मूला मानकर उसका रीमेक कर दिया जाता है. यह चलन काफी हद तक सफल भी हुआ है. अभी तक शोले, करन-अर्जुन जैसी कई फिल्मों के रीमेक बन चुके हैं. इसी चलन में एक और फिल्म बनने जा रही है. नाम है हमरा मुट्ठी मा दम बा. हाल ही में प्रदर्शित हुई बालीवुड की फिल्म राजनीति सुपरहिट हुई है. चर्चा है कि यह फिल्म राजनीति से प्रेरित होकर बनाई जा रही है. इस बात के चर्चे तभी शुरू हो गए थे, जब हमरा मुट्ठी मा दम बा के पोस्टर में पाखी का लुक आउट हुआ था. इस लुक में पाखी साड़ी पहने हुए और हाथ जोड़े दिखाई गई हैं. गौरतलब है कि राजनीति में कैटरीना भी कुछ इसी तरह से पोस्टर में दिखाई देती हैं. पोस्टर लुक की समानता के अलावा इस फिल्म की कहानी में भी राजनीति को मुद्दा बनाया गया है. लुक और कहानी में समानता को देखते हुए आश्चर्य इस बात पर होता है कि इतनी जल्दी रीमेक की तैयारी कैसे हो गई. हालांकि फिल्म में केंद्रीय भूमिका निभा रही पाखी हेगड़े इस बात को सिरे से नकारती हैं. उनके मुताबिक, फिल्म में राजनीतिक मसलों को जरूर उठाया गया है, लेकिन प्रकाश झा की राजनीति से इसका कोई लेना-देना नहीं है. अभी तक रोमांटिक भूमिकाओं में दिखाई देने वाली पाखी इस फिल्म के जरिये अपनी बोल्ड इमेज से भी दर्शकों को रूबरू कराएंगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राजनीति के पोस्टर में कैटरीना भी कुछ इसी तरह से दिखाई देती हैं. पोस्टर लुक की समानता के अलावा इस फिल्म की कहानी में भी राजनीति को मुद्दा बनाया गया है.

चौथी दुनिया

दिल्ली, 28 जून-04 जुलाई 2010 www.chauthiduniya.com

बहुराष्ट्रीय कंपनियों का दानवी चरित्र

दुनिया की भीषणतम बर्बर औद्योगिक दुर्घटना भोपाल गैस कांड का अदालती फ़ैसला आ गया है. हमारे रहनुमा अपनी ग़ैर ज़िम्मेदारी और लाचारी पर झूठे आंसू बहाकर एक-दूसरे पर कीचड़ उछाल रहे हैं. बहस का मूल मुद्दा ग़ायब हो रहा है और इसका लाभ दुनिया की वे भयंकर दानवी बहुराष्ट्रीय कंपनियां उठा रही हैं, जो भारत को आर्थिक उपनिवेश बनाकर अपनी तिज़ोरी भरने के लिए जन-धन का मनमाना दोहन और शोषण कर रही हैं.

विनय दीक्षित

यूनियन कार्बाइड कारखाने से हुई दुर्घटना और उसके बाद इस बहुराष्ट्रीय कंपनी की अमानवीय करतूतों पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है. एक रात में 15 हज़ार से ज़्यादा मासूम नागरिकों को मौत की नींद सुलाने वाली इस कंपनी को हमारी प्रशासनिक-न्यायिक व्यवस्था ने आसानी से कैसे छोड़ दिया? यह भी विचार करने योग्य तथ्य है कि हज़ारों लोगों की जान की क़ीमत केवल 715 करोड़ डॉलर, सज़ा के नाम पर दो साल की क़ैद व दो लाख रुपये का जुर्माना क्या पर्याप्त और न्यायसंगत है? मुख्य आरोपी वारेन एंडरसन को भारत आने के बाद भोपाल में वीआईपी की तरह सम्मान दिया गया और सम्मान सहित पुलिस सुरक्षा में ज़िला दंडाधिकारी और कलेक्टर ने ज़मानत देकर राज्य के मुख्य सचिव के निर्देश पर सरकारी विमान से दिल्ली भेज दिया. अब तो अमेरिका की यह कंपनी साफ़ कह रही है कि भोपाल गैस कांड से इसका कोई लेना-देना नहीं है. जिस डाउ केमिकल्स ने भारत में यूनियन कार्बाइड की संपत्ति, व्यापार और साख को ख़रीदा है, वह भी भोपाल गैस कांड की कोई ज़िम्मेदारी लेने से साफ़ इंकार कर रही है.

बहुराष्ट्रीय कंपनियों को केवल अपनी पूंजी बढ़ाने और तिज़ोरी भरने की ही चिंता रहती है. दुनिया भर में तेल व्यापार करने वाली कंपनियां समुद्र में प्रदूषण फैलाती हैं और कई बार तेल लदे जहाज दुर्घटनाग्रस्त होकर समुद्र को प्रदूषित भी कर देते हैं, लेकिन थोड़े दिनों तक मीडिया में होने वाली निंदा सहकर उक्त कंपनियां मामूली मुआवज़ा चुकाकर साफ़ बच निकलती हैं. ऐसे मामलों में आज तक किसी कंपनी के अध्यक्ष या सर्वोच्च अधिकारी को दंड नहीं मिला और शायद मिल भी नहीं सकता. यूनियन कार्बाइड का भोपाल कारखाना ज़हरीली एवं घातक गैसों और रसायनों से कीटनाशक बनाता था. सरकार का कृषि विभाग उन कीटनाशकों का एक बड़ा ख़रीददार था. भोपाल कारखाने से कीटनाशकों का निर्यात दूसरे देशों को किया जाता था और उससे भारत को निर्यात शुल्क की आय होती थी. जानकारों का कहना है कि कीटनाशकों की आड़ में यह कारखाना कुछ ऐसे प्रतिबंधित घातक एवं ख़तरनाक उत्पाद भी तैयार करता था, जिन्हें बनाने की अनुमति अमेरिका और दूसरे संपन्न देशों में नहीं है. इस बारे में हमारा प्रशासन अंजान रहा. सरकार के रसायन एवं औषधि विशेषज्ञों और दूसरे वैज्ञानिकों को यह नहीं मालूम था कि कारखाने से रिसी गैस कौन सी थी. किसी ने इसे एमआईसी (मिक) गैस बताया तो किसी ने फांस्जीन बताया. जानकारी के अनुसार, केवल श्रमिक सुरक्षा और कार्यक्षेत्र में उनके लिए बुनियादी सुविधाओं के बारे में राज्य के श्रम और उद्योग विभाग द्वारा इस कारखाने की हर साल जांच की जाती थी. भोपाल गैस कांड से पहले भी यूनियन कार्बाइड कारखाने में गैस रिसाव की छोटी एवं साधारण घटनाएं हुई थीं और इनमें एक-दो लोगों की मौत और कुछ के गंभीर रूप से बीमार होने की जानकारी भी मीडिया के ज़रिए जनता को मिली हैं, लेकिन इसके बाद भी हमारी सरकार नहीं चेती और इसने कार्बाइड पर सख्ती नहीं बरती यह और भी हैरानी की बात हैं कि दिल्ली से अमेरिका लौटने से पहले वारेन एंडरसन ने भारत के राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह से भी सौजन्य भेंट की थी.

भारतीय जनता पार्टी और दूसरे विरोधी दल एंडरसन के प्रत्यार्पण को कांग्रेस के ख़िलाफ़ एक भावनात्मक प्रचार का मुद्दा बनाने में सफल रहे हैं. कांग्रेस बचाव की मुद्रा में है और इसके कुछ नेता एंडरसन को भारत लाने और उस पर मुकदमा चलाने के पक्ष में राय व्यक्त कर रहे हैं, लेकिन सबसे बड़ा सवाल है कि क्या एंडरसन को भारत लाने में सफलता मिलेगी? क़ानून के जानकार तर्क देते हैं कि भारत की अमेरिका के साथ प्रत्यार्पण संधि है, लेकिन हाल में मुंबई बम कांड के मुख्य आरोपी हेडली को भारत लाने के बारे में अमेरिका का रुख देखा जा चुका है. एंडरसन भोपाल गैस कांड के बाद ही यूनियन कार्बाइड से रिटायर हो चुके हैं और नब्बे वर्ष की आयु पूरी कर चुके हैं. अमेरिकी क़ानून के अनुसार, किसी आपराधिक घटना के समय यदि कोई व्यक्ति घटनास्थल पर मौजूद नहीं था तो उसे मुख्य आरोपी नहीं माना जा सकता. यदि अपराध में उसकी भागीदारी, सहमति या कोई भूमिका है तो पर्याप्त साक्ष्य जुटाने के बाद ही उसे आरोपी बनाया जा सकता है. यदि भारत ने एंडरसन को मुख्य आरोपी के रूप में भारत लाने का प्रयास किया और अमेरिका ने इसे मान लिया तो भी एंडरसन के हमदर्दों और अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों की लॉबी प्रत्यार्पण को चुनौती देने के लिए अमेरिकी अदालत की शरण ले सकती है.

भारत में भी गैस कांड का मामला विभिन्न न्यायालयों में जिस प्रकार कमज़ोर हुआ, जिस प्रकार जल्दबाजी में सरकार ने यूनियन कार्बाइड से मुआवज़ा समझौता किया और उस सर्वोच्च न्यायालय की मुहर लगवा ली, उससे भी एंडरसन का पक्ष मज़बूत हुआ और हमारा कमज़ोर. एक तकनीकी सवाल यह भी है कि भोपाल का यूनियन कार्बाइड कारखाना मूल अमेरिकी कंपनी का एक स्वायत्तशासी एवं स्वतंत्र इकाई था. केवल पूंजी प्रबंधन और शेयर होल्डर्स के लिए इस कारखाने की वित्त व्यवस्था पर मूल कंपनी का सीमित नियंत्रण था. भोपाल कारखाने के लिए कंपनी की ओर से स्वतंत्र सर्वाधिकार प्राप्त सक्षम अधिकारी भी नियुक्त थे. ऐसे में एंडरसन से ज़्यादा दुर्घटना की ज़िम्मेदारी भोपाल के अधिकारियों की थी. यदि एंडरसन भारत आता है और किसी सक्षम अदालत से उसे फांसी की सज़ा हो जाती है तो भी भोपाल गैस त्रासदी का दंश भोग रहे लाखों पीड़ितों की शारीरिक-मानसिक पीड़ा कम होने वाली नहीं है. ज़रूरत इस बात की है कि बचे-खुचे पीड़ितों की विधिवत ईमानदारी से यथासंभव अधिक से अधिक सहायता की जाए. पुनर्वास, राहत, मुआवज़ा वितरण और इलाज के काम में तमाम घपले-घोटाले हुए हैं और हो रहे हैं. उनकी ओर सरकार को ध्यान देना चाहिए. सरकार के बजट और गैस राहत विभाग के कार्यकलापों के प्रतिवेदनों के ज़रिये जो जानकारी मिलती है, उससे पता चलता है कि लाखों पीड़ितों को सीधे आर्थिक सहारा देने से बचते हुए राज्य सरकार ने उनके नाम पर भारत सरकार, अमेरिका और अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थानों से मिले अनुदान का इस्तेमाल आलीशान अस्पताल भवन एवं डॉक्टरों के आवास बनाने, वेतन बांटने और वाहन, पेट्रोल-डीजल आदि ख़रीदने के लिए जमकर किया. हिसाब-किताब देखने से लगता है कि यदि भोपाल में गैस कांड न हुआ होता तो 1984 के बाद आबादी दो गुना होने पर भी शहर में न तो कोई नया अस्पताल बनता और न ही कोई विकास कार्य होता. आज भोपाल में सरकार की नाक के नीचे हज़ारों गैस पीड़ित तिल-तिलकर मरने के लिए मजबूर हैं.

feedback@chauthiduniya.com

सुरक्षा में पहले से ही ख़ामियां थीं

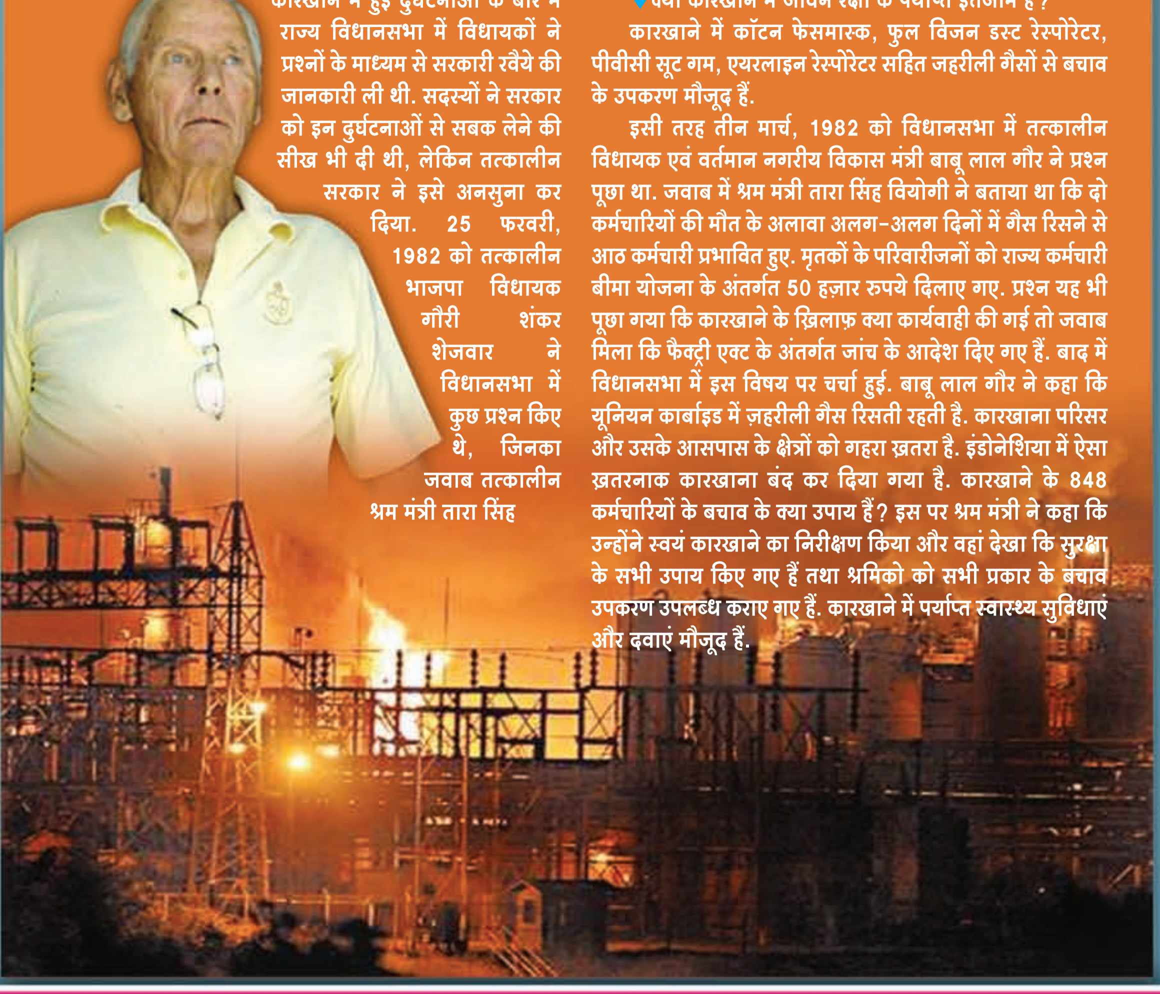

यूनियन कार्बाइड के भोपाल कारखाने में घातक एवं ज़हरीले रसायनों का उपयोग और बड़ी मात्रा में ज़हरीली गैसों का भंडारण किया जाता था, लेकिन भंडारण और औद्योगिक उपयोग में सुरक्षा संबंधी खामियां थीं. इस कारण 1984 से पहले भी छोटी-मोटी दुर्घटनाएं हुईं और उनकी जानकारी राज्य सरकार को भी थी. लेकिन सरकार ने उन्हें गंभीरता से नहीं लिया. भोपाल कारखाने में हुई दुर्घटनाओं के बारे में राज्य विधानसभा में विधायकों ने प्रश्नों के माध्यम से सरकारी रवैये की जानकारी ली थी. सदस्यों ने सरकार को इन दुर्घटनाओं से सबक लेने की सीख भी दी थी, लेकिन तत्कालीन सरकार ने इसे अनसुना कर दिया. 25 फरवरी, 1982 को तत्कालीन भाजपा विधायक गौरी शंकर शेजवार ने विधानसभा में कुछ प्रश्न किए थे, जिनका जवाब तत्कालीन श्रम मंत्री तारा सिंह वियोगी ने दिया था. प्रश्नोत्तर इस प्रकार है:-

- क्या यह सही है कि यूनियन कार्बाइड कारखाने से ज़हरीली गैस रिसने से अब तक दो लोगों की मौत हुई है?

जी हां, 28 अक्टूबर, 1975 को कारखाने के एक फिटर और 25 दिसंबर 1981 को एक अन्य कर्मचारी अशरफ की मौत हुई थी.

- क्या ज़हरीली गैस के संपर्क में आने से उक्त मौतें हुईं?

जी हां.

- क्या कारखाने में जीवन रक्षा के पर्याप्त इंतजाम हैं?

कारखाने में कॉटन फेसमास्क, फुल विजन डस्ट रेस्पोरेटर, पीवीसी सूट गम, एयरलाइन रेस्पोरेटर सहित जहरीली गैसों से बचाव के उपकरण मौजूद हैं.

इसी तरह तीन मार्च, 1982 को विधानसभा में तत्कालीन विधायक एवं वर्तमान नगरीय विकास मंत्री बाबू लाल गौर ने प्रश्न पूछा था. जवाब में श्रम मंत्री तारा सिंह वियोगी ने बताया था कि दो कर्मचारियों की मौत के अलावा अलग-अलग दिनों में गैस रिसने से आठ कर्मचारी प्रभावित हुए. मृतकों के परिवारीजनों को राज्य कर्मचारी बीमा योजना के अंतर्गत 50 हज़ार रुपये दिलाए गए. प्रश्न यह भी पूछा गया कि कारखाने के ख़िलाफ़ क्या कार्यवाही की गई तो जवाब मिला कि फैक्ट्री एक्ट के अंतर्गत जांच के आदेश दिए गए हैं. बाद में विधानसभा में इस विषय पर चर्चा हुई. बाबू लाल गौर ने कहा कि यूनियन कार्बाइड में ज़हरीली गैस रिसती रहती है. कारखाना परिसर और उसके आसपास के क्षेत्रों को गहरा ख़तरा है. इंडोनेशिया में ऐसा ख़तरनाक कारखाना बंद कर दिया गया है. कारखाने के 848 कर्मचारियों के बचाव के क्या उपाय हैं? इस पर श्रम मंत्री ने कहा कि उन्होंने स्वयं कारखाने का निरीक्षण किया और वहां देखा कि सुरक्षा के सभी उपाय किए गए हैं तथा श्रमिको को सभी प्रकार के बचाव उपकरण उपलब्ध कराए गए हैं. कारखाने में पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाएं और दवाएं मौजूद हैं.

एसईसीएल के खदानों से उड़ने वाले कोयले का चूरा खेतों को बर्बाद करता है, मजाल है कि कभी प्रबंधन को इसके कारण कोई परेशानी हुई हो.काग़ज़ों में लाखों पौधे अभी तक लगाए जा चुके हैं.

चौथी दुनिया

बच्चे के पिता ने घटना की तत्काल रिपोर्ट प्रशासन को सौंप दी. और परिजनों ने ज़िला अस्पताल में हंगामा खड़ा कर दिया.

सार-संक्षेप

गृहयुद्ध का रूप है नक्सलवाद

पुरी पीठ के शंकराचार्य जगतगुरू निश्चलानंद सरस्वती देश में बढ़ते नक्सलवादी प्रभाव और आतंक को भारत में गृहयुद्ध का एक रूप मानते हैं. इनका कहना है कि नेपाल की तरह ही हिन्दू बहुल भारत राष्ट्र की एकता अखंडता और सुरक्षा को विदेशी षड़यंत्रकारी नष्ट करना चाहते हैं और इसके लिए वह नक्सलवादियों को खुला प्रोत्साहन देने के साथ हर तरह की मदद भी कर रहे हैं. स्वामी निश्चलानंद सरस्वती ने हाल में भोपाल प्रवास के दौरान धार्मिक आध्यात्मिक प्रवचनों के साथ ही राष्ट्रीय समस्याओं के बारे में भी खुलकर अपने विचार व्यक्त किए. नक्सलवाद की चुनौती पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि नेपाल में माओवादी संगठनों द्वारा जिस प्रकार से सत्ता हथियाने के लिए हिंसा, आतंक और उत्पात मचाया, उससे प्रेरणा लेकर अब ये माओवादी भारत के नक्सलवादियों को देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था को नष्ट करने में लगे हुए हैं. उन्होंने कहा कि वैसे भी हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था और राजनीतिक संस्कृति में अनेक प्रकार की ख़ामियां और बुराईयां आ चुकी हैं और अब तो लोकतंत्र केवल नाम को ही बचकर रह गया है. देश में 50 प्रतिशत से भी कम मतदाता अपने मताधिकार का उपयोग करते हैं यह लोकतंत्र का उपहास है. स्वामीजी ने कहा कि आज़ादी के आंदोलन में देश की संपूर्ण जनता ने किसी प्रकार की सहयोगी भूमिका अदा की थी, लेकिन आज़ादी के बाद शासन तंत्र ने जनता का, विशेषकर हिन्दू समाज का मनोबल गिराया है. आज तो सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार और बुराईयों के कारण आम नागरिक स्वयं को असुरक्षित महसूस कर रहा है और वह सामाजिक राष्ट्रीय दायित्वों से मुंह मोड़कर अपने और अपने परिवार के स्वार्थ में बंधकर रह गया है. शंकराचार्य ने कहा कि दुनिया में मुस्लिम, क्रिश्चियन और कम्युनिस्ट तंत्र हावी हैं. इन तीनों तंत्र में कई अच्छे व्यक्ति भी हैं, लेकिन इनका नेतृत्व अराजक और सत्ता लोलुप व्यक्तियों के हाथों में है. उन्होंने कहा कि दुनिया में चौथा तंत्र-हिन्दूतंत्र है, लेकिन यह सबसे दुर्बल विचारधारा का तंत्र है. आज जो राजनीतिक दल नक्सलवाद को देश के लिए ख़तरा बता रहे हैं वे ही उसे बढ़ावा दे रहे हैं. उन्होंने कहा कि नक्सलवादी स्वदेशी संगठन नहीं है. उनके नाम पर विदेशी ताक़तें भारत में अपने पांव जमा रही हैं. इसलिए इनसे सावधान रहने की ज़रूरत है. [illegible] पूछे जाने पर शंकराचार्य ने कहा [illegible] यदि आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत और भाजपा के नेतागण उत्तराखंड के मुख्यमंत्री से गंगा पर बनाई जा रही जल, सिंचाई और बिजली की परियोजनाओं को रद्द करा सकें, तो गंगा नदी और हिमालय की रक्षा हो सकती है.

आदिवासी लड़कियों को गोवा ले जाने वाले बंदी

मध्य प्रदेश के आदिवासी इलाकों से रोज़गार दिलाने और बेहतर ज़िंदगी के सपने दिखाकर चालाक अपराधी गिरोह युवक-युवतियों को दूसरे राज्यों में ले जाते हैं और उनका दैहिक-मानसिक शोषण करते हैं. हाल ही मंडला ज़िले के बिछिया थाना क्षेत्र से कुछ आदिवासी लड़कियों को बहला-फुसलाकर गोवा ले जा रहे पांच अपराधियों को पुलिस ने गिरफ़्तार करने में सफलता पाई है. मंडला पुलिस सूत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार बिछिया थाना क्षेत्र में पुलिस ने किशोरवय की दस आदिवासी लड़कियों के साथ चार महिलाओं और एक पुरुष को आदिवासी नाबालिग लड़कियों को काम दिलाने के बहाने गोवा ले जाने के आरोप में रविवार को गिरफ़्तार किया. मंडला ज़िले के [illegible] गांव के निवासी एक व्यक्ति [illegible] ने शिकायत दर्ज कराई थी कि उसकी नाबालिग पुत्री को कोई महिला बहलाकर ले गई है. पुलिस जांच में पता चला कि ऐसी दस आदिवासी लड़कियों को लेकर [illegible] अपने एक पुरुष सहयोगी [illegible] के साथ गोवा ले जा रही हैं आरोपियों ने पुलिस को बताया कि गोवा में रहने वाली एक महिला ने घरेलू काम के लिए लड़कियां लाने को कहा था [illegible]. पुलिस अधीक्षक [illegible] ने बताया कि इस मामले को आदिवासी लड़कियों की ख़रीद फ़रोख्त प्रकरण में दर्ज किया है तथा पूरे प्रकरण की गंभीरता से जांच की जा रही है.

पांच बच्चों के हत्यारे बाप को कोई पछतावा नहीं

[illegible]

रतनजोत की खेती केवल काग़ज़ों पर

मध्य प्रदेश में वैकल्पिक ऊर्जा ईंधन या बायो फ्यूल उत्पादन के लिए उजाड़ और बीहड़ वनक्षेत्रों में रतनजोत (जेट्रोफा) की खेती करने के लिए कई औद्योगिक उपक्रमों ने राज्य सरकार से बड़े-बड़े वायदे किए थे और राज्य सरकार ने उन पर भरोसा भी कर लिया था, लेकिन [illegible] किसी भी उपक्रम ने [illegible]. मध्य प्रदेश सरकार ने बायो डीज़ल उत्पादन की महत्वाकांक्षी औद्योगिक परियोजनाओं के लिए [illegible] मेमोरेंडम [illegible] जेट्रोफा [illegible] [illegible]

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

औद्योगिक विनाश की कगार पर कोरबा

सुब्रत भौमिक

लगातार गिरता भूजल स्तर, लाखों टन राख से दबी हुई धरती और दर्जन भर चिमनियों से आसमान में उड़ती धुएं की राख धरती के बंजर होते खेत-खलियान, नदियों और वातावरण में एक जहर लगातार घोलते जा रहे हैं. प्रदूषण स्तर की भयावह स्थिति से लगातार प्रभावित है कोरबा जिला, जहां औद्योगिकीकरण तेज रतार से बढ़ रहा है और ज़िंदगी अपनी आखरी सांसे गिन रही है.

केंद्र सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने कुछ महिने पहले एक आदेश जारी कर कोरबा ज़िले में नई परियोजनाओं की पर्यावरणीय स्वीकृति पर छह माह के लिए रोक लगा दी है. निश्चित तौर पर यह कदम ज़िले की बदहाल पर्यावरण व्यवस्था की किसी सूचना के कारण उठाया गया होगा. ज़िले में लगातार होते वनों के नुकसान को देखते हुए पर्यावरण मंत्रालय ने हसदेव वनक्षेत्र में खुलने वाली दस खदानों को पर्यावरण स्वीकृति देने से इंकार कर दिया. पर्यावरण संरक्षण की इन नीतियों में छिपे हित यह संदेह पैदा करते हैं कि विद्युत परियोजनाओं पर लगाई गई रोक अस्थाई है. छह माह में पर्यावरण मंत्रालय किस तस्वीर के बदलने की उम्मीद करता है. मौजूदा हालात में ज़िले के संयंत्रों से निकलने वाली राख का 40 फीसदी ही उपयोग में लिया जा रहा है, जबकि लक्ष्य 60 फीसदी का था. केंद्र सरकार ने सन 2012 तक 100 फीसदी राख की उपयोगिता सुनिश्चित करने के लिए कहा था. पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण कार्यालय के क्षेत्रीय अधिकारी औपचारिकताओं को पूरा करने की कोशिश करते हैं. प्रदूषण बोर्ड ने दर्जन भर से अधिक मामले औद्योगिक संयंत्रों के विरुद्ध दायर कर रखे हैं. जिसका कोई असर संयंत्रों पर नहीं पड़ता. क्षेत्रीय अधिकारी प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड बीएस ठाकुर के अनुसार हालात इतने संसेटिव नहीं हैं कि सब काम छोड़कर हम इस विषय पर गहरा चिंतन करने लगे. शासन ने ज़िले के 10 किलोमीटर के क्षेत्र जहां सीएसपीजीसीएल, एनटीपीसी एवं बाल्कों के पुराने संयंत्र लगे हैं, ऐसे क्षेत्र को क्लस्टर मानकर क्रिटिकल पॉल्यूटेड एरिया माना है. 10 किलोमीटर से बाहर के क्षेत्र में नए संयंत्र लगाए जा सकते हैं. वैसे भी विभाग के द्वारा एम्बीयेन्ट एयर मापा जा रहा है जो कि नीयत मानकों के तहत है. बाल्को से पिछले दो वर्षों से लगातार राख युक्त पानी का रिसाव जारी है. एनटीपीसी संयंत्र से तेल हसदेव नदी में बहता है. गुणवत्ताहीन राखड़ बांध के निर्माण के कारण ये बांध टूट जाते हैं और लाखों टन राख नदी में बह जाती है. एसईसीएल के खदानों से उड़ने वाले कोयले का चूरा खेतों को बर्बाद करता है, मजाल है कि कभी प्रबंधन को इसके कारण कोई परेशानी हुई हो.काग़ज़ों में लाखों पौधे अभी तक लगाए जा चुके हैं. पर्यावरण संरक्षण के नाम पर चलाई गई सभी योजनाएं केंद्र और राज्य सरकार की लापरवाही के कारण सिर्फ कागजों पर सिमट चुकी है. एक ओर केंद्र सरकार नई योजनाओं के अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करने पर रोक लगाती है, दूसरी ओर प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड कोरबा ज़िले के उमरेली गांव में जैन पॉवर एनर्जी के विद्युत संयंत्र और पाली में एसईसीएल की अम्बिका परियोजना के लिए पर्यावरणीय जनसुनवाई आयोजित कराता है. ग्रामीणों के विरोध के बाद भी जनसुनवाई पूरी हो जाती है. इस तरह के सुनवाई कार्यक्रम विवाह समारोहों की तरह होते हैं, जहां आपत्तिकर्ताओं को बारातियों की तरह भोजन और बाद में हैसियत के मुताबिक़ उपहार भी दिए जाते हैं.

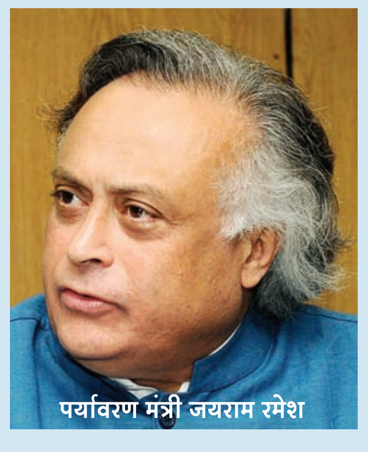

पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश

कोरबा जिला बर्बादी की कगार पर है. कोई घटना बड़ी त्रासदी का कारण बन सकती है. फिर वह चाहे एसईसीएल की खदानों में भारी विस्फोट से बनने वाली जमीन की दरार हो या भूस्खलन की घटना. केंद्र सरकार महज औपचारिकता पूरी कर रही है. वहीं राज्य सरकार विकास के नाम पर समूचे छत्तीसगढ़ को औद्योगिक घरानों की चारागाह बनाने पर आमादा है. राज्य में पर्यावरण संरक्षण के नाम पर कोई भी कदम गंभीरता के साथ नहीं उठाया जा रहा. यह साधारण व्यक्ति के लिए चिंता का विषय है.

feedback@chauthiduniya.com

छत्तीसगढ़ में बन रहा है नया जाटलैंड

बाहर से आए हुए लोगों का कहना है कि वे यहां खेती का भला करने आए हैं, लेकिन राज्य के किसानों की छिनती ज़मीनों के कारण सरकार में स्वयं मतभेद हो गए हैं. कृषि मंत्री हरियाणा के लोगों का आना ग़लत मानते हैं, उनके अनुसार इससे छत्तीसगढ़ का ग्रामीण चरित्र बदल जाएगा. वर्ष 2000 में राज्य बनने के बाद 18 ज़िलों में से दस ज़िलों में बड़े पैमाने पर ज़मीनों की ख़रीद की गई है.

शिवा कुमार

देश में संभवत: यह पहली बार हो रहा है कि किसी राज्य में दूसरे राज्य के लोग बलपूर्वक कृषि भूमि को बड़े पैमाने पर हथियाने के प्रयास में सफल हो रहे हों. जी हां, छत्तीसगढ़ में एक जाटलैंड प्रभाव में आने के लिए तैयार है. हरियाणवी किसानों का एक बड़ा समूह महानदी एवं अन्य छोटी नदियों के किनारे बड़े पैमाने पर बलपूर्वक ज़मीनें ख़रीददता जा रहा है. इस तरह से छत्तीसगढ़ में ही एक नए प्रदेश का जन्म होने जा रहा है. छत्तीसगढ़ के दुर्ग ज़िले में अधिकांश उपजाऊ ज़मीन नए लोगों ने ख़रीद ली हैं. यह ज़िला हरियाणवी किसानों के नए जाटलैंड का केंद्र बन रहा है. ढाई हज़ार किलोमीटर दूर से छत्तीसगढ़ तक आए हरियाणा के किसान महानदी, शिवनाथ, जोंक, खारून और अन्य छोटी नदियों के किनारे दोमट और काली मिट्टी वाली ज़मीने ख़रीदने में लगे हुए हैं. कई किसान बेनामी ज़मीनों पर इन दिनों खेती के कार्यों में जुट गए हैं. छत्तीसगढ़ के दुर्ग ज़िले के चोरभट्टी गांव में श्रीमती मीना सतनामी का 6 एकड़ का खेत है. जिसे अभी भी स्थानीय लोग जोतते हैं, इसमें से अधिकांश सतनामी दलित हैं. ज़मीन से लगी हुई तीन बड़ी ज़मीनें पांच साल पहले हरियाणा के किसानों ने ख़रीद ली हैं. चारों तरफ से घिर चुकी मीना का कहना है कि उस पर ज़मीन बेचने का दबाव है. उसके पति रामलाल सतनामी का शव तीन साल पहले खेत के बाईं ओर पड़ा पाया गया, जिसे मीना हत्या मानती है, पुलिस की जांच अभी तक जारी है.

बाहर से आए हुए लोगों का कहना है कि वे यहां खेती का भला करने आए हैं, लेकिन राज्य के किसानों की छिनती ज़मीनों के कारण सरकार में स्वयं मतभेद हो गए हैं. कृषि मंत्री हरियाणा के लोगों का आना ग़लत मानते हैं, उनके अनुसार इससे छत्तीसगढ़ का ग्रामीण चरित्र बदल जाएगा. वर्ष 2000 में राज्य बनने के बाद 18 ज़िलों में से दस ज़िलों में बड़े पैमाने पर ज़मीनों की ख़रीद की गई है. आठ ज़िले जिनमें बस्तर के वे क्षेत्र शामिल हैं जो अधिकांशत: आदिवासी इलाकों के हैं और जहां ग़ैर आदिवासियों द्वारा ज़मीन नहीं खरीदी जा सकती, इस जंजाल से मुक्त हैं. एक और बड़ा कारण यह भी है कि इन आठ ज़िलों में से कई नक्सल प्रभावित हैं.

छत्तीसगढ़ में हरियाणा और पश्चिम उत्तर प्रदेश के कई प्रभावशाली जाट नेता भी भू-हदबंदी क़ानून का मजाक उड़ाकर बड़े पैमाने पर ज़मीन ख़रीद रहे हैं. राष्ट्रीय लोकदल के चौधरी अजीत सिंह दुर्ग ज़िले के बेरला ब्लॉक के बासागांव में 115 एकड़ सिंचित ज़मीन के मालिक हैं, जबकि राज्य का क़ानून सिंचित जमीन की सीमा पांच लोगों के परिवार के लिए 36 एकड़ और असिंचित ज़मीन की सीमा 56 एकड़ तय करता है. अजीत सिंह यहां रहते नहीं, पर सोनीपत निवासी सूरतसिंह ने यहां चौधरी फर्म का बोर्ड लगा रखा है सूरतसिंह के लड़के सोनू के अनुसार अजीत सिंह ने यह फर्म छह लाख 50 हज़ार रुपए पर किराये में दिया है, सोनू के अनुसार अजीत सिंह ने 2005 में इसे ख़रीदा है. हरियाणा से आए हुए लोग अपने राज्य में महंगी ज़मीने बेचकर पहले छत्तीसगढ़ में या तो किराए पर ज़मीन लेते हैं या मामूली दामों पर उन्हें खरीद लेते हैं, इससे उनकी ज़मीनों का आकार बढ़ जाता हैं. उदाहरण के तौर सूरत सिंह छह साल पहले अपने परिवार के साथ पलायन कर इस राज्य में आए थे, उन्होंने 200 एकड़ ज़मीन खेती के लिए किराए पर ली थी. उनका परिवार अभी भी इसी ज़मीन पर काम करता है, लेकिन सूरत सिंह ने सोनीपत की डेढ़ एकड़ ज़मीन बेचकर चौधरी फर्म के पास ही 16 एकड़ ज़मीन ख़रीद ली है.

अमर अग्रवाल

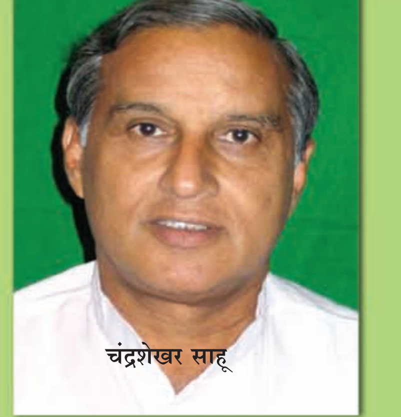

चंद्रशेखर साहू

विश्वसनीय सूत्रों के अनुसार पूर्व भाजपा अध्यक्ष लखीराम अग्रवाल भी हरियाणा से ही आए थे. वर्तमान में उनके लड़के अमर अग्रवाल की हज़ारों एकड़ जमीन इस राज्य में है. अमर छत्तीसगढ़ के राजस्व मंत्री हैं, उन्हीं के कार्यकाल के दौरान छत्तीसगढ़ में हरियाणवी किसानों के आने की तादाद बढ़ी है. इस क्षेत्र में इन किसानों के कारण कई तनाव पूर्ण घटनाएं भी हुईं. दुर्ग के बेमेतरा ब्लॉक के भुड़की गांव में 10 सितंबर 2005 को एक खूनी संघर्ष हुआ था, जिसमें कार्तिक सतनामी और उसके बड़े लड़के पुनीत को हरियाणा के कुछ ताकतवर लोगों ने मार दिया था. कार्तिक के छोटे बेटे रमेश के अनुसार उसके पिता ने तीन एकड़ ज़मीन बेचने से मना कर दिया था. इस इलाके में खाली पड़ी हुई 200 एकड़ ज़मीन को कोई हाथ लगाने की हिम्मत नहीं करता कहा जाता है कि यह ज़मीन मुख्यमंत्री रमनसिंह के रिश्तेदार की है. तीन साल पहले झिलका गांव में काबाझी गांव हरियाणा के महावीर और तेजसिंह ने 100 एकड़ ज़मीन ख़रीदी थी. बाद में वह इस ज़मीन पर ही मरे हुए पाए गए. हाल ही मोहंदा गांव में ज़मीन बेचने वाले तीन लोगों ने छह अन्य लोगों के साथ मिलकर एक 90 एकड़ का प्लांट बनाया और नाम गोंड से बदलकर गोस्वामी कर लिए. इसी ज़मीन रिकार्ड में तीन आदिवासी गंगाबाई, कुंजराम और रामलाल गोस्वामी कागजों में ब्राम्हण बन गए, नाम बदलने के कारण इनके समुदाय ने इन पर दंड भी लगाया. हर सीजन में इस क्षेत्र में पंजाब और हरियाणा से हारवेस्टर लाए जाते हैं. स्थानीय किसान कभी खेती के लिए भूमिगत जल का उपयोग नहीं करता, जबकि कर्मवीर जैसे शीलघाट गांव में बसे हुए हरियाणवी भूजल से ही अपनी पैदावार बढ़ाते हैं. राज्य की कैबिनेट इस मसले पर आपस में विभाजित है कि राज्य में विकास हो रहा है या कृषि भूमि हड़पी जा रही है. मंत्री चंद्रशेखर के क्षेत्र के अभलपुर में हरियाणवी लोगों को निकाल भगाने के पक्ष में जनमानस तैयार हो चुका है. इस संदर्भ में अगले विधानसभा सत्र में एक विधेयक लाने की तैयारी भी हो रही है जिसमें छत्तीसगढ़ के बाहर के लोगों को राज्य में ज़मीन ख़रीदने से रोका जा सकेगा. इसके साथ ही कृषि भूमि को ग़ैर कृषि उपयोग में बदलने से भी रोकने का प्रावधान किया जाएगा.

कुछ भी हो वर्तमान में छत्तीसगढ़ जाटलैंड में परिवर्तित होता जा रहा है यदि जल्दी ही कुछ नहीं किया गया तो छत्तीसगढ़ राज्य छत्तीसगढ़ियों के हाथ से निकल जाएगा.

feedback@chauthiduniya.com

गोंडवाना राज्य की मांग फिर बुलंद

अरविंद नैताम

संध्या पाण्डे

पृथक गोंडवाना राज्य के गठन की मांग एक बार फिर बुलंद हुई है. हाल ही भोपाल में गोंडवाना गणतंत्र पार्टी के संस्थापक, अध्यक्ष हीरासिंह मरकाम ने अपनी पार्टी के कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों की एक सभा में इस मांग को उठाते हुए एलान किया कि इस वर्ष एक नवंबर से पंचायत स्तर तक पृथक राज्य निर्माण की मांग के समर्थन में जनमत तैयार करने का अभियान चलाया जाएगा. विशेषकर वनक्षेत्रों में बसे आदिवासियों और वनवासियों को इस अभियान से जोड़ा जाएगा. हीरा सिंह मरकाम ने दो दशक पूर्व गोंडवाना गणतंत्र पार्टी का गठन किया था. उनकी कोशिश थी कि झारखंड मुक्ति मोर्चा और अन्य राज्यों में आदिवासियों के बीच सक्रिय राजनीतिक, सामाजिक संगठन एकजुट होकर इस पार्टी के झंडेतले आ जाए, ताकि यह संगठन राष्ट्रीय राजनीति में अपनी ताकत का प्रदर्शन करने की स्थिति में आ सकें, लेकिन राजनीति के महंतों ने आदिवासियों के वोट बैंक का अपने हित में उपयोग करने के लिए इस पार्टी को ज्यादा ताकतवर नहीं बनने दिया. पिछले तीन चुनाव में इस पार्टी ने मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में अपने उम्मीदवार खड़े किए, लेकिन उसे अपेक्षित सफलता नहीं मिली. बाद में यह पार्टी नेताओं की सत्तालिप्सा और आपसी खींचतान के कारण टूट फूट गई और पिछले विधानसभा चुनाव में इस पार्टी को एक स्थान पर भी सफलता नहीं मिली. इस पार्टी के कई प्रतिभावान कार्यकर्ता कांग्रेस में चले गए या फिर भाजपा में. लेकिन अभी भी आदिवासियों, विशेषकर राजगोंड और गोंड आदिवासियों में इस पार्टी का भावनात्मक महत्व बना हुआ है. शिक्षा के प्रसार और राजनीतिक दलों के प्रचार-प्रसार से अब आदिवासी भी राजनैतिक रूप से काफी जागृत होते जा रहे हैं. वे शासन-प्रशासन की अनुचित गतिविधियों और जनविरोधी नीतियों के खिलाफ स्वस्फूर्त आवाज उठाने लगे हैं. इसके साथ ही अपने हितों और अधिकारों के प्रति भी जागरुक हो गए हैं, लेकिन इसका लाभ कुछ जनसंगठनों और एनजीओ ने अपने जनाधार को मजबूत बनाने के लिए उठाया है और कहीं-कहीं तो नक्सली संगठन भी आदिवासियों में गहराई तक पैठ बनाने में सफल रहे हैं. मध्य प्रदेश के मंडला, बालाघाट, डिंडौरी, उमरिया, अनूपपुर, सिंगरौली जिलों में नक्सली विचारधारा का प्रचार-प्रसार हुआ है. वनाधिकार मान्यता कानून को लेकर भी कुछ जनसंगठनों ने आदिवासियों को वनों पर उनके अधिकार और वनभूमि पर उनके परंपरागत अधिकार के बारे में जागृत कर उन्हें संघर्ष की प्रेरणा दी है. इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर ही हीरासिंह मरकाम ने एक बार फिर अपनी पार्टी को मजबूती से खड़ा करने की योजना बनाई है. हाल ही भोपाल में आयोजित आम सभा और इसके बाद पार्टी कार्यकर्ताओं की बैठक में हीरासिंह मरकाम ने आदिवासियों को उनके अतीत के गौरव और वैभवशाली साम्राज्यों के इतिहास की सविस्तार जानकारी देते हुए कहा कि मुगलों के आगमन से पहले तक भारत के मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में कई स्वतंत्र और संपन्न गोंड राजाओं के साम्राज्य थे. इन राजाओं ने अपनी स्वतंत्रता के लिए ताकतवर सम्राटों और नरेशों से युद्ध किए और सफलता भी पाई. मुगलकाल में भी गोंडवाना की महारानी दुर्गावती ने अपने साम्राज्य की रक्षा के लिए युद्ध करते हुए प्राणों की बलि दी थी. मरकाम ने कहा कि ब्रिटिश सरकार में आदिवासियों को कमजोर करने के लिए राज्यों के विभाजन और प्रशासनिक इकाई के पुनर्गठन की जो प्रक्रिया हुई, उसमें आदिवासियों का महत्व जानबूझकर कम किया गया और उन्हें शिक्षा तथा विकास की प्रक्रिया से दूर रखा गया. आजादी के बाद हमारी सरकार ने भी आदिवासियों को विकास की यात्रा में अन्य समुदायों के समान सहभागी नहीं बनने दिया. आज भी देश के आदिवासी आर्थिक-सामाजिक रूप से पिछड़े और शोषित ही हैं. मरकाम के मुताबिक ने लोकतंत्र में देश के हर वर्ग और हर समुदाय को हिस्सेदारी और भागीदारी मिलनी चाहिए, लेकिन देश के आदिवासी आज भी राजनैतिक दलों द्वारा केवल वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल किए जा रहे हैं. उन्होंने आदिवासियों को अपना पृथक राज्य की मांग के समर्थन में एकजुट होने की सलाह दी. छत्तीसगढ़ में नक्सली गतिविधियों और आदिवासियों में असंतोष को लेकर कांग्रेस ने भी पूर्व मुख्यमंत्री अजीत जोगी की अध्यक्षता में एक विचार मंथन सभा का आयोजन किया. इस सभा में पूर्व केंद्रीय मंत्री अरविंद नेताम ने साफ कहा कि आज आदिवासियों को शासन-प्रशासन पर भरोसा नहीं रह गया है. साधारण कोटवार, पटवारी, पुलिस के सिपाही या वन विभाग के फॉरेस्टर से लेकर जिले के कलेक्टर, पुलिस अधीक्षक या प्रशासन के सचिव और संचालक किसी भी अधिकारी, कर्मचारी पर अब आदिवासी भरोसा नहीं करते हैं, इसीलिए वे उन्हें किसी प्रकार का सहयोग देने को तैयार नहीं हैं. नेताम ने छत्तीसगढ़ में बढ़ती नक्सल गतिविधियों पर चिंता जताई और कहा कि लोकतांत्रिक सभ्य समाज में हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है. फिर भी उन्होंने कहा कि इस बात पर गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए कि आज आदिवासी और वनक्षेत्रों में सरकार को स्थानीय जनता का समर्थन क्यों नहीं मिल रहा है और नक्सली किस तरह जनसमर्थन जुटा लेते हैं.जानकारों का मानना हैं कि यदि मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में सरकारें ईमानदारी से वनाधिकार मान्यता कानून को लागू करती हैं और इस कानून की भावना के अनुसार सचमुच आदिवासियों को वनों पर अधिकार मिल जाते हैं और उनकी कब्जे वाली भूमि पर उन्हें स्थाई पट्टे मिल जाते हैं तो आदिवासी समुदाय का सरकार और व्यवस्था पर विश्वास कायम किया जा सकता है. आज वनों में वन माफिया, वन्य प्राणियों के शिकारी, शहरी अपराधी तत्वों की जमकर पैठ बनी हुई है और वन विभाग का कमजोर अमला भय या आतंक के कारण या फिर अपनी लालची प्रवृत्ति के कारण इन तत्वों की सहायता करता है. विकास और जनकल्याण के नाम पर भारत सरकार और राज्य की सरकार वनक्षेत्रों और आदिवासी समुदायों के बीच हर साल करोड़ों खर्च करती है, लेकिन ज्यादातर सरकारी पैसा ऊपर से नीचे तक फैले सरकारी तंत्र के भ्रष्टाचार के कारण वास्तविक हितग्राहियों तक नहीं पहुंच पाता है और यही कारण है कि आजादी के बाद योजनागत विकास के पांच दशकों बाद भी शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली, सड़क, संचार सुविधा आदि क्षेत्रों में आदिवासी इलाके और आदिवासी समुदाय देश के अन्य इलाकों और समुदायों की तुलना में काफी पिछड़े हुए हैं. आज का आदिवासी युवक चुपचाप सब देख रहा है. गोंडवाना गणतंत्र पार्टी इस युवक को आवाज देना चाहती है और अपने से जोड़कर एक सचेतन राजनीतिक कार्यकर्ता बनाना चाहती है. आदिवासी समुदाय में आई चेतना के कुछ नतीजे सरकार के लिए परेशानी का सबब बने हुए हैं. विकास और औद्योगिक परियोजनाओं के लिए कृषि या आवासीय क्षेत्र खाली कराने की सरकारी मुहिम के खिलाफ आदिवासी खड़े हो गए हैं और डटकर सरकार का प्रतिरोध कर रहे हैं. सिंगरौली में अंबानी का पॉवर प्लांट हो या नरसिंहपुर जिले में सरकार का पॉवर प्लांट हो या फिर महेश्वर बांध का जलस्तर बढ़ाने के लिए गांव को खाली कराने का मामला हो, आदिवासी डटकर विरोध कर रहे हैं. जहां वह उचित पुनर्वास पाकर अपनी भूमि छोड़ने पर राजी हो रहे हैं, वहां मुआवजा भी बाजार मूल्य के अनुरूप ही वसूल रहे हैं. कटनी जिले में एसीसी सीमेन्ट कारखाने के लिए सरकार ने आदिवासी बहुल ग्राम मेहगांव लीज पर दे दिया है. अब इस कारखाने के प्रबंधक आदिवासियों को उजाड़कर गांव की भूमि अपने कब्जे में लेने के लिए छल-बल कपट का सहारा ले रहे हैं, लेकिन आदिवासी इसका विरोध भी कर रहे हैं.

हमारी सरकार ने भी आदिवासियों को विकास की यात्रा में अन्य समुदायों के समान सहभागी नहीं बनने दिया. आज भी देश के आदिवासी आर्थिक-सामाजिक रूप से पिछड़े और शोषित ही हैं.

मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के आदिवासी क्षेत्रों से सस्ते श्रम के लिए आदिवासी युवक-युवतियों की अवैध और अनैतिक मानव तस्करी का धंधा भी चल रहा है. आदिवासी किशोरियों और युवतियों को रोजगारा लालच देकर महानगरों में ले जाया जाता है और वहां उन्हें घरेलू कामगार के रूप में काम दिलाने के बहाने बेच दिया जाता है. इतना ही नहीं, देह व्यापार में भी आदिवासी बालाओं को धकेला जा रहा है. अक्सर ऐसे मामलों की शिकायत प्रशासन को होती है, लेकिन आज तक प्रशासन ने मानव व्यापार का धंधा करने वालों के खिलाफ कभी कोई कठोर कार्यवाही नहीं की. जब कभी ऐसे मामलों में शोर मचा तो, गांव, कस्बों में सक्रिय छोटे-छोटे दलालों को पकड़ लिया जाता है, लेकिन मानव तस्करी के असली गिरोहबाजों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है. इससे भी आदिवासियों में असंतोष फैल रहा है.

feedback@chauthiduniya.com

सत्तर फीट के सफ़र में नवजात का लिंग बदला

पुष्पेन्द मोर्या

सरकारी अस्पतालों में नवजात बच्चों को बदलने का मुद्दा गंभीर रूप लेता जा रहा है. शहर के ज़िला अस्पताल के अंदर ही केवल 70 फिट की दूरी तय करते-करते एक नवजात को बदल दिया गया. प्रशासन पूरे मामले की जांच की बात कह रहा है, परंतु इस आरोप को साधारण तरीके से नही लिया जा सकता है.

मेटरनिटी वार्ड और एस.सी.एन.यू के मध्य 70 फिट की दूरी को तय करते हुए सीमा वर्मा नामक एक महिला का बच्चा 8 जून की दोपहर 1 बजे बदल गया. प्राप्त जानकारी के अनुसार परिजनों के हंगामा करने पर अस्पताल प्रशासन ने मामले की छानबीन प्रारंभ कर दी है. बताया जाता है कि 20 वर्षीय सीमा वर्मा को ज़िला अस्पताल में प्रसव पीड़ा के कारण भर्ती किया गया था. 8 जून को सीमा ने रात 9:15 बजे एक शिशु को जन्म दिया. मेटरनिटी वार्ड के रिकॉर्ड के मुताबिक़ सीमा ने लड़के को जन्म दिया था. प्रसव के बाद मां की हालत सामान्य और बच्चे को बीमार बताया गया था. स्थितियों को देखते हुए शिशु को विशेष चिकित्सा इकाई में भर्ती किया गया. बच्चे के पिता नरेंद्र वर्मा के अनुसार 11 जून को उन्हें बिरला अस्पताल ले जाने की सलाह दी गई. बच्चे को लपेटकर मां-बाप के हवाले कर दिया गया. बिरला अस्पताल में जब बच्चे को कपड़े से बाहर निकाला गया तो उसमें लड़की पाई गया। यह देखकर बच्चे के पिता के होश उड़ गए. उन्होंने इस घटना की तत्काल रिपोर्ट प्रशासन को सौंप दी. और परिजनों ने ज़िला अस्पताल में हंगामा खड़ा कर दिया.

अस्पताल के बाहर हंगामा करते और एंट्री फार्म दिखाते परिजन

अस्पताल के सिविल सर्जन डॉ. प्रमोद पाठक ने दो सदस्य जांच टीम का गठन कर मामले की जांच प्रारंभ करा दी है. अस्पताल प्रशासन के अनुसार मेटरनिटी वार्ड में की गई ग़लत एन्ट्री इस घटना का एक कारण हो सकती है. पर मामले की गंभीरता को इतनी आसानी से नकारा नहीं जा सकता. प्रसूता के परिजनों को आशंका है कि अस्पताल प्रबंधन दस्तावेजों में हेराफेरी कर सकता है. मेटरनिटी वार्ड में दर्ज किए गए लड़के को एस.सी.एन.यू. में भर्ती करते वक़्त लड़की बताया गया है. मध्य प्रदेश के ज़िला चिकित्सालयों इस तरह की घटनाएं आम होती जा रही हैं. सरकारी लापरवाही के चलते जन स्वास्थ्य और जन सुरक्षा के लिए बनाए गए यह अस्पताल आम आदमी के लिए संकट का कारण बनते जा रहे हैं.

feedback@chauthiduniya.com

सार-संक्षेप

नौ लाख यूनिट बिजली की प्रतिदिन चोरी

मध्य प्रदेश विद्युत मंडल के मुख्यालय जबलपुर नगर में ही प्रतिदिन लगभग नौ लाख यूनिट बिजली की या तो चोरी होती है या बर्बादी हो जाती है. अधिकृत सूत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार जबलपुर शहर में बिजली की मांग प्रतिदिन बढ़ती रहती है और विद्युत वितरण कंपनी पर बिजली आपूर्ति का दबाव बना रहता है. गर्मी के इस मौसम में शहर में बिजली की मांग प्रतिदिन 28 से 30 लाख यूनिट की रहती है, लेकिन बिजली उत्पादन में कमी के कारण इस मांग के मुक़ाबले छह से आठ लाख यूनिट कम बिजली की आपूर्ति की जाती है, लेकिन बिजली विभाग का मानना है कि शहर में पर्याप्त बिजली की आपूर्ति न होने का एक मुख्य कारण बिजली की चोरी और बर्बादी होना है. बिजली विभाग भी इसे पारेषण क्षय या लाइन लॉस का नाम देकर अपने हिसाब में दर्ज करता है. जिसके अनुसार प्रतिदिन चालीस प्रतिशत बिजली डूबंत खाते में चली जाती है. जबलपुर शहर में विद्युत वितरण व्यवस्था 90 फीडरों के माध्यम से की जा रही है और हर फीडर में होने वाला लाइन लॉस उस रिहायसी इलाके में बसने वाले लोगों की सोच को दर्शाता है. ऐसे ही 54 फीडरों को लाइन लॉस के आधार पर अलग-अलग पैमाने में रखा गया है, जिसमें बिजली चोरी को विद्युत कटौती से बैलेंस की कोशिशें की जा रही हैं. विद्युत विभाग के शहर में स्थापित सेटअप में भी विसंगतियां मौजूद हैं, जिससे होने वाले विद्युत क्षय को कम किया जा सकता है, लेकिन ट्रांसफार्मर से जारी रहने वाली आपूर्ति में कहीं उसके नीचे लगे यूज बॉक्स का खुला रहना व उनमें मोटे तार के यूज डालने से आम आदमी की पहुंच में रहने का ख़तरा बना है, न लाइन लॉस से जाया होने वाली बिजली की मात्रा को रोकने में कारगर प्रणाली सामने आ सकी है.

भुखमरी से पीड़ित मां ने बेटियों को अनाथालय भेजा

मध्य प्रदेश सरकार और भारत सरकार ने ग़रीबी और भुखमरी की समस्याओं से मुक्ति दिलाने के लिए गांव और शहरों में अनेक कल्याणकारी और राहतकारी कार्यक्रमों को शुरू किया है, लेकिन ज़मीनी सच यह है कि यह कार्यक्रम भली प्रकार नहीं चल रहे हैं, इसीलिए ग़रीबी और भुखमरी की मार झेल रही माता को अपनी ममता की बलि देकर अपनी बेटियों को अनाथालय भेजना पड़ा. यह मामला छतरपुर ज़िले के निवाड़ी गांव का है. निवाड़ी में रचना रैकवार के पति महेश की 12 दिसम्बर 2009 को अचानक मौत हो गई थी. विधवा रचना को उसकी ससुराल वालों ने ठुकरा दिया तब उसने तीन बेटियों का लालन-पालन करने के लिए उसने संपन्न लोगों के घरों में झाड़ू-पोछा लगाने और बर्तन माजने का काम किया, लेकिन यह काम उसे लगातार नहीं मिलता था और कई-कई दिनों तक बेरोज़गार रहने के कारण वह अपना और बेटियों का पेट भरने के लिए पर्याप्त अनाज भी नहीं जुटा पाती थी. बताते हैं कि एक सप्ताह से ज़्यादा समय से रचना अपनी तीन बेटियों आठ वर्षीय मोहनी, छह वर्षीय अंजली और चार वर्षीय लल्ली के लिए दो वक़्त का भोजन नहीं जुटा पाई थी. इस कारण भुखमरी से परेशान बच्चियां बीमार रहने लगीं. तब एक दिन उसने अपनी दो बेटियों मोहनी और अंजली को छतरपुर के संवेदना अनाथाश्रम में भर्ती करा दिया. इस आश्रम के सचिव प्रतीक खरे ने बताया कि दोनों बच्चियों के लालन-पालन और उनकी शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था आश्रम प्रबंधन समिति करेगी. प्रतीक खरे के इस वायदे से रचना संतुष्ट हो गई है और अब वह अपनी दो बेटियों के लालन-पालन के भार से मुक्त हो गई है. रचना रैकवार का कहना है कि पति की मौत के बाद उसने सरकार द्वारा दी जाने वाली विधवा पेंशन के लिए आवेदन दिए थे, लेकिन सरकारी दफ्तरों में जगह-जगह बाबू उससे पैसे की मांग करते थे. उसका कहना है कि जब मेरे पास भोजन के लिए पैसे नहीं हैं तो मैं दफ्तरों में भेंट चढ़ाने के लिए पैसे कहां से ला सकती हूं. इस अतिसंवेदनशील मामले को मीडिया ने जब उजागर किया तो छतरपुर ज़िले की प्रभारी कलेक्टर भावना वालिंबे ने कहा कि ख़बर मिलते ही रचना रैकवार की पारिवारिक स्थिति का निरीक्षण करा लिया गया है और शासन स्तर पर उसको सहायता राशि मुहैया करा दी जाएगी. दूसरी ओर नौकरशाही का तर्क है कि रचना का नाम ग़रीबी रेखा की सूची में नहीं जोड़ा गया है, इसीलिए उसके पेंशन संबंधी आवेदन पत्र पर कोई कार्यवाही नहीं हो सकी है. सवाल उठता है कि शासन की ग़रीबी रेखा की परिभाषा क्या है. यदि शासन घरों में झाड़ू पोछा करके रोज़ी-रोटी कमाने वाली और दो वक़्त का भोजन जुटाने लायक कमाई न कर सकने वाली विधवा महिला को भी ग़रीबी रेखा की सूची में शामिल होने का पात्र नहीं मानता है, तो फिर उसकी ग़रीबी रेखा के मायने क्या हैं?

दिग्विजय सिंह -ओल्ड एंग्रीमैन

मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह अपनी घोषणानुसार राजनैतिक संन्यास का जीवन जी रहे हैं. फिर भी कांग्रेस नेतृत्व के आग्रह पर वह केवल पार्टी महासचिव का दायित्व पार्टी के हित में संभाले हुए हैं, लेकिन राघौगढ़ के राजा कांग्रेस महासचिव के रूप में वास्तव में ओल्ड एंग्रीमेन बने हुए हैं और वह जब तब अपनी भड़ास निकालने के लिए पार्टी और पार्टी नेताओं को मुसीबत में डाल देते हैं. अपनी टीम में गोल मारकर अपनी पीठ थपथपाने वाले दिग्विजयसिंह ने पिछले कई दिनों से कई ऐसे विवादास्पद और गंभीर बयान दिए हैं जिनसे कांग्रेस दिक्कत में आई, लेकिन उनकी सेहत पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा. दिल्ली के बटला हाउस एनकाउंटर का मामला हो या आजमगढ़ में मुस्लिम तुष्टिकरण के लिए दिया गया उनका भाषण, या फिर गृह मंत्री चिदंबरम को मुश्किल में डालने वाले नक्सली समस्या विषयक उनके मौलिक विचार हों, सभी में उन्होंने अपनी भड़ास निकालकर कांग्रेस से अलग अपनी मौलिक छवि बनाने का जो प्रयास किया, उस चतुराई को प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष समझकर भी अंजान बने हैं. हाल ही भोपाल गैस त्रासदी मामले में अदालती फ़ैसले के बाद जब पूर्व केंद्रीय मंत्री अर्जुन सिंह पर भोपाल और दिल्ली में प्रहार होने लगे और इस वीभत्स दुर्घटना के मुख्य आरोपी वारेन एंडरसन को ससम्मान भारत से भगाने के आरोप सीधे अर्जुनसिंह पर लगने लगे, तो राघौगढ़ के राजा अपने राजनैतिक गुरु चुरहट के राव साहब के बचाव में आ गए. दिग्विजय सिंह इन दिनों अमेरिका में अपनी पत्नी का इलाज कराने में व्यस्त हैं, लेकिन ऐसे संजीदा और नाजुक मौके पर भी उन्हें राजनैतिक कलाबाजी करने का समय मिल जाता है, इसलिए उन्होंने अमेरिका से बयान दिया कि केंद्र सरकार की जानकारी और सहमति के बिना राज्य सरकार ऐसा काम नहीं कर सकती थी. परोक्ष रूप से अर्जुन सिंह को बचाने के लिए दिग्विजयसिंह ने 1984 की केंद्र की कांग्रेस सरकार को भी कटघरे में लाने का प्रयास किया. अपनी बात कहकर प्रतिक्रिया जानने के इच्छुक दिग्विजय सिंह को जब पता चला कि विवाद में उनका तीर सही निशाने पर लगा और अख़बारों में वह चर्चा में आ गए हैं, लेकिन अब उन पर भी तीखे प्रहार होने लगे हैं, तो दिग्विजय सिंह ने सफ़ाई देते हुए साफ कर दिया कि उनका आशय तत्कालीन केन्द्र सरकार पर किसी प्रकार का आक्षेप लगाने का नहीं था. दिग्विजय सिंह हार में भी जीत का मज़ा लेने में माहिर हैं. वह पहले बिहार के प्रभारी थे, लेकिन वहां लोकसभा और विधानसभा चुनावों में कांग्रेस की पहले से ज़्यादा हार हुई. फिर वह उत्तर प्रदेश में सक्रिय हुए और वहां भी पार्टी पीछे की ओर चली गई, लेकिन आज भी दिग्विजय सिंह अपने प्रचार प्रबंधकों के माध्यम से अपनी छवि राहुल गांधी के प्रमुख सलाहकार के रूप में बनाए हुए हैं. उत्तर प्रदेश में छाया की तरह राहुल गांधी पर छाये रहने वाले दिग्विजय सिंह के विरोधी उन्हें डुमरिया गंज में हुए उपचुनाव में कांग्रेस के पांचवे स्थान पर आ जाने की याद दिलाते हैं, तो वे अपने ही अंदाज में हंसते-मुस्कराते इस हार का मजा लेते हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

5 जून 2010 को ग्वालियर शहर के महाराज बाड़ा क्षेत्र में 105 वर्ष पुराना विक्टोरिया मार्केट खंडर में तब्दील हो गया.

आतंक की आहट नहीं सुन पा रही पुलिस

पिछले वर्षों में सिमी और कई आतंकवादी संगठनों के व्यक्ति पकड़े गए हैं. बड़ी संख्या में पड़ोसी देशों के फोन कॉल आने की सूचना भी है. ऐसे में जबलपुर सहित इंदौर और ग्वालियर को साइबर क्राइम के लिए उपेक्षित मानना बहुत बड़ी भूल साबित हो सकती है.

आरती पटेल

साइबर क्राइम में लिप्त आपराधिक लोगों के विरुद्ध पुलिस को अपनी प्रारंभिक खोज में लगभग 3 घंटे का समय अभी भी लगता है. तब तक अपराधी 200 किलोमीटर से दूर निकल सकता है. सच यही है कि साइबर क्राइम से निपटने के लिए पुलिस के पास अभी तक कोई मज़बूत तंत्र उपलब्ध नहीं है. यहां तक कि पुलिस गाड़ियों में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को रिचार्ज करने की व्यवस्था भी कायम नहीं की गई है.

आतंकवाद से निपटने के लिए एटीएस का निर्माण तो कर दिया गया परंतु एसएमएस फोन कॉ या ई-मेल के माध्यम से मिलने वाली धमकियों, चेतावनियों को कम-से-कम समय में खोजने की कला से भी मध्य प्रदेश पुलिस काफी दूर है. अभी भी तीन घंटे में अपराधी के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकती है तब तक अपराधी पुलिस की पकड़ से 200 किलोमीटर दूर जा चुका होता है. भोपाल में साइबर सेल की चार यूनिट हैं जबकि जबलपुर, इंदौर, ग्वालियर जैसे शहरों में अभी तक साइबर सेल नहीं है. तर्क दिया जाता है कि एक यूनिट स्थापित करने में 13 करोड़ का ख़र्च होता है. जिन शहरों में साईबर सेल नहीं है, वहां साइबर क्राइम के नियंत्रण का ज़िम्मा डीएसपी क्राइम के पास दिया हुआ है, विशेषज्ञों को साइबर क्राइम का ज़िम्मा देना एक समस्या है.

जबलपुर में भारतीय सेना के लिए हथियार बनाने वाला दूसरा बड़ा प्रतिष्ठान कायम है. इस शहर में पिछले वर्षों में सिमी और कई आतंकवादी संगठनों के व्यक्ति पकड़े गए हैं. बड़ी संख्या में पड़ोसी देशों के फोन कॉल आने की सूचना भी है. ऐसे में जबलपुर सहित इंदौर और ग्वालियर को साइबर क्राइम के लिए उपेक्षित मानना बहुत बड़ी भूल साबित हो सकती है. आतंकवाद से निपटने के लिए एटीएस के आठ अधिकारी जबलपुर में हैं, जबकि विशेषज्ञ मानते हैं कि सिर्फ़ शहर में ही एटीएस के छह अधिकारी पदस्थ किये जाने चाहिए.

राज्य सरकार द्वारा सैटेलाइट किराए पर ली गई है. सैटेलाइट ट्रेकर द्वारा किसी भी फोन कंपनी की कॉल या डिटेल निकाली जा सकती है. प्रदेश पुलिस के पास और राज्य के इंटेलिजेंट विभाग के पास न तो आधुनिक हथियार हैं और न ही पर्याप्त स्टॉफ. स्वयं एटीएस स्टॉफ की कमी का सामना कर रहा है. साइबर सेल में प्रदेश के सभी ज़िलों के साइबर क्राइम का डाटा भेजा जाता है. भोपाल के पास साइबर क्राइम से निपटने के लिए विभिन्न उपकरण उपलब्ध हैं. इस काम के लिए आईटी के विशेषज्ञों की ज़रूरत होती है, जो हाई फ्रीक्वेंसी लाइन कंप्यूटर व इंटरनेट हाईजेक कर सके. इंटेलीजेंस ब्यूरों के अनुसार आईटी के विशेषज्ञ कम वेतन और सुविधाओं के कारण इस क्षेत्र में नहीं आना चाहते. साइबर क्राइम से निपटने संबधी कई कोर्स विभिन्न संस्थानों द्वारा चलाए जा रहे है. इसके अतिरिक्त साइबर कैफे में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का डाटा रखना अनिवार्य किया गया है परंतु कैफे मालिक शत् प्रतिशत यह जानकारी रखते हैं

इसमें पुलिस को भी संदेह है. पुलिस विभाग अपने क्षेत्र में स्थानीय मकान मालिकों से किराएदारों की सूची लेने को कहता है, परंतु इसका पालन किस हद तक हो रहा है इसमें संदेह है. जबलपुर शहर में पासपोर्ट कार्यालय के अनुसार 120 विदेशी नागरिक निवास कर रहे हैं. इसमें पाकिस्तान के नागरिकों की संख्या तो दर्ज है परंतु बंग्लादेश के नागरिकों की संख्या गायब है. हूजी और इंडियन मुज़ाहिदीन की सक्रियता के सूत्रधार बंग्लादेशी ही माने जाते हैं. जबलपुर प्रशासन ने वर्तमान स्थितियों में वे सभी प्रयास करने की कोशिश की है जो सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक हैं. इसके बावजूद उपलब्ध आकड़ों पर बिना छानबीन के भरोसा नहीं किया जा सकता.

जबलपुर के पूर्व एसपी मकरंत देऊस्कर और बाद में अनंत कुमार सिंह ने संदिग्ध लोगों की धरपकड़ की कवायद की थी. वर्तमान में पुलिस की गश्त और शहर के सभी सार्वजनिक स्थानों की चौकसी बड़ी हुई है. सुरक्षा संस्थानों के कारण जबलपुर अंतर्राष्ट्रीय मानचित्र में बेहद संवेदनशील है. यहां राष्ट्रीय राजमार्ग क्र. 7, मुंबई हावड़ा रेलमार्ग का स्टेशन है. यह चिंता का विषय है कि पिछले दिनों शहर में प्रतिबंधित संगठन सिमी के मुख्य खजांची की गिफ्तारी भी हुई थी. दूसरी ओर नक्सली लाल गलियारा भी जबलपुर संभाग के बालाघाट और मंडला जैसे ज़िलों से गुज़रता है. आईडीएसए के द्वारा जारी रिपोर्ट में यह कहा जा चुका है माओवादी से जुड़े नक्सली की जबलपुर में उपस्थिति से इंकार नहीं किया जा सकता. जबलपुर शहर में नक्सलवादियों की किसी कार्यवाही का प्रमाण न मिलने के कारण प्रशासनतंत्र अभी निष्क्रिय है.

प्रदेश के गृहमंत्रालय को इस बात की जानकारी है कि शहडोल से होते हुए बालाघाट मंडला तक नक्सली पहुंच रहे हैं. प्रदेश के गृहमंत्री उमाशंकर गुप्ता ने इसकी जानकारी केंद्र सरकार को भी दे दी है. मंडला में नक्सलियों के सक्रिय होने की ख़बर ख़ुफ़िया सूत्रों को मिली है. यहां से लगे कुंडम और आदिवासी इलाकों तक रेड कॉरिडोर का विस्तार किया जा रहा है. हाल ही में झारखंड और छत्तीसगढ़ में विस्फोट के लिए इस्तेमाल किए गए डिटोनेटर जबलपुर होकर ही गए थे. गृहमंत्रालय नक्सली साहित्य के मुद्रण का भी एक केंद्र जबलपुर को मानता है.

जबलपुर क्षेत्र में निवास करने वाले ग़रीब और पिछड़े वर्ग के लोगों को एक सॉफ्ट टारगेट के रूप में नक्सली और आतंकवादी कभी भी उपयोग कर सकते है. रीवा संभाग के सीधी और सिंगरौली ज़िले में एक साथ 45 नक्सलियों के घुसने की ख़बर ने प्रशासन की नींद उड़ा दी थी. वास्तविक स्थिति यह है कि गृहमंत्रालय कटनी ज़िले से लेकर जबलपुर तक नक्सलियों के कदमों की आहट को महसूस कर रहा है, फिर भी पुलिस प्रशासन लापरवाह है. कुंडम मार्ग में खमरिया पुलिस की निष्क्रियता सीहोर पनागर मार्ग, जबलपुर से नागपुर, सिवनी, अमरकंटक और कटनी जाने वाले मार्गों पर सुरक्षा के नाम पर केवल औपचारिकता आने वाले समय में एक बड़ी घटना को निमंत्रण देने के लिए पर्याप्त है.

feedback@chauthiduniya.com

ऐतिहासिक विक्टोरिया मार्केट अग्निकांड में स्वाहा

सुनीता चौहान

ग्वालियर का ऐतिहासिक विक्टोरिया मार्केट 105 वर्ष का सफ़र पूरा करने के बाद शॉर्ट सर्किट के कारण अपना अस्तित्व खो चुका है. इस बाज़ार में व्यवसाय कर रहे 116 परिवार आज रोज़ी-रोटी के लिए मोहताज है. सरकार आश्वासन देती जा रही है पर अभी तक ग्वालियर की पहचान कहे जाने विक्टोरिया बाज़ार के संरक्षण के लिए कोई ठोस कार्यक्रम नहीं बनाया जा सका है.

5 जून 2010 को ग्वालियर शहर के महाराज बाड़ा क्षेत्र में 105 वर्ष पुराना विक्टोरिया मार्केट खंडर में तब्दील हो गया. स्टेट बैंक बिल्डिंग रीगल नगर निगम कार्यालय, विक्टोरिया मार्केट ये सभी क्षेत्र मिलकर महाराज बाड़ा क्षेत्र की सुंदरता को ऐतिहासिक स्वरूप देते थे. विक्टोरिया मार्केट के ऊपर लगी घड़ी हर पल लोगों के आकर्षण का केंद्र रहती थी. 1904 में तत्कालीन महाराज ग्वालियर माधवराव प्रथम द्वारा चार वर्ष की लगातार मेहनत के बाद यह मार्केट बनवाया गया था. 1905 में महारानी विक्टोरिया जब भारत आई थी तब उनकी याद में इस बाज़ार का नाम विक्टोरिया मार्केट रखा गया था. 1956 में यह मार्केट नगर निगम के सुपुर्द कर दिया गया और 1960 में विक्टोरिया भवन के आस-पास विक्टोरिया मार्केट का विधिवत निर्माण कर 147 दुकानें व्यापारियों को आवंटित की गई. विक्टोरिया मार्केट के व्यापारी भरोसा नहीं कर पा रहे कि रात 2:10 बजे शॉर्ट सर्किट के कारण लगी आग से उनका व्यवसाय समाप्त हो चुका है. इस अग्निकांड में 25 करोड़ से अधिक का सामान जलकर खाक हो गया. आग इतनी भयानक थी कि ज़िला प्रशासन को भिंड, मुरैना, मालनपुर, बीएसएफ, सीआरपीएफ, एयरफोर्स और संभाग की सभी फायर ब्रिगेड बुलानी पड़ी. विक्टोरिया मार्केट की ऐतिहासिक विक्टोरिया बिल्डिंग इस आग में जलकर समाप्त हो गई. राज्य शासन ने विक्टोरिया मार्केट के पीड़ितों के लिए 15 लाख 74 हज़ार रुपए की आर्थिक सहायता की घोषणा की जिसे स्थानीय व्यापारियों ने नकार दिया. राज्य के गृहमंत्री उमाशंकर गुप्ता और जयंत मलैया ने पीड़ितों से चर्चा तो की है परंतु कार्यवाही अभी प्रतीक्षित है. विक्टोरिया मार्केट यूरोपियन संस्कृति का एक जीता जागता प्रमाण था. इसके चारों और बड़ी-बड़ी घड़ियां लगी हुई थीं. चारो ओर से आने-जाने का रास्ता था. मुख्य द्वार पर विशाल गेट था, जिसके ऊपर भी एक बड़ी घड़ी स्थापित की गई थी. आम ग्रामीण जन इस बाज़ार को घड़ीवाला मार्केट के नाम से जानते थे. पर आज सब राख में दफ़न है.

feedback@chauthiduniya.com